स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

अप्रैल, 2021
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

श्री कमला कान्त
श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2021 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अप्रैल, 2021 अंक - 4

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

असलम खान

(2021) 1 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website → https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

पिछले अंक के संपादकीय में हम यह जान चुके हैं कि हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 13(2) के अंतर्गत पत्नी मुख्यतः चार परिस्थितियों में अपने पति के विरुद्ध विवाह-विच्छेद की अर्जी फाइल कर सकती है । एक परिस्थिति पारस्परिक सम्मति की है जिसके आधार पर विवाह-विच्छेद किया जा सकता है । नि:संदेह प्राचीन शास्त्रीय हिंदू विधि के अंतर्गत विवाह एक ऐसा संस्कार है जो जन्म-जन्मांतर तक बना रहता है परंतु आज के युग में विवाह-विच्छेद जिसे हम आम बोली में तलाक कहते हैं, समाज की एक बड़ी आवश्यकता के रूप में उभरा है । यदि विवाह-विच्छेद का सहारा न लिया जाए तो इससे बड़े-बड़े अपराधों का जन्म हो सकता है । वर्ष 1955 में जब इस अधिनियम को संसद् द्वारा बनाया गया था तब इसमें पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद का कोई उपबंध नहीं किया गया था किंतु समाज की दशा और आवश्यकताओं को दृष्टिगत करते हुए वर्ष 1979 में इस अधिनियम में संशोधन किए जाने के उपरांत धारा 13-ख जोड़ी गई और पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद किए जाने का उपबंध किया गया । पारस्परिक सम्मति से विवाह-विच्छेद किए जाने की तीन शर्तें हैं : (i) विवाह के पक्षकार पति-पत्नी विवाह-विच्छेद की याचिका प्रस्तुत करने के पूर्व कम से कम 1 वर्ष से अलग-अलग रह रहे हों, (ii) दोनों पक्षकार पति-पत्नी की भांति जीवन बिताने पर सहमत न हों और एक-दूसरे को साहचर्य प्रदान करना न चाहते हों और (iii) दोनों पक्षकारों ने विचार-विमर्श के पश्चात् विवाह विघटित करने का निर्णय लिया है । इस धारा के अधीन दोनों पक्षकारों को संयुक्त रूप से न्यायालय में आवेदन करना होता है और न्यायालय 6 माह तक कोई कार्यवाही नहीं करता है और यदि 6 माह के बाद भी पक्षकारों के बीच कोई मेल मिलाप या समझौता नहीं होता है तब न्यायालय विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित कर देता है ।

इस अंक में विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 के अतिरिक्त अन्य ज्ञानवर्धक सामग्री भी है जिसका आप परिशीलन करें और अपने

अमूल्य सुझावों से अवगत कराएं । इस अंक में सामाजिक कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है । यह अंक विधि-विद्यार्थियों, वकीलों, न्यायाधीशों, विधि-अध्यापकों तथा विधि के ज्ञान में रुचि रखने वाले पाठकों के लिए पर्याप्त रूप से लाभकारी है ।

असलम खान
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अप्रैल, 2021

निर्णय-सूची

पृष्ठ संख्या

अपर गंगेज शुगर एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 491

इफ्तेखार शहजाद हुसैन और अन्य **बनाम** वकील अन्सारी और अन्य 533

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती सुमन देवी 487

फकीर चंद हजारी (मैसर्स) **बनाम** आयुक्त, व्यापार कर, उत्तर प्रदेश, लखनऊ 438

फॉरचून बिल्डर्स (मैसर्स) अपने भागीदारों के मार्फत **बनाम** हंसराज कामदार और अन्य 562

फ्रांसिस वडक्कल **बनाम** केरल सरकार द्वारा सचिव खाद्य और सिविल आपूर्ति विभाग, सचिवालय, तिरुवनंतपुरम और अन्य 517

बिन्दु **बनाम** कुलदीप 524

राजीव **उर्फ** राजू कुमार **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 425

वीरेन्द्र कुमार **बनाम** विजय कुमार और अन्य 449

संसद् के अधिनियम

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 1 – 27

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10)

– धारा 3 [सपठित केरल राशन आदेश, 1966 का खंड 51(8)] – याची के गोदाम का निरीक्षण – स्टॉक की मात्रा में अनियमितता – याची को वसूली का नोटिस दिया जाना – याची द्वारा यह अभिवाक् किया गया है कि स्टॉक की मात्रा का सही आंकलन बोरियों को वास्तविक रूप से तौल कर ही किया जा सकता है अन्यथा नहीं – अभिवाक् खारिज – निरीक्षण अधिकारी द्वारा याची के विक्रेता की मौजूदगी में बोरियों की गिनती करके स्टॉक की मात्रा का आंकलन करना न्यायोचित है ।

फ्रांसिस वडक्कल बनाम **केरल सरकार द्वारा सचिव खाद्य और सिविल आपूर्ति विभाग, सचिवालय, तिरुवनंतपुरम और अन्य** 517

– धारा 3 – वसूली की कार्यवाही में प्रत्यर्थी द्वारा विलंब की माफी का अभिवाक् किया जाना – गोदाम के निरीक्षण के 3 वर्ष बाद वसूली की कार्यवाही – याची का आक्षेप निरस्त किया जाना – याची द्वारा निदेशक, सिविल आपूर्ति के समक्ष फाइल की गई अपील के कारण प्रत्यर्थी द्वारा वसूली की कार्यवाही में विलंब हुआ जिसके लिए प्रत्यर्थी जिम्मेदार नहीं है और यह भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि याची को विलंब से क्या नुकसान हुआ है, अत: याची को विलंब का लाभ नहीं दिया जा सकता और उसकी याचिका मंजूर नहीं की जा सकती ।

फ्रांसिस वडक्कल बनाम **केरल सरकार द्वारा सचिव खाद्य और सिविल आपूर्ति विभाग, सचिवालय, तिरुवनंतपुरम और अन्य** 517

पृष्ठ संख्या

उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम, 1948 (1948 का 15)

– धारा 8क [सपठित केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 7] – निर्धारिती/पुनरीक्षणकर्ता द्वारा नई शाखा पर मदों का आयात किया जाना – रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन न किया जाना – आयातित माल का उल्लेख प्रमाणपत्र की सूची में न किया जाना – पुनरीक्षणकर्ता रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में किए गए संशोधनों और उसमें संलग्न मदों की सूची से पूरी तरह अवगत था और यह भी जानता था कि उसने वह माल आयात किया है जिसके संबंध में उसका आवेदन मंजूर किए जाने हेतु लंबित है, अत: यह नहीं माना जा सकता है कि उसने यह माल सद्भावपूर्ण रूप से आयात किया है, इसलिए ट्रिब्यूनल के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

फकीर चंद हजारी (मैसर्स) बनाम **आयुक्त, व्यापार कर, उत्तर प्रदेश, लखनऊ** 438

केरल राशन आदेश, 1966

– खंड 51 – याची द्वारा बाजारी दर पर राशन सामग्री के मूल्य का निर्धारण किए जाने का अभिवाक् – अभिवाक् खारिज – रियायती दर पर मूल्य की गणना का न्यायोचित पाया जाना – बिना छूट राशन सामग्री का जो मूल्य तय किया गया है उसे रियायती दर कहा गया है, अत: याची से रियायती दर पर वसूली करना न्यायोचित है ।

फ्रांसिस वडक्कल बनाम **केरल सरकार द्वारा सचिव खाद्य और सिविल आपूर्ति विभाग, सचिवालय, तिरुवनंतपुरम और अन्य** 517

पृष्ठ संख्या

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26)

– धारा 9 और 11(5) – अंतरिम अनुतोष – हकदारी – मध्यस्थ की नियुक्ति में विलंब – अपीलार्थी द्वारा बिना किसी न्यायोचित कारण के मध्यस्थ को नियुक्त किए जाने के लिए एक वर्ष से अधिक समय लगा है जिससे यह माना जा सकता है कि वह अंतरिम अनुतोष का हकदार नहीं है ।

फॉरचून बिल्डर्स (मैसर्स) अपने भागीदारों के मार्फत बनाम **हंसराज कामदार और अन्य** 562

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 147, 149 और 173 – प्रश्नगत यान द्वारा दुर्घटना – प्रश्नगत यान का उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक रीति से चलाया जाना साबित होना – यान चालन के दौरान चालक के पास वैध चालन अनुज्ञप्ति होना – दुर्घटना दावा – यान स्वामी/बीमा कंपनी का दायित्व – जहां यह साबित हो जाता है कि प्रश्नगत यान के चालक द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण दुर्घटना हुई थी और चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी और दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति स्थायी रूप से दिव्यांग हो जाता है तो यान का स्वामी/बीमा कम्पनी प्रतिकर देने के लिए दायी है ।

वीरेन्द्र कुमार बनाम **विजय कुमार और अन्य** 449

– धारा 166 – प्रश्नगत यान द्वारा दुर्घटना कारित होना – प्रश्नगत यान उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण चलाया

पृष्ठ संख्या

जाना साबित होना – उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम के अधीन यान चलाया जाना – दुर्घटना दावा – क्षतिपूर्ति का दायित्व – यदि यह साबित कर दिया जाता है कि उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम के अधिकृत चलाए जाने वाले प्रश्नगत यान के चालक द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण चलाए जाने के कारण दुर्घटना हुई है तथा दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो यान का स्वामी दायी नहीं होगा अपितु उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम दायी होगा ।

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती सुमन देवी** 487

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (1890 का 8)

– धारा 25 – बच्चे की अभिरक्षा – जैविक माता-पिता द्वारा बच्चे की अभिरक्षा का दावा – अवैध संबंधों के परिणामस्वरूप बच्चे का जन्म होना – बच्चे के जन्म के पूर्व निकाह का साबित न किया जाना – दत्तक माता-पिता द्वारा बच्चे का भरणपोषण किया जाना – बच्चे का कल्याण – दत्तक माता-पिता के साथ बच्चे का लगाव – बच्चे को जन्म के पांच दिन बाद ही दत्तक माता-पिता को दे दिया गया था जिन्होंने बच्चे का गंभीर बीमारी के दौरान भरपूर चिकित्सीय उपचार कराया है तथा साथ ही उसके स्वास्थ्य, शिक्षा, नैतिकता और मानसिक विकास पर ध्यान भी दिया है और उसे दत्तक माता-पिता के साथ मानसिक और भावनात्मक रूप से लगाव हो गया है और उसका पालन-पोषण सौहार्द वातावरण में किया जा रहा है, अत: बच्चे का दत्तक

पृष्ठ संख्या

माता-पिता की अभिरक्षा में रहना ही न्यायोचित है ।

इफ्तेखार शहजाद हुसैन और अन्य बनाम **वकील अन्सारी और अन्य** 533

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश अनुसूचित वस्तु वितरण आदेश 2016] – धारा 13(3) – सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान – उचित दर दुकान का आकस्मिक निरीक्षण किया जाना – दुकान पर कार्ड धारकों की सूची, सामान की दर सूचना पट्ट पर प्रदर्शित नहीं किया जाना – याची द्वारा अंत्योदय कार्ड धारकों को मात्रा से कम एवं अधिक मूल्य पर खाद्यान्न वितरण किए जाने का अभिकथन – याची द्वारा आदेश 2004 व अनुबंध पत्र की शर्तों का उल्लंघन किया जाना – उचित दर की दुकान का अनुबंध निरस्त किया जाना – क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक द्वारा की गई आख्या की प्रति याची को उपलब्ध नहीं कराई गई, अत: उप जिलाधिकारी द्वारा अनुबंध निरस्त करने की कार्यवाही दूषित मानी जाएगी इसलिए निरस्तीकरण का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है ।

राजीव उर्फ **राजू कुमार** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 425

– अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण अधिनियम, 1960 की धारा 10(2)] – तत्कालीन विहित प्राधिकारी द्वारा याची को सीमा आरोपण का नोटिस जारी किया जाना – इस धारा के अंतर्गत दिए गए नोटिस की आपत्ति का निस्तारण विहित प्राधिकारी द्वारा अधिनियम की धारा 12(1) के

पृष्ठ संख्या

अन्तर्गत वर्णित प्रक्रिया द्वारा किया जाएगा तथा जो आदेश पारित होगा उसकी अपील धारा 13 के अन्तर्गत आयुक्त के समक्ष पेश की जा सकती है ।

अपर गंगेज शुगर एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 491

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25)

– धारा 13(1) और धारा 28 – विवाह-विच्छेद की डिक्री – पत्नी द्वारा पति और उसके परिवार के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया जाना – विवाह-विच्छेद का आधार माना जाना – पत्नी की ओर से यह आरोप लगाया जाना कि पति और उसके परिजन उसके साथ दुर्व्यवहार कर दहेज की मांग करते हैं – पति की प्रतिपरीक्षा करने में पत्नी का असफल हो जाना – क्रूरता कारित किए जाने की विशिष्ट घटना से संबंधित पत्नी द्वारा पति की प्रतिपरीक्षा ही नहीं की गई अपितु वह पति के विरुद्ध अपने आरोपों को भी सिद्ध नहीं कर सकी, अत: विवाह-विच्छेद संबंधी निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

बिन्दु बनाम **कुलदीप** 524

राजीव उर्फ राजू कुमार*

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

(2017 की सिविल रिट याचिका सं. 11448)

तारीख 15 नवम्बर, 2019

न्यायमूर्ति सौरभ श्याम शमशेरी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश अनुसूचित वस्तु वितरण आदेश 2016] – धारा 13(3) – सरकारी सस्ते गल्ले की दुकान – उचित दर दुकान का आकस्मिक निरीक्षण किया जाना – दुकान पर कार्ड धारकों की सूची, सामान की दर सूचना पट्ट पर प्रदर्शित नहीं किया जाना – याची द्वारा अंत्योदय कार्ड धारकों को मात्रा से कम एवं अधिक मूल्य पर खाद्यान्न वितरण किए जाने का अभिकथन – याची द्वारा आदेश 2004 व अनुबंध पत्र की शर्तों का उल्लंघन किया जाना – उचित दर की दुकान का अनुबंध निरस्त किया जाना – क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक द्वारा की गई आख्या की प्रति याची को उपलब्ध नहीं कराई गई, अतः उप जिलाधिकारी द्वारा अनुबंध निरस्त करने की कार्यवाही दूषित मानी जाएगी इसलिए निरस्तीकरण का आदेश अपास्त किए जाने योग्य है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि याची सरकारी सस्ते गल्ले, मिट्टी के तेल का विक्रेता है एवं उसे उचित दर दुकान (ग्राम पंचायत खानपुर चितरविल, विकासखण्ड मिर्जापुर) का अनुबन्धपत्र जारी किया गया था तथा याची सन् 1992 से उचित दर दुकान को लगातार

---

* मूल निर्णय हिन्दी में है ।

चला रहा था । दिनांक 24.6.2016 को दूरभाष पर की गई शिकायत के क्रम में याची की उचित दर दुकान पर आकस्मिक स्थलीय निरीक्षण क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक, निजामाबाद द्वारा किया गया । निरीक्षण के दौरान मौके पर उपस्थित गृहस्थियों/अंत्योदय कार्ड धारकों व उनके परिवार से खाद्यान्न वितरण सम्बधी पूछताछ भी करी गई । दुकान पर पात्र गृहस्थियों/अंत्योदय कार्ड धारकों की सूची, सामान की दरों को सूचना पट्ट आदि पर प्रदर्शित नहीं किया गया था । पूछताछ के दौरान यह भी विदित हुआ कि याची का व्यवहार ग्राहकों के प्रति अच्छा नहीं रहता था । याची ने अंत्योदय कार्ड धारकों को शासन द्वारा निर्धारित मात्रा से कम एंव अधिक मूल्य पर खाद्यान्न का वितरण किया एवं अन्य शिकायतें भी पाई गईं । अतः यह माना गया कि याची ने आदेश 2004 व अनुबन्धपत्र की शर्तों का उल्लंघन किया है । तद्नुसार उप जिलाधिकारी, निजामाबाद, आजमगढ़ ने क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक, निजामाबाद की जांच आख्या दिनांक 26.6.2016 पर संज्ञान लेते हुए, अपने आदेश दिनांक 29.6.2016 के द्वारा याची का अनुबन्धपत्र तत्काल प्रभाव से निलम्बित कर दिया तथा याची को एक सप्ताह के अन्दर अपना पक्ष रखने का समय दिया । साथ ही साथ याची के उचित दर दुकान का समस्त कोटा दूसरी दुकान से सम्बद्ध करार दिया गया । याची अपने अनुबन्धपत्र के निरस्त करने के आदेश दिनांक 16.9.2016 से क्षुब्ध होकर कण्डिका सं. 28(3) उत्तर प्रदेश आवश्यक वस्तु (विक्रय एवं वितरण नियंत्रण का अधिनियम) आदेश 2016 (संक्षेप में 'आदेश 2016') के अंतर्गत आयुक्त आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़ के समक्ष अपील दायर की । आयुक्त आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़ ने अपने आदेश दिनांक 2.1.2017 के माध्यम से याची की अपील सं. 256/ए को बलहीन मानते हुए निरस्त कर दिया । याची ने वर्तमान याचिका द्वारा उपरोक्त आक्षेपित आदेश दिनांक 15.1.2017 व दिनांक 16.9.2016 के विरुद्ध याचिका फाइल की है । रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान याचिका के तथ्यों से यह विदित होता है, कि याची के विरुद्ध समस्त कार्यवाही का आधार क्षेत्रीय पूर्ति अधिकारी की

जांच आख्या दिनांक 26.6.2016 है । उप जिलाधिकारी एवं आयुक्त ने उक्त जांच आख्या को ही आधार मान कर अपने निर्णय पारित किए हैं । तथ्य से कि उक्त जांच आख्या की प्रति याची को नहीं दी गई है, प्रति-वादी के अधिवक्ता इनकार नहीं कर पाए हैं । अतः यह सिद्ध होता है कि उक्त जांच आख्या की प्रति याची को कभी भी नहीं दी गई है । मैं याची के विद्वान् अधिवक्ता के कथन से पूर्णतः सहमत हूं कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में निष्पक्षता नहीं रखी गई है व नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का परिपालन नहीं किया गया है । उपरोक्त विवेचना के प्रकाश में एवं उपरोक्त वर्णित न्यायिक प्रतिपादनों के गहन अध्ययन के उपरान्त, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि वर्तमान वाद ने नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का अनुपालन नहीं हुआ है । इस कारण से निर्णय लेने की सम्पूर्ण प्रक्रिया दूषित हो गई है । अतः ऐसी प्रक्रिया को न्यायपूर्ण व दोषरहित नहीं कहा जा सकता है । अतः आक्षेपित आदेश दिनांक 16.9.2016 (उप जिलाधिकारी निजामाबाद, आजमगढ़) एवं 25.1.2017 (आयुक्त, आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़) न्यायपूर्ण न होने के कारण निरस्त किए जाने योग्य है, अतः निरस्त किए जाते हैं । यह याचिका इस आदेश के साथ अंतिम रूप से निस्तारित की जाती है, कि वर्तमान प्रकरण उप जिलाधिकारी आजमगढ़ को प्रतिशरण इन निर्देशों के साथ किया जाता है, वो वर्तमान प्रकरण को नैसर्गिक सिद्धान्तों का पालन करते हुए, इस आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि के मिलने के चार सप्ताह के अंतर्गत, गुण दोष के आधार पर निस्तारित करेंगे । यहां यह उल्लिखित करना आवश्यक है कि इस न्यायालय ने वर्तमान प्रकरण के गुण दोष पर कोई टिप्पणी नहीं की है । (पैरा 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1980]	(1980) 4 एस. सी. सी. 379 : **एस. एल. कपूर** बनाम **जगमोहन एंड सन्स** ;	14
[1978]	(1978) 1 एस. सी. सी. 405 : **एस. एस. गिल** बनाम **चीफ इलेक्शन कमिश्नर** ।	14

सिविल रिट अधिकारिता : 2017 की सिविल रिट याचिका सं. 11448.

भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री सुदीप द्विवेदी, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री शेर बहादुर यादव (मुख्य स्थायी अधिवक्ता) और शिव शंकर गुप्ता

न्यायमूर्ति सौरभ श्याम शमशेरी – वर्तमान व्यवहार प्रकीर्ण याचिका के माध्यम से याची ने प्रार्थना की है कि, आयुक्त, आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़ द्वारा पारित निर्णय दिनांक 25.1.2017, जिससे याची के द्वारा दायर की गई अपील संख्या 256/F (अन्तर्गत 13(3) उत्तर प्रदेश अनुसूचित वस्तु वितरण आदेश 2016 (संक्षेप में 'आदेश 2016') बलहीन होने के कारण निरस्त की गई है तथा उप जिलाधिकारी निजामाबाद, आजमगढ़ द्वारा पारित आदेश दिनांक 6.9.2016, जिसके द्वारा याची के उचित दर दुकान का अनुबन्धपत्र निरस्त किया गया था, उक्त आदेश की पुष्टि की गई है, को निरस्त किया जाए ।

2. याची सरकारी सस्ते गल्ले, मिट्टी के तेल का विक्रेता है एवं उसे उचित दर दुकान (ग्राम पंचायत खानपुर चितरविल, विकासखण्ड मिर्जापुर) का अनुबन्धपत्र जारी किया गया था तथा याची सन् 1992 से उचित दर दुकान को लगातार चला रहा था । दिनांक 24.6.2016 को दूरभाष पर की गई शिकायत के क्रम में याची की उचित दर दुकान पर आकस्मिक स्थलीय निरीक्षण क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक, निजामाबाद द्वारा किया गया । निरीक्षण के दौरान मौके पर उपस्थित गृहस्थियों/अंत्योदय कार्ड धारकों व उनके परिवार से खाद्यान्न वितरण सम्बंधी पूछताछ भी करी गई । दुकान पर पात्र गृहस्थियों/अंत्योदय कार्ड धारकों की सूची, सामान की दरों का पट्ट, सूचना पट्ट आदि प्रदर्शित नहीं किया गया था । पूछताछ के दौरान यह भी विदित हुआ कि याची का व्यवहार ग्राहकों के प्रति अच्छा नहीं रहता था । याची ने अंत्योदय कार्ड धारकों को शासन द्वारा निर्धारित मात्रा से कम एंव अधिक मूल्य पर खाद्यान्न का वितरण किया एवं अन्य शिकायतें भी पाई गईं । अतः यह माना गया कि याची ने आदेश 2004 व अनुबन्धपत्र की शर्तों का उल्लंघन किया है ।

तद्नुसार उप जिलाधिकारी, निजामाबाद, आजमगढ़ ने क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक, निजामाबाद की जांच आख्या दिनांक 26.6.2016 पर संज्ञान लेते हुए, अपने आदेश दिनांक 29.6.2016 के द्वारा याची का अनुबन्धपत्र तत्काल प्रभाव से निलम्बित कर दिया तथा याची को एक सप्ताह के अन्दर अपना पक्ष रखने का समय दिया । साथ ही साथ याची के उचित दर दुकान का समस्त कोटा दूसरी दुकान से सम्बद्ध करार दिया गया ।

3. याची ने अपना स्पष्टीकरण एक निवेदन के रूप में दिया जिसमें कहा गया कि सूची सामग्री दर पट्ट व समाग्री पट्ट प्रदर्शित किया गया था । यह भी कहा कि कुछ कार्ड धारक दुबारा बयान देना चाहते हैं, क्योंकि पहले उन्होंने किसी दबाव में आकर याची के विरुद्ध ब्यान दिया था । याची के विरुद्ध शिकायत मात्र चुनावी रंजिश के कारण की गई है । अत: प्रार्थना की गई कि निलम्बित दुकान बहाल करी जाए । याची ने माह अप्रैल, मई, जून सन् 2016 की वितरण पंजिका व स्टाक पंजिका की छाया प्रति व समस्त योजनाओं के कार्ड धारकों का सामूहिक हस्ताक्षर किया गया प्रार्थना पत्र भी प्रस्तुत किया ।

4. याची के स्पष्टीकरण देने के उपरान्त उप जिलाधिकारी, निजामाबाद, आजमगढ़ ने प्रकरण की सुनवाई करी तथा क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक की जांच आख्या दिनांक 26.6.2016, याची द्वारा दिया गया लिखित स्पष्टीकरण एवं संलग्न प्रदर्शों का ध्यानपूर्वक परिशीलन करने के उपरान्त प्राधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि याची का अनुबन्धपत्र निरस्त करने योग्य है । फलस्वरूप याची का अनुबन्धपत्र निरस्त करने योग्य है तद्नुसार अनुबन्धपत्र निरस्त करने का आदेश दिनांक 16.9.2016 पारित किया । उक्त आदेश के प्रमुख अंश निम्न हैं :-

> "इस प्रकार उचित दर विक्रेता ग्रामपंचायत खानपुर चितरावल द्वारा दिनांक 12.7.2016 को प्रस्तुत स्पष्टीकरण व साक्ष्यों का क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक द्वारा परीक्षणोपरान्त आख्या दिनांक 14.9.2016 प्रस्तुत किया गया कि विक्रेता द्वारा अंत्योदय कार्ड धारकों में शासन द्वारा निर्धारित मात्रा से कम मात्रा एवं निर्धारित मूल्य से अधिक मूल्य 95 रुपए के स्थान पर 100 रुपए लेकर

खाद्यान्न का वितरण किया गया है विक्रेता द्वारा प्रस्तुत की गई स्पष्टीकरण में अधिक मूल्य लिया जाना स्वीकार किया गया है तथा चीनी का वितरण निर्धारित मात्रा 2 कि.ग्रा. के स्थान पर 1 कि.ग्रा. शासन द्वारा निर्धारित मूल्य 13.50 रुपए प्रति कि.ग्रा. न लेकर 15.00 रुपए लिया जाना विक्रेता द्वारा स्वीकार किया गया है । पात्र गृहस्थी के अधिकांश कार्ड धारकों में राशन वितरण नहीं किया गया है । पात्र गृहस्थी के अधिकांश कार्ड धारकों में राशन वितरण नहीं किया गया है । कुछ पात्र गृहस्थी कार्डों पर वितरण किया गया है जो दर्ज यूनिट के अनुसार वितरण न करके मनमाने ढंग से कम मात्रा व अधिक मूल्य पर वितरण किया गया है । समस्त योजना के कार्ड धारकों में मिट्टी का तेल शासन द्वारा निर्धारित मात्रा पर वितरण किया गया है किन्तु अधिक मूल्य लिया गया है । विक्रेता द्वारा प्रस्तुत वितरण पंजिका में कार्ड धारकों के नामों के सम्मुख मात्रा व मूल्य अंकित है किन्तु प्राप्तकर्ता के हस्ताक्षर वाले कालम में अधिकतर अंगूठा निशानी लगा है, ऐसा प्रतीत होता है कि बाद में निशानी अंगूठा लगा दिया गया है तथा वितरण पंजिका किसी भी सक्षम अधिकारी द्वारा प्रमाणित नहीं है । समस्त पात्र गृहस्थी योजनाओं के कार्ड धारकों को एक ही मात्रा में खाद्यान्न का वितरण करना अंकित है जबकि यूनिट के अनुसार खाद्यान्न वितरण किया जाना था जिससे स्पष्ट है कि विक्रेता द्वारा कपट्टपूर्ण नीति से वितरण पंजिका तैयार की गई है । विक्रेता द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण के पुष्ट भाग पर संयुक्त रूप से लोगों का हस्ताक्षर व निशानी अंगूठा लगवाया गया है इन लोगों का न तो कार्ड संख्या अंकित है और न तो किस योजना के कार्ड धारक हैं, इसका भी उल्लेख नहीं है । विक्रेता द्वारा कार्ड धारकों से दुर्व्यवहार का दोषी पाया गया है । विक्रेता द्वारा अंत्योदय कार्ड धारकों में शासन द्वारा निर्धारित मात्रा से कम एवं अधिक मूल्य पर खाद्यान्न का वितरण किया जाना, चीनी निर्धारित मात्रा/मूल्य पर वितरण न करना, कार्ड धारकों से दुर्व्यवहार करना उचित दर दुकान पर पात्र गृहस्थियों/अंत्योदय कार्ड धारकों की सूची, रेट व स्टाक बोर्ड, साइन बोर्ड, टोल फ्री नं. प्रदर्शित न करना जो उ. प्र. अनूसचित

वस्तु वितरण आदेश 2004 व अनुबन्धपत्र की शर्तों का उल्लघंन है । उचित दर विक्रेता श्री राजू कुमार द्वारा निलम्बन के क्रम में प्रस्तुत स्पष्टीकरण व साक्ष्य बलहीन व तथ्यहीन पाए जाने के फलस्वरूप उचित दर की दुकान का अनुबन्धपत्र बनाए रखना जनहित व अनुसूचित वस्तु वितरण आदेश 2004 के प्रावधानों के क्रम में उचित नहीं है, जिसके फलस्वरूप क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक द्वारा निलम्बित विक्रेता श्री राजू कुमार के उचित मूल्य की दुकान का अनुबन्धपत्र निरस्त किए जाने की संस्तुति की गई है ।"

5. याची अपने अनुबन्धपत्र के निरस्त करने के आदेश दिनांक 16.9.2016 से क्षुब्ध होकर कण्डिका सं. 28(3) उत्तर प्रदेश आवश्यक वस्तु (विक्रय एवं वितरण नियंत्रण का अधिनियम) आदेश 2016 (संक्षेप में 'आदेश 2016') के अंतर्गत आयुक्त आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़ के समक्ष अपील दायर की । अपील के मुख्य आधार निम्नलिखित हैं :-

"10. यह कि क्षेत्रीय पूर्तिनिरीक्षक की जांच आख्या 14.9.2016 की भी कापी अपीलकर्ता को नहीं दी गई जो नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त के विपरीत है ।

11. यह कि उपरोक्त से यह भी स्पष्ट होता है कि क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक ने दिनांक 24.6.2016 की शिकायत पर दिनांक 26.6.2016 को जांच रिपोर्ट दिया और फिर प्रार्थी के स्पष्टीकरण एवं समस्त अभिलेखों का परीक्षण भी पूर्ति निरीक्षक द्वारा किया गया बताया गया और पुनः जांच आख्या दिनांक 24.9.2016 को दी गई । इस प्रकार शिकायतकर्ता ही जांच अधिकारी के रूप में अनुबन्धपत्र निरस्त करने का निर्णय भी लिया जो कानूनन गलत है । क्योंकि उप जिलाधिकारी द्वारा स्वयं स्वतंत्र रूप से कोई निर्णय नहीं लिया गया ।

12. यह कि उप जिलाधिकारी द्वारा जांच आख्या दिनांक 14.9.2016 के आधार पर आदेश पारित किया गया है जांच आख्या से संतुष्ट होने का कोई निष्कर्ष आदेश में नहीं दिया है कि किस आधार पर अनुबन्धपत्र निरस्त किया गया है ।"

6. आयुक्त, आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़ ने अपने आदेश दिनांक 2.1.2017 के माध्यम से याची की अपील संख्या 256/ए को बलहीन मानते हुए निरस्त कर दिया । आदेश के प्रमुख अंश निम्न है :–

> "पत्रावली के अवलोकन से स्पष्ट है कि अपीलकर्ता की ओर से दिनांक 12.7.2016 को स्पष्टीकरण दिया गया है, जिसके साथ सादे पेपर पर कतिपय ग्रामवासियों के हस्ताक्षर हैं, एवं अभिलेखों की छायाप्रति एवं कुछ अभिलेखों की मूल प्रति प्रस्तुत की गई है । वितरण रजिस्टर किसी भी अधिकारी द्वारा प्रमाणित नहीं किया गया है, जबकि वितरण रजिस्टर के अन्तिम पृष्ठ पर यह प्रमाणित किया जाता है कि रजिस्टर में क्रमांक इतने से इतने पन्ने हैं । केवल माह अप्रैल, 2016 के मिट्टी का तेल का रजिस्टर प्रमाणित किया गया है । विद्वान् उप जिलाधिकारी द्वारा अपीलकर्ता की ओर से प्रस्तुत स्पष्टीकरण व अभिलेखों का क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक से परीक्षण कराया गया है । क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक द्वारा दिनांक 14.9.2016 को प्रस्तुत किया गया, जिसमें उल्लेख किया गया कि समस्त पात्र गृहस्थी योजना के कार्ड धारकों को एक ही मात्रा में खाद्यान्न वितरण किया जाना अंकित किया गया है । जबकि यूनिट के आधार पर खाद्यान्न वितरण किया जाना चाहिए । विक्रेता द्वारा प्रस्तुत वितरण पंजिका में कार्ड धारकों के नाम के सम्मुख मात्रा व मूल्य अंकित है, किन्तु प्राप्तकर्ता के हस्ताक्षर वाले कालम में अधिकतर निशानी अंगूठा लगा है तथा वितरण रजिस्टर सक्षम अधिकारी द्वारा प्रमाणित नहीं है । समस्त योजनाओं के कार्ड धारकों के मिट्टी का तेल शासन द्वारा निर्धारित मात्रा पर वितरण किया गया है, किन्तु निर्धारित मूल्य से अधिक मूल्य लिया गया है । विक्रेता द्वारा अपने स्पष्टीकरण के पुष्ट भाग पर संयुक्त रूप से लोगों का हस्ताक्षर निशानी अंगूठा लगवाया गया है, जबकि न तो उन लोगों का कार्ड संख्या अंकित किया गया है और न तो किस योजना के कार्ड धारक हैं, इसका भी कोई उल्लेख नहीं किया गया है अपने परिक्षण रिपोर्ट में यह भी अंकित किया है कि विक्रेता द्वारा कार्ड धारकों से दुर्व्यवहार का दोषी पाया

गया है । अंत्योदय बी.पी.एल. एवं पात्र गृहस्थी योजना के खाद्यान्न, चीनी, मिट्टी का तेल आदि निर्धारित मात्रा से कम व निर्धारित मूल्य से अधिक मूल्य पर वितरण किया गया है । इस प्रकार स्पष्टीकरण व साक्ष्य बलहीन व तथ्यहीन पाए जाने के कारण अनुबन्धपत्र बनाए रखने का कोई औचित्य न पाते हुए दुकान निरस्त किए जाने की संस्तुति की गई है ।

इस प्रकार विद्वान् उप जिलाधिकारी द्वारा अपीलकर्ता के वितरण के विरुद्ध पूर्व में भी की गई शिकायत तथा दूरभाष पर की गई शिकायत के आधार पर पूर्ति निरीक्षक से आकस्मिक स्थलीय निरीक्षण कराकर कार्ड धारकों के बयान के आधार पर जांच में पाई गई गम्भीर अनियमितताओं के दृष्टिगत अपीलकर्ता की दुकान का अनुबन्धपत्र, स्पष्टीकरण प्राप्त कर पुनः स्पष्टीकरण व अभिलेखों का परीक्षण कराकर जांच में पाई गई गम्भीर अनियमितताओं के दृष्टिगत अपीलकर्ता की दुकान को बनाए रखने का कोई औचित्य न पाते हुए आलोच्य आदेश दिनांक 16.9.2016 द्वारा अपीलकर्ता की दुकान का अनुबन्धपत्र निरस्त किया है । इस प्रकार विद्वान् उप जिलाधिकारी द्वारा पत्रावली उपलब्ध अभिलेखों व साक्ष्यों का विधिवत् परीक्षण करने के उपरान्त ही अलोच्य आदेश दिनांक 16.9.2016 पारित किया है, जिसमें किसी प्रकार के हस्तक्षेप का कोई औचित्य नहीं पाया जाता है । अपील निरस्त होने योग्य है ।

अतः अपीलकर्ता द्वारा प्रस्तुत अपील बलहीन होने के कारण निरस्त की जाती है । अवर न्यायालय की पत्रावली आदेश की प्रति सहित वापस की जाती है । बाद आवश्यक कार्यवाही इस न्यायालय की पत्रावली दाखिल दफ्तर हो ।"

7. याची ने वर्तमान याचिका के द्वारा उपरोक्त वर्णित आक्षेपित आदेश दिनांक 25.1.2017 व 16.9.2016 को निरस्त करने की प्रार्थना की है । याची ने याचिका के प्रस्तर 20 व आधार प्रस्तर (I) व (II) में उल्लेख किया है, कि क्षेत्रीय पूर्ति अधिकारी द्वारा की गई जांच आख्या दिनांक 26.6.2016 की प्रति-याची को नहीं दी गई थी । अतः याची के विरुद्ध समस्त कार्यवाही नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों के विरुद्ध की गई है,

अतः ऐसी कार्यवाही निरस्त किए जाने योग्य है । याची ने अपने कथन के समर्थन में कुछ विधि व्यवस्थाओं का भी उल्लेख किया है ।

8. प्रति-पक्षी संख्या 3 ने प्रति-शपथपत्र दाखिल किया है तथा याचिका के प्रस्तर संख्या 20 के उत्तर में निम्नलिखित है :-

> "यह कि याचिका के प्रस्तर संख्या 20 में उल्लिखित विधि व्यवस्थाओं पर टिप्पणी की आवश्यकता नहीं है शेष जिस प्रकार लिखित है, स्वीकार नहीं है क्योंकि याची द्वारा आवश्यक वस्तुओं के वितरण में अनियमितता किया जाना सिद्ध पाए जाने के फलस्वरूप याची का अनुबन्धपत्र निरस्त किया गया । याची द्वारा उल्लिखित विधि व्यवस्थाएं याची के प्रकरण में लागू नहीं हैं ।"

प्रति-पक्षी संख्या 3 ने आधार संख्या (I) व (II) का कोई प्रति उत्तर नहीं दिया है । याची द्वारा प्रतिशपथ का उत्तर भी दाखिल किया जिसमें जांच आख्या दिनांक 26.6.2016 को याची को न देने का तथ्य फिर से उल्लिखित किया है ।

9. याची के विद्वान् अधिवक्ता हरीश चन्द्र दुबे ने प्रबल प्रतिवेदन किया और कहा कि याची के विरुद्ध समस्त कार्यवाही नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों के विरुद्ध की गई है । याची को जांच आख्या की प्रति नहीं दी गई है । याची के द्वारा दिए गए दस्तावेजों का परिशीलन ध्यानपूर्वक नहीं किया गया है । उप जिलाधिकारी ने मात्र जांच आख्या पर ही केन्द्रित होकर अपना कोई स्वतंत्र निष्कर्ष नहीं दिया है । इसी क्रम में आयुक्त महोदय ने भी याची की अपील सतही व अनौपचारिक रूप से निरस्त कर दी एवं अपील में लिए गए विभिन्न आधार पर कोई ध्यान या टिप्पणी नहीं करी है ।

10. याची के विद्वान् अधिवक्ता ने इस न्यायालय की एकल पीठ द्वारा पारित विधि व्यवस्था (रामकृपाल यादव बनाम उ. प्र. सरकार एवं अन्य रिट पिटिशन नं. 4011 (एम. आई. एस.) आफ 2010 व अन्य याचिकाओं का निर्णय दिनांक 05.05.2011) पर इस न्यायालय का ध्यान आकर्षित कराया, कि उक्त व्यवस्था में यह प्रतिपादित किया है कि, किसी अनुबन्धपत्र को निरस्त करना एक गंभीर विषय है, जिस पर

अनौपचारिक रूप में निर्णय नहीं लिया जा सकता । निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को निष्पक्षता से निर्णय लेना चाहिए एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए । ऐसा दस्तावेज (जैसे जांच आख्या, निरीक्षण आख्या आदि) जिसका उपयोग पीड़ित के विरुद्ध किया गया है, उसकी प्रति उसको न देना, ऐसे स्थापित नियमों के विरुद्ध होगा तथा ऐसे आदेश निरस्त किए जाने योग्य होंगे ।

11. प्रति उत्तर में उ. प्र. सरकार के स्थाई अधिवक्ता ने कथन किया की याची ने वृहद स्तर पर आदेश 2004 व निबन्धन पत्र की शर्तों के विरुद्ध कार्य किया एवं गम्भीर अनियमितांए बरती हैं । क्षेत्रीय पूर्ति निरीक्षक की जांच की आख्या में उल्लिखित है कि याची ने ग्राहकों को अधिक मूल्य में कम सामग्री प्रदान करी व दुकान पर सूचना पट्ट इत्यादि भी नहीं लगाए थे । याची का व्यवहार भी ठीक नहीं रहा । याची ने ऐसा कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है जिससे, निरस्तीकरण आदेश में लिए गए आधार असत्य माने जाए । याची को अपना पक्ष रखने के लिए समय दिया गया तथा याची ने लिखित स्पष्टीकरण के साथ आवश्यक दस्तावेज भी लगाए थे, जिनका परिशीलन किया गया । अतः नैसर्गिक न्याय के नियमों का पूर्णतः पालन हुआ है ।

12. याची व प्रतिवादीगण के विद्वान् अधिवक्ताओं के कथनों का श्रवण किया एवं उपलब्ध दस्तवेजों तथा विधि व्यवस्थाओं का परिशीलन ध्यानपूर्वक किया ।

13. नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन किसी भी कार्यवाही चाहे वो न्यायिक, प्रशासनिक, न्यायिककल्प ही क्यों न हो आवश्यक है । यह विधि सम्मत है कि सही, निष्पक्ष एवं पारदर्शी निर्णय के लिए इन सिद्धान्तों का पालन करना अनिवार्य है । निर्णय लेने की प्रक्रिया में निष्पक्षता सुनिश्चित करना निष्पक्ष निर्णय के अधिकार का एक महत्वपूर्ण स्तम्भ है । ऐसी प्रक्रिया जिसमें इन सिद्धान्तों का परिपालन नहीं किया जाता है, तो ऐसा माना जाएगा कि पीड़ित व्यक्ति के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव हुआ है ।

14. उच्चतम न्यायालय ने अपने कई निर्णय में निरंतर यह

प्रतिपादित किया है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए । ऐसा न करने से समस्त कार्यवाही निरस्त की जा सकती है । सिद्धान्तों का परिपालन न करने से यह माना जाएगा की कार्यवाही में निष्पक्षता नहीं रखी गई है । **एस. एल. कपूर** बनाम **जगमोहन एंड सन्स**[1] वाले मामले में यह प्रश्न उठा था कि क्या नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन तब भी किया जाना चाहिए जब कोई ऐसे अविवादित तथ्य जो निर्णय लेने के लिए पर्याप्त हो और नोटिस देने के बाद भी अन्तिम परिणाम वही होगा । इस पर उच्चतम न्यायालय ने प्रतिपादित किया कि केवल इसलिए क्योंकि तथ्य स्वीकार किए जा सकते है या निर्विवाद है, नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का पालन न करने का कोई कारण नहीं हो सकता है । उच्चतम न्यायालय की पांच न्यायमूर्ति की संवैधानिक पीठ ने **एस. एस. गिल** बनाम **चीफ इलेक्शन कमिश्नर**[2] वाले मामले में यह प्रतिपादित किया कि प्रशासनिक एवं अर्धन्यायिक कार्यों में नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का परिपालन अनिवार्य है । नैसर्गिक न्याय के नियमों का उद्देश्य "न्याय को विफल होने से रोकना" है । ये नियम न्यायिक तथा न्यायिककल्प कार्रवाई में तो लागू होते ही हैं, वरन् प्रशासनिक कार्रवाइयों में भी लागू होते हैं । न्यायिककल्प जांच तथा प्रशासनिक जांच, दोनों, का उद्देश्य यही होता है कि न्यायसंगत विनिश्चय पर पहुंचे । प्रशासनिक कार्यवाहियों में भी 'निष्पक्षता', एवं 'मनमानेपन का बहिष्करण', होना तथा उचित एवं न्यायसंगत रूप से कार्य करना, अनिवार्य है । यह सुप्रतिष्ठित विधि है कि, ऐसी प्रशासनिक कार्यवाही में, जो सिविल दुष्परिणाम उत्पन्न करती हो, नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्त अनिवार्य रूप से लागू होते हैं । अर्थात् किसी प्रशासनिक आदेश से सिविल दुष्परिणाम उत्पन्न होते हों तो ऐसा प्रशासनिक आदेश भी नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुपालन के उपरान्त ही पारित किए जा सकते हैं । "विधिसम्मत शासन" का अंतर्निहित सिद्धान्त है कि सिविल दुष्परिणाम उत्पन्न करने वाला आदेश, नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का अनुपालन करके ही पारित किया जाए ।

---

[1] (1980) 4 एस. सी. सी. 379.

[2] (1978) 1 एस. सी. सी. 405.

15. वर्तमान याचिका के तथ्यों से यह विदित होता है, कि याची के विरुद्ध समस्त कार्यवाही का आधार क्षेत्रीय पूर्ति अधिकारी की जांच आख्या दिनांक 26.6.2016 है । उप जिलाधिकारी एवं आयुक्त ने उक्त जांच आख्या को ही आधार मान कर अपने निर्णय पारित किए हैं । तथ्य से कि उक्त जांच आख्या की प्रति याची को नहीं दी गई है, प्रति वादी के अधिवक्ता इनकार नहीं कर पाए हैं । अतः यह सिद्ध होता है कि उक्त जांच आख्या की प्रति याची को कभी भी नहीं दी गई है । मैं याची के विद्वान् अधिवक्ता के कथन से पूर्णतः सहमत हूं की निर्णय लेने की प्रक्रिया में निष्पक्षता नहीं रखी गई है व नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का परिपालन नहीं किया गया है ।

16. उपरोक्त विवेचना के प्रकाश में एवं उपरोक्त वर्णित न्यायिक प्रतिपादनों के गहन अध्ययन के उपरान्त, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचता हूं कि वर्तमान वाद ने नैसर्गिक न्याय के सिद्धान्तों का अनुपालन नहीं हुआ है । इस कारण से निर्णय लेने की सम्पूर्ण प्रक्रिया दूषित हो गई है । अतः ऐसी प्रक्रिया को न्यायपूर्ण व दोषरहित नहीं कहा जा सकता है । अतः आक्षेपित आदेश दिनांक 16.9.2011 (उप जिलाधिकारी निजामाबाद, आजमगढ़) एवं 25.1.2017 (आयुक्त, आजमगढ़ मण्डल, आजमगढ़) न्यायपूर्ण न होने के कारण निरस्त किए जाने योग्य हैं, अतः निरस्त किए जाते हैं । यह याचिका इस आदेश के साथ अंतिम रूप से निस्तारित की जाती है, कि वर्तमान प्रकरण उप जिलाधिकारी आजमगढ़ को प्रतिशरण इन निर्देशों के साथ किया जाता है, वो वर्तमान प्रकरण को नैसर्गिक सिद्धान्तों का पालन करते हुए, इस आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि के मिलने के चार सप्ताह के अंतर्गत, गुण दोष के आधार पर निस्तारित करेंगे । यहां यह उल्लिखित करना आवश्यक है कि इस न्यायालय ने वर्तमान प्रकरण के गुण दोष पर कोई टिप्पणी नहीं की है ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

मही.

फकीर चंद हजारी (मैसर्स)

बनाम

आयुक्त, व्यापार कर, उत्तर प्रदेश, लखनऊ

(2006 का व्यापार कर पुनरीक्षण आवेदन सं. 1031 और 1032)

तारीख 18 जनवरी, 2020

न्यायमूर्ति आलोक माथुर

उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम, 1948 (1948 का 15) – धारा 8क [सपठित केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 7] – निर्धारिती/पुनरीक्षणकर्ता द्वारा नई शाखा पर मदों का आयात किया जाना – रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन न किया जाना – आयातित माल का उल्लेख प्रमाणपत्र की सूची में न किया जाना – पुनरीक्षणकर्ता रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में किए गए संशोधनों और उसमें संलग्न मदों की सूची से पूरी तरह अवगत था और यह भी जानता था कि उसने वह माल आयात किया है जिसके संबंध में उसका आवेदन मंजूर किए जाने हेतु लंबित है, अत: यह नहीं माना जा सकता है कि उसने यह माल सद्भावपूर्ण रूप से आयात किया है, इसलिए ट्रिब्यूनल के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि पुनरीक्षणकर्ता/निर्धारिती एक फर्म है जो वनस्पति, चीनी एवं अन्य खाद्य तेलों का व्यवसाय करती है । पुनरीक्षणकर्ता फर्म उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम, 1948 की धारा 8क तथा केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 7 के अंतर्गत पंजीकृत है । पुनरीक्षणकर्ता ने इलाहाबाद मुख्यालय की शाखा के रूप में श्रीनाथ जी कोल्ड स्टोरेज, वजीरगंज, बदायूं, के नाम से बदायूं में एक कोल्ड स्टोर स्थापित किया और तद्नुसार उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम तथा केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम के अंतर्गत जारी पंजीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन के लिए आवेदन प्रस्तुत किया । निर्धारण प्राधिकारी ने तारीख 9 जनवरी, 2002 के अपने आदेश द्वारा उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम के अन्तर्गत जारी रजिस्ट्रीकरण

प्रमाणपत्र के प्ररूप 15 तथा केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम के अन्तर्गत जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के प्ररूप ख में संशोधन किया जो कि शाखा कार्यालय बदायूं को पुनरीक्षणकर्ता के व्यवसाय स्थान के रूप में दर्शाता है परंतु पुनरीक्षणकर्ता द्वारा आयात की जाने वाली मदों के संबंध में कोई जोड़/संशोधन नहीं किया गया और इस उद्देश्य के लिए पुनरीक्षणकर्ता ने एक और आवेदन मदों को जोड़ने के लिए प्ररूप ग के रूप में निर्धारण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया । इसी दौरान पुनरीक्षणकर्ता ने मशीनरी और पुर्जों का आयात करना आरंभ कर दिया । वर्ष 2001-2002 की निर्धारण कार्यवाही के दौरान निर्धारण अधिकारी को यह पता चला कि निर्धारिती-पुनरीक्षणकर्ता द्वारा आयात की गई मदों का उल्लेख रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में नहीं किया गया था जिसके परिणामस्वरूप पुनरीक्षणकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया जिसमें यह कहा गया कि पुनरीक्षणकर्ता ने 9,26,236/- रुपए की मशीनरी और पुर्जों का आयात किया था जिसके लिए पुनरीक्षणकर्ता को अनुमति न दिए जाने पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि पुनरीक्षणकर्ता ने अनाधिकृत और अवैध रूप से प्रश्नगत मदों का आयात किया था । कारण बताओ नोटिस के जवाब में पुनरीक्षणकर्ता ने एक विस्तृत उत्तर फाइल किया जिसमें यह कहा गया कि मशीनों और उसके पुर्जों को जोड़ने से संबंधित उसका आवेदन लंबित था और वह किसी भी स्थिति में निर्धारण प्राधिकारी द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया था और न ही पुनरीक्षणकर्ता को इस संबंध में संसूचित किया गया था । इस प्रकार से आवेदक को सद्भावपूर्ण विश्वास था कि प्रपत्र ग के अधीन प्रश्नगत माल आयात करने के लिए उसे अधिकृत किया गया था इसीलिए पुनरीक्षणकर्ता ने किसी भी उपबंध का अतिक्रमण नहीं किया है जिसके लिए उसे केन्द्रीय विक्रय अधिनियम की धारा 10क के अधीन दंडित किया जा सके । निर्धारण प्राधिकारी ने पुनरीक्षणकर्ता के स्पष्टीकरण को स्वीकार नहीं किया और केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम की धारा 10क के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए उस पर जुर्माना यह अभिनिर्धारित करते हुए लगाया कि पुनरीक्षणकर्ता ने प्राधिकृत हुए बिना प्ररूप ग के आधार पर मशीनों और उसके पुर्जों का आयात किया था और तारीख 22 फरवरी, 2005 के आदेश द्वारा उस पर केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम की धारा 10क के अधीन 1,30,000/- रुपए की

शास्ति अधिरोपित की गई । शास्ति के उक्त आदेश से व्यथित होकर, पुनरीक्षणकर्ता ने संयुक्त आयुक्त (अपील) वाणिज्य कर, इलाहाबाद के समक्ष अपीलें फाइल कीं जिन्हें तारीख 28 जनवरी, 2006 के निर्णय और आदेश द्वारा मुख्य रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में केवल शाखा का उल्लेख किया गया है न कि मदों का । प्रथम अपील प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षणकर्ता ने व्यापार कर-ट्रिब्यूनल इलाहाबाद के समक्ष द्वितीय अपीलें फाइल कीं जिन्हें तारीख 24 जुलाई, 2006 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया इसलिए वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन प्रस्तुत किए गए हैं । पुनरीक्षण आवेदन खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – वर्तमान मामले में निर्धारिती को यह पता चलने के बावजूद कि वस्तुओं/मदों को सूची में सम्मिलित नहीं किया गया है, उसने न तो लंबित आवेदन को निपटाने के लिए कोई आवेदन किया और न ही रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में माल सम्मिलित करने के लिए कोई नया आवेदन किया । वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता की स्थिति भी सद्भावपूर्ण प्रतीत नहीं होती है क्योंकि यदि ऐसा होता तो उचित संशोधन के बाद संबंधित प्राधिकारी के अनुमोदन के साथ उसे रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र वापस कर दिया जाता । पूर्वोक्त रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के आधार पर पुनरीक्षणकर्ता ने माल आयात करने का अपना व्यवसाय जारी रखा इसलिए वह यह अभिवाक् नहीं कर सकता है कि वह रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र से, जिसमें माल की सूची का भी उल्लेख किया गया है, अनभिज्ञ था । वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता अपने रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में किए गए संशोधनों और उसमें संलग्न मदों की सूची से पूरी तरह अवगत था और उसे पता होना चाहिए था कि माल को सूची में सम्मिलित करने के लिए उसके द्वारा दिया गया आवेदन मंजूर नहीं किया गया था और यह कि वह जिन मदों को प्ररूप ग के अनुसार आयात करना चाहता था उन मदों को माल की सूची में सम्मिलित नहीं किया गया है । वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता को उसके द्वारा शाखा और मदों को जोड़ने के लिए किए गए आवेदन के परिणाम के बारे में पूरी जानकारी थी । पुनरीक्षणकर्ता ने अपना व्यापार नई शाखा से प्रारंभ कर दिया था जो रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन के माध्यम से जोड़ा

गया था । इस तथ्य के बावजूद कि उसके द्वारा वस्तुओं को सम्मिलित करने के लिए किया गया आवेदन मंजूर नहीं किया गया है, उसने प्ररूप ग के अधीन माल का आयात जारी रखा और इसीलिए उपरोक्त तथ्यों से यह नहीं समझा जा सकता है कि पुनरीक्षणकर्ता ने माल का आयात सद्भावपूर्ण रूप से किया है । (पैरा 17, 18, 19 और 20)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2010]	(2010) एन. एन. टी. (जिल्द 44) 69 : **आयुक्त, विक्रय कर, उत्तर प्रदेश** बनाम **मैसर्स संजीव फैब्रिक्स** ।	15

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2006 का व्यापार कर पुनरीक्षण आवेदन सं. 1031 और 1032.

2006 की द्वितीय अपील सं. 43 और 44 में व्यापार कर ट्रिब्यूनल द्वारा तारीख 24 जुलाई, 2006 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन ।

पुनरीक्षणकर्ता की ओर से सर्वश्री कुंवर सक्सेना, मुरारी मोहन राय और नितिन केसरवानी

विरोधी पक्षकार की ओर से सी. एस. सी.

न्यायमूर्ति आलोक माथुर – पुनरीक्षणकर्ता की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री कृष्ण मुरारी राय तथा प्रत्यर्थी की ओर विद्वान् काउंसेल श्री विपिन कुमार पाण्डेय को सुना गया है ।

2. पूर्वोक्त पुनरीक्षण आवेदन के माध्यम से व्यापार कर ट्रिब्यूनल द्वारा 2006 की द्वितीय अपील सं. 43 और 44 में तारीख 24 जुलाई, 2006 को पारित उस एक ही निर्णय और आदेश को चुनौती दी गई है जिसके द्वारा दोनों अपीलें खारिज की गईं थीं । ये पुनरीक्षण आवेदन निर्धारण वर्ष 2001-2002 और 2002-2003 से संबंधित हैं ।

3. मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि पुनरीक्षणकर्ता/ निर्धारिती एक फर्म है जो वनस्पति, चीनी एवं अन्य खाद्य तेलों का

व्यवसाय करती है । पुनरीक्षणकर्ता फर्म उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम, 1948 की धारा 8क तथा केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 7 के अंतर्गत पंजीकृत है । पुनरीक्षणकर्ता ने इलाहाबाद मुख्यालय की शाखा के रूप में श्रीनाथ जी कोल्ड स्टोरेज, वजीरगंज, बदायूं, के नाम से बदायूं में एक कोल्ड स्टोर स्थापित किया और तद्नुसार उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम तथा केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम के अंतर्गत जारी पंजीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन के लिए आवेदन प्रस्तुत किया ।

4. निर्धारण प्राधिकारी ने तारीख 9 जनवरी, 2002 के अपने आदेश द्वारा उत्तर प्रदेश व्यापार कर अधिनियम के अन्तर्गत जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के प्ररूप 15 तथा केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम के अन्तर्गत जारी रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के प्ररूप ख में संशोधन किया जो कि शाखा कार्यालय बदायूं को पुनरीक्षणकर्ता के व्यवसाय स्थान के रूप में दर्शाता है परंतु पुनरीक्षणकर्ता द्वारा आयात की जाने वाली मदों के संबंध में कोई जोड़/संशोधन नहीं किया गया और इस उद्देश्य के लिए पुनरीक्षणकर्ता ने एक और आवेदन मदों को जोड़ने के लिए प्ररूप ग के रूप में निर्धारण अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया ।

5. इसी दौरान पुनरीक्षणकर्ता ने मशीनरी और पुर्जों का आयात करना आरंभ कर दिया । वर्ष 2001-2002 की निर्धारण कार्यवाही के दौरान निर्धारण अधिकारी को यह पता चला कि निर्धारिती-पुनरीक्षणकर्ता द्वारा आयात की गई मदों का उल्लेख रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में नहीं किया गया था जिसके परिणामस्वरूप पुनरीक्षणकर्ता को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया जिसमें यह कहा गया कि पुनरीक्षणकर्ता ने 9,26,236/- रुपए की मशीनरी और पुर्जों का आयात किया था जिसके लिए पुनरीक्षणकर्ता को अनुमति न दिए जाने पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि पुनरीक्षणकर्ता ने अनाधिकृत और अवैध रूप से प्रश्नगत मदों का आयात किया था ।

6. कारण बताओ नोटिस के जवाब में पुनरीक्षणकर्ता ने एक विस्तृत उत्तर फाइल किया जिसमें यह कहा गया कि मशीनों और उसके पुर्जों को जोड़ने से संबंधित उसका आवेदन लंबित था और वह किसी भी

स्थिति में निर्धारण प्राधिकारी द्वारा अस्वीकार नहीं किया गया था और न ही पुनरीक्षणकर्ता को इस संबंध में संसूचित किया गया था । इस प्रकार से आवेदक को सद्भावपूर्ण विश्वास था कि प्रपत्र ग के अधीन प्रश्नगत माल आयात करने के लिए उसे अधिकृत किया गया था इसीलिए पुनरीक्षणकर्ता ने किसी भी उपबंध का अतिक्रमण नहीं किया है जिसके लिए उसे केन्द्रीय विक्रय अधिनियम की धारा 10क के अधीन दंडित किया जा सके ।

7. निर्धारण प्राधिकारी ने पुनरीक्षणकर्ता के स्पष्टीकरण को स्वीकार नहीं किया और केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम की धारा 10क के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए उस पर जुर्माना यह अभिनिर्धारित करते हुए लगाया कि पुनरीक्षणकर्ता ने प्राधिकृत हुए बिना प्ररूप ग के आधार पर मशीनों और उसके पुर्जो का आयात किया था और तारीख 22 फरवरी, 2005 के आदेश द्वारा उस पर केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम की धारा 10क के अधीन 1,30,000/- रुपए की शास्ति अधिरोपित की गई ।

8. शास्ति के उक्त आदेश से व्यथित होकर, पुनरीक्षणकर्ता ने संयुक्त आयुक्त (अपील) वाणिज्य कर, इलाहाबाद के समक्ष अपीलें फाइल कीं जिन्हें तारीख 28 जनवरी, 2006 के निर्णय और आदेश द्वारा मुख्य रूप से इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में केवल शाखा का उल्लेख किया गया है न कि मदों का । प्रथम अपील प्राधिकरण द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षणकर्ता ने व्यापार कर ट्रिब्यूनल इलाहाबाद के समक्ष द्वितीय अपीलें फाइल कीं जिन्हें तारीख 24 जुलाई, 2006 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया इसलिए वर्तमान पुनरीक्षण आवेदन प्रस्तुत किए गए हैं ।

9. इस पुनरीक्षण आवेदन में विचार के लिए निम्नलिखित विधि के सारभूत प्रश्न विरचित किए गए हैं :–

1. क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर आवेदक केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम की धारा 10क और 10ख के अधीन शास्ति के लिए दायी था ?

2. क्या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर

प्राधिकारियों द्वारा निर्धारित शास्ति की मात्रा अत्यधिक और मनमानी थी ?

10. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् अधिवक्ता ने यह दलील दी है कि उसने रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में मदों को जोड़ने के लिए आवेदन किया है परन्तु सक्षम प्राधिकारी ने केवल शाखा को जोड़ा जबकि मदों को जोड़ने से संबंधित आवेदन लंबित ही रहा । उन्होंने आगे यह दलील दी कि उसे प्ररूप ग जारी किया गया था और उसके उपरांत ही उसने माल का आयात किया तथा उपरोक्त तथ्यों पर विचार करते हुए यह सुरक्षित रूप से माना जा सकता है कि पुनरीक्षणकर्ता सद्भावपूर्ण कार्य कर रहा था और उसका उद्देश्य कर का अपवंचन नहीं था इसीलिए निर्धारण प्राधिकारी, प्रथम अपील प्राधिकारी और साथ ही ट्रिब्यूनल द्वारा पारित आदेश मनमाने थे और उन्होंने पुनरीक्षणकर्ता के पक्षकथन पर उचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया और इसीलिए उस पर अधिरोपित शास्ति अपास्त किए जाने योग्य है ।

11. दूसरी ओर राजस्व की ओर से विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 के अधीन यह अनिवार्य है कि रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में उन मदों की सूची निर्धारिती द्वारा दी जानी चाहिए जिनके संबंध में उसके द्वारा कार्यवाही करना तात्पर्यित था । उन्होंने यह भी दलील दी कि इस संबंध में पुनरीक्षणकर्ता द्वारा आवेदन किया गया था लेकिन पुनरीक्षणकर्ता के पक्ष में कोई आदेश पारित नहीं किया गया है और इसलिए रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में मदों को जोड़े बिना प्ररूप ग पर ऐसे माल का आयात नहीं कर सकता था जो रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में सम्मिलित नहीं था । उन्होंने आगे कहा कि पुनरीक्षणकर्ता पर अधिरोपित शास्ति न्यायसंगत और उचित थी क्योंकि उसने कानूनी उपबंधों का स्पष्ट उल्लंघन किया है ।

12. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना गया है तथा अभिलेखों का परिशीलन किया गया है ।

13. इस मामले के स्वीकृत तथ्य इस प्रकार हैं कि पुनरीक्षणकर्ता ने अपनी फर्म की शाखा और मदों को जोड़ने के लिए आवेदन फाइल किया था । सक्षम प्राधिकारी ने केवल शाखा को जोड़ा लेकिन मदों को जोड़ने

के लिए कोई आदेश पारित नहीं किया । यह बात सत्य है कि आयात की जाने वाली वस्तुओं की मदों के लिए प्ररूप ग जारी किया गया था जिसका उल्लेख रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में नहीं किया गया था और पुनरीक्षणकर्ता द्वारा यह दावा किया गया है कि उक्त माल का आयात इस सद्भावपूर्ण विश्वास के साथ किया गया था कि इस माल को संशोधित रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में सम्मिलित कर लिया गया है ।

14. यह भी निर्विवादित है कि मदों को जोड़ने के संबंध में जो आवेदन किया गया था उसे मंजूर नहीं किया गया और न ही रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में मदों को दर्ज किया गया । रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में बिना मदों को जोड़े पुनरीक्षणकर्ता को माल का आयात करने की अनुमति नहीं है और यदि ऐसा माल जो रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में नहीं दर्शाया गया है और उसे आयात किया जाता है तो वह पुनरीक्षणकर्ता केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम के उपखंडों के अधीन शास्ति के लिए दायी होगा ।

15. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने **आयुक्त, विक्रय कर, उत्तर प्रदेश** बनाम **मैसर्स संजीव फैब्रिक्स**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित किए गए निर्णय का अवलंब लिया है । उक्त निर्णय के पैरा 22 को निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "22. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए हमारा यह विचार है कि "मिथ्या व्यपदेशन" अभिव्यक्ति का उपयोग इस तथ्य का संकेत है कि अधिनियम की धारा 10(ख) के अन्तर्गत केवल तभी कोई अपराध होता जब कोई डीलर जानबूझकर कानून की उद्धत अवज्ञा करता है या धृष्टता या बेईमानीपूर्ण आचरण का दोषी पाया जाता है । इसलिए अधिनियम की धारा 10(क) के अन्तर्गत शास्ति उदगृहीत करने की कार्यवाही में राजस्व इस बात को साबित करेगा कि ऐसी कौन-सी परिस्थितियां विद्यमान थीं जिनमें अपराध घटित हुआ । इसके अलावा यह अधिनियम की धारा 10(क) के शीर्षक से स्पष्ट है कि अधिनियम के किसी भी ऐसे उपबंध के भंग के लिए, जिसमें अधिनियम की धारा 10 के अधीन अपराध बनता हो उसका

---

[1] (2010) टी. एन. टी. (जिल्द 44) 69.

सामान्य उपचार अभियोजन है जिसमें कारावास का दंडादेश दिया जा सकता है और अधिनियम की धारा 10(क) के अन्तर्गत शास्ति केवल अभियोजन के बदले में अधिरोपित की जाती है । धारा में प्रयुक्त भाषा और शास्ति की प्रकृति को ध्यान में रखने पर हमारे लिए यह मानना कठिन है कि प्ररूप ग में किए गए सभी लोप और कृत्यों को मिथ्या व्यपदेशन मान लिया जाए । इसीलिए हमारी राय में अधिनियम की धारा 10(क) और धारा 10(ख) के अन्तर्गत शास्ति अधिरोपित करने के लिए आपराधिक मन:स्थिति का होना एक पुरोभाव्य शर्त है ।

23. यह हमें अगले प्रश्न इस पर ले जाता है कि क्या हमारे सामने प्रस्तुत इन दो मामलों के तथ्यों के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि डीलरों ने प्रश्नगत माल खरीदा था और उस प्रश्नगत माल के लिए प्ररूप ग, यह जानते हुए प्रस्तुत किया कि उक्त माल उनके रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के अन्तर्गत नहीं आता है और ऐसा होने से आपराधिक मन:स्थिति की शर्त पूरी हो जाती है ।

24. जैसाकि प्रथम अवसर पर फाइल की गई अपीलों में कहा गया है कि उच्च न्यायालय ने शास्ति को इस आधार पर हटा दिया था कि विभाग ने प्ररूप ग जारी करते समय कोई भी आपत्ति नहीं की थी और डीलर को जैसे ही अपनी गलती का पता चला वैसे ही उसने रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन के लिए आवेदन कर दिया था । इस प्रकार आपेक्षित निर्णय से यह स्पष्ट होता है कि उच्च न्यायालय ने निर्णय देते समय इस तथ्य को दृष्टिगत नहीं किया कि डीलर ने कपास के कचरे के अलावा, सुतली, टाट आदि जैसी वस्तुओं के आयात के लिए प्ररूप ग का उपयोग किया । ऐसा मानते हुए कि डीलर को इस बात पर सद्भावपूर्ण विश्वास था कि कपास के मद में कपास का कचरा भी सम्मिलित है परन्तु यह विश्वास करना कठिन है कि डीलर को अन्य मदों के संदर्भ में भी ऐसा ही संदेह था ।

इसी प्रकार दूसरे अवसर पर फाइल की गई अपीलों में उच्च न्यायालय ने डीलरों द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण पर विचार नहीं किया है कि उन्हें सद्भावपूर्ण यह विश्वास था कि प्रपत्र ख में

तिलहन खरीदने के लिए उन्हें अधिकृत किया गया है और विभाग द्वारा भी बिना किसी आपत्ति के नियमित रूप से उन्हें प्रपत्र ग जारी किया जाता रहा । यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय ने इस आधार पर डीलर के मामले पर विचार किया है कि अधिनियम की धारा 10(ख) के अधीन किया गया अपराध एक पूर्ण अपराध है ।"

16. पूर्वोक्त निर्णय का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट रूप से पता चलता है कि निर्धारिती न्यायालय के समक्ष यह प्रदर्शित करने में सक्षम था कि उसने माल का आयात सद्भावपूर्वक किया था और उसने कोई गलत विवरणी (रिटर्न) भी दाखिल नहीं की थी तथा उसके आशयों का पता इस तथ्य से चलता है कि जैसे ही उसे यह पता चला कि मदें रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में सम्मिलित नहीं हैं उसने तुरंत रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में मद सम्मिलित किए जाने हेतु संशोधन के लिए आवेदन कर दिया था ।

17. वर्तमान मामले में निर्धारिती को यह पता चलने के बावजूद कि वस्तुओं/मदों को सूची में सम्मिलित नहीं किया गया है, उसने न तो लंबित आवेदन को निपटाने के लिए कोई आवेदन किया और न ही रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में माल सम्मिलित करने के लिए कोई नया आवेदन किया ।

18. वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता की स्थिति भी सद्भावपूर्ण प्रतीत नहीं होती है क्योंकि यदि ऐसा होता तो उचित संशोधन के बाद संबंधित प्राधिकारी के अनुमोदन के साथ उसे रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र वापस कर दिया जाता । पूर्वोक्त रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र के आधार पर पुनरीक्षणकर्ता ने माल आयात करने का अपना व्यवसाय जारी रखा इसलिए वह यह अभिवाक् नहीं कर सकता है कि वह रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र से, जिसमें माल की सूची का भी उल्लेख किया गया है, अनभिज्ञ था ।

19. वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता अपने रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में किए गए संशोधनों और उसमें संलग्न मदों की सूची से पूरी तरह अवगत था और उसे पता होना चाहिए था कि माल को सूची में सम्मिलित करने के लिए उसके द्वारा दिया गया आवेदन मंजूर नहीं

किया गया था और यह कि वह जिन मदों को प्ररूप ग के अनुसार आयात करना चाहता था उन मदों को माल की सूची में सम्मिलित नहीं किया गया है ।

20. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, हम यह कह सकते हैं कि **मैसर्स संजीव फैब्रिक्स** (उपरोक्त) वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय का निर्णय तथ्यों के आधार पर इस मामले से भिन्न है । वर्तमान मामले में पुनरीक्षणकर्ता को उसके द्वारा शाखा और मदों को जोड़ने के लिए किए गए आवेदन के परिणाम के बारे में पूरी जानकारी थी । पुनरीक्षणकर्ता ने अपना व्यापार नई शाखा से प्रारंभ कर दिया था जो रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र में संशोधन के माध्यम से जोड़ा गया था । इस तथ्य के बावजूद कि उसके द्वारा वस्तुओं को सम्मिलित करने के लिए किया गया आवेदन मंजूर नहीं किया गया है, उसने प्ररूप ग के अधीन माल का आयात जारी रखा और इसीलिए उपरोक्त तथ्यों से यह नहीं समझा जा सकता है कि पुनरीक्षणकर्ता ने माल का आयात सद्भावपूर्ण रूप से किया है ।

21. ऊपर की गई चर्चा को दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय की यह राय है कि ट्रिब्यूनल द्वारा दिए गए आदेश में कोई भी अवैधता या शिथिलता नहीं है और इसीलिए इसमें किसी भी प्रकार का हस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है ।

22. पुनरीक्षण आवेदन खारिज किए जाते हैं ।

23. इस पुनरीक्षण आवेदनों में उठाए गए विधि के सारभूत प्रश्नों के उत्तर राजस्व के पक्ष में और पुनरीक्षणकर्ता के विरुद्ध दिए जाते हैं ।

पुनरीक्षण आवेदन खारिज किए गए ।

अम.

वीरेन्द्र कुमार

बनाम

विजय कुमार और अन्य

(2011 के आदेश से प्रथम अपील सं. 78)

तारीख 8 मई, 2020

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र त्रिपाठी

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 147, 149 और 173 – प्रश्नगत यान द्वारा दुर्घटना – प्रश्नगत यान का उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक रीति से चलाया जाना साबित होना – यान चालन के दौरान चालक के पास वैध चालन अनुज्ञप्ति होना – दुर्घटना दावा – यान स्वामी/बीमा कंपनी का दायित्व – जहां यह साबित हो जाता है कि प्रश्नगत यान के चालक द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक चलाए जाने के कारण दुर्घटना हुई थी और चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी और दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति स्थायी रूप से दिव्यांग हो जाता है तो यान का स्वामी/बीमा कम्पनी प्रतिकर देने के लिए दायी है ।

संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं कि वर्तमान अपील अपीलार्थी द्वारा 1988 के मोटर यान अधिनियम की धारा 173 के अधीन 2008 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका (वीरेन्द्र कुमार बनाम विजय कुमार और अन्य) में मथुरा के मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय सं. 7 द्वारा तारीख 21 सितम्बर, 2010 को पारित किए गए निर्णय और आदेश से व्यथित होकर फाइल की गई है जिसके द्वारा प्रतिकर के संदाय की तारीख तक दावा याचिका फाइल करने की तारीख से 6 प्रतिशत ब्याज के साथ मोटर दुर्घटना में अपीलार्थी को पहुंची क्षतियों के दवाई और उपचार के लिए उपगत खर्चों के प्रयोजनार्थ 62,866/- रुपए राशि अधिनिर्णीत की गई थी । दावेदारों ने 2008 की मोटर दुर्घटना दावा सं. 239 में फाइल की गई 45 वर्ष की आयु को,

चालक और यान का स्वामी और बीमा कंपनी के विरुद्ध मथुरा के न्यायालय सं. 7 मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अपर जिला न्यायाधीश के समक्ष तारीख 17 फरवरी, 2008 को लगभग 12.30 बजे दोपहर घटित दुर्घटना को अधिकथित मोटर दुर्घटना को अधिकथित मोटर दुर्घटना में उसके द्वारा पहुंची क्षतियों की बाबत 12 प्रतिशत ब्याज के साथ 10,00,000/- रुपए के प्रतिकर का दावा करते हुए फाइल किया । दावा याचिका यह कथित करते हुए फाइल की गई है कि दावेदार तारीख 17 फरवरी, 2008 लगभग 12.30 बजे दोपहर को मथुरा के फराह की ओर मोटरसाइकिल सं. यू.पी. 85-आर-5810 पर अपने मित्र गोवर्धन सिंह के साथ जा रहा था जब क्वालिस यान सं. एच.आर. 70-7263 के चालक ने वाहन को उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण चलाते हुए उक्त मोटरसाइकिल को महुवन गांव के निकट राष्ट्रीय राजमार्ग सं. 2 पर पीछे से टक्कर मारी जिसमें मोटरसाइकिल को नुकसान पहुंचा और जिसके कारण चालक गोवर्धन सिंह और पिछली सीट पर सवार दावेदार को गंभीर क्षतियां पहुंचीं । उक्त दुर्घटना के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट संबंधित पुलिस थाने में दर्ज की थी । दावेदार-अपीलार्थी को प्रथम उपचार हेतु मथुरा के लाईफलाईन अस्पताल में भर्ती किया था जहां वह तारीख 17 फरवरी, 2008 से 18 फरवरी, 2008 तक उपचाराधीन रहा । परिणामस्वरूप जब उसकी हालत बिगड़ी तो उसे दिल्ली के लोक नायक अस्पताल में भर्ती कराया और वह तारीख 19 अप्रैल, 2008 से 6 मई, 2008 तक वहां भर्ती रहा । दावेदार-अपीलार्थी को दुर्घटना के कारण गंभीर शारीरिक और मानसिक आघात पहुंचा । अपीलार्थी उक्त दुर्घटना में पहुंचीं क्षतियों के कारण स्थायी रूप से शारीरिक दिव्यांग हो गया । अपीलार्थी दुर्घटना के पूर्व मथुरा महुवन/बराड़ी के निकट टोल प्लाजा पर गार्ड के रूप में कार्यरत था और उसे प्रतिमास 4,000/- रुपए वेतन मिलता था । वह अपने गांव में कृषि व्यवसाय से भी प्रतिमास 4,000/- रुपए कमाता था । इस तरह से, 12 प्रतिशत ब्याज सहित 10,00,000/- रुपए का दावा किया था । विपक्षी पक्षकार सं. 3 बीमा कंपनी ने अपना लिखित अभिकथन फाइल किया है और दावेदार के दावे का अनेकों आधारों पर विरोध किया है । नोटिस तामिलों के बावजूद न तो विपक्षी पक्षकार सं. 1 और 2 (अपराध करने वाले यान के चालक और स्वामी) कार्यवाहियों में

उपस्थित हुए है और न ही कोई अपना लिखित अभिकथन फाइल किया है । ऐसी परिस्थिति में कार्यवाहियों का तारीख 28 जुलाई, 2009 के आदेश के विरुद्ध एकपक्षीय संचालन किया । मोटरसाइकिल का चालक भी योगदायी उपेक्षा का अपराधी है और इस प्रकार उसे भी 20 प्रतिशत सीमा तक बढ़ाकर दुर्घटना का सहयोगी माना है । अंततः दावा अधिकरण ने चिकित्सा खर्चों के लिए 5 हजार रुपए, पीड़ा के लिए 5 हजार रुपए, सुविधा के लिए 3 हजार रुपए, परिचर खर्चों के लिए 5 हजार रुपए, रूप और विशेष खान-पान के लिए 5 हजार रुपए के लिए कुल 46,866/- रुपए अधिनिर्णीत किए गए है । इस प्रकार से दावेदार-अपीलार्थी कुल प्रतिकर 6,52,866/- रुपए जिसमें (46,866+ 5,000+3,000+3,000+5,000) प्रतिकर प्राप्त करने का हकदार है । उसे दावा याचिका फाइल करने की तारीख से संदाय की तारीख तक 6 प्रतिशत ब्याज सहित देय होगा । न्यायालय द्वारा भागत: अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने अपीलार्थी के शरीर पर क्षतियों के कारण, जिससे दावेदार और डाक्टर दवारा दिए गए साक्ष्य में भी साबित हो जाता है, वह अपनी ड्यूटी से स्वतंत्र रूप से आ जा नहीं सकते है । उसका आना जाना काफी हद तक प्रतिबंधित है । इसमें इन सभी कारणों के लिए, न्यायालय यह महसूस करता है कि अधिकरण ने इस शीर्षक के अधीन कोई प्रतिकर विनिश्चित करने में विधि की त्रुटि की है और इसलिए कुछ पीड़ा और कष्ट शीर्षक के अधीन और स्थायी आंशिक नि:शक्तता के शीर्षक के अधीन भी है और अर्जन क्षमता की हानि बढ़ाने के लिए कहा जाता है । इस आंकड़े को बढ़ाना सभी सुसंगत तत्वों को विचार में लेना होता है । जहां दावेदार क्षतियों के परिणामस्वरूप स्थायी नि:शक्तता से पीड़ित होता है वहां भविष्य की आमदनियों का हानि के शीर्षक के अधीन प्रतिकर निर्धारण उसकी अर्जन क्षमता पर ऐसी स्थायी नि:शक्तता के प्रभाव और असर पर निर्भर करेगा । अधिकरण को अर्जन क्षमता की हानि या आर्थिक हानि की प्रतिशतता के रूप में स्थायी नि:शक्तता की प्रतिशतता यांत्रिक रूप से लागू करनी चाहिए । क्या अधिकरण द्वारा निर्धारित किए जाने की अपेक्षा क्षति की अर्जन क्षमता

पर स्थायी नि:शक्तता और आय की प्रतिशतता के निबंधनों में अर्जन क्षमता की हानि निर्धारित करने के पश्चात् प्रभाव हैं, इसमें आमदनी की भविष्य हानि पर पहुंचने के लिए धन के निबंधनों में मात्रा निर्धारित की जानी है । अधिकरण को सही निर्देश देने के लिए समावेदन नहीं किया था और अधिकरण का निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण है । अपीलार्थी द्वारा पीड़ित क्षतियों के संबंध में इसमें अर्जन क्षमता की हानि को परिभाषित किया जाता है और इसमें गुणांक पद्धति को अपनाने के साथ प्रतिकर मंजूर किया जाता है । अपीलार्थी/दावेदार पिछली सीट पर यात्रा करने वाले की आयु 45 वर्ष थी, वह 8,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था । उसकी स्थायी नि:शक्तता 50 प्रतिशत निर्धारित की है और उसकी सेवाओं को समाप्त कर दिया । उसको कोई अन्य रोजगार मिलने की संभावना कम थी और यदि रोजगार मिल भी जाता है तो भी वेतन बहुत कम मिलने की संभावना थी । इसलिए मैंने 50 प्रतिशत के रूप में भविष्य की आमदनी की उसकी हानि निर्धारित की थी । क्षति की प्रकृति को विचार में लेते हुए, अपीलार्थी-दावेदार के शरीर पर हुई स्थायी नि:शक्तता वास्तव में चिकित्सा उपचार लेने में उपगत खर्चे, दुर्घटना में उसके शामिल होने के कारण हानि या मानसिक पीड़ा । मैं इसमें प्रतिकर बढ़ाने को उचित मानता हूं और चूंकि अपीलार्थी/दावेदार निम्नलिखित शीर्षक के अधीन प्रतिकर पाने के हकदार है – "8,000/- रुपए दुर्घटना से पूर्व क्षति की मासिक आय (टोल प्लाजा से 4,000/- रुपए और कृषि कार्य से 4,000/- रुपए)×12=96,000/- रुपए । 48,000/- रुपए प्रतिवर्ष भविष्य की आमदनी की हानि 50 प्रतिशत स्थायी नि:शक्तता क्षति की गुणांक कुल हानि के लिए 6,72,000/- रुपए भविष्य की आर्थिक हानि के लिए 1,68,000/- रुपए । पीड़ा, सदमा और दु:खों के लिए 5,000/- रुपए । चिकित्सा व्यय के लिए 25,0000/- रुपए । यात्रा के लिए 5,000/- रुपए । विशेष आहार के लिए 5,000/- रुपए । भूत और भविष्य के लिए परिचारक शुल्क हेतु 3,000/- रुपए । कुल प्रतिकर 11,06,000/- रुपए । जहां तक ब्याज की दर का संबंध है, इसे तारीख 13 जनवरी, 2020 को विनिश्चित (नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम वीरेन्द्र और अन्य) 2020 सिविल अपील सं. 242/243 वाले मामले में उच्चतम न्यायालय

के निर्णय को ध्यान में रखते हुए 9 प्रतिशत होना चाहिए । उपरोक्त कारणों के लिए, दावेदार/ अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई वर्तमान अपील मंजूर की जाती है और निर्णय को उपरोक्त निर्देशित सीमा तक रूपांतरित किया जाता है । प्रत्यर्थी बीमा कंपनी द्वारा जमा की गई धनराशि को दावा याचिका के फाइल करने की तारीख से 9 प्रतिशत की दर से ब्याज के साथ आज से 12 सप्ताह की अवधि के अन्दर जमा करेगा और तत्पश्चात् 6 प्रतिशत तक की राशि जमा करेगा । पहले जमा की गई धनराशि में से राशि कटौती करके जमा की जाएगी । संयोग से, अपीलार्थी बीमा कंपनी से प्रार्थना की है कि मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण को तुरन्त वापस करके इस अपील के फाइल करने के लिए इस न्यायालय के समक्ष कानूनी रूप से जमा की गई 25,000/- रुपए को यथाशीघ्र दावेदार को संदेय किए जाने हेतु प्रतिकर की धनराशि समायोजित की जाए, तथापि, ऐसी प्रार्थना मंजूर की जाती है । मूल अभिलेख वापस न्यायालय को भेजे जाएं । (पैरा 27, 28, 29, 30, 31, 32, 33 और 34)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2017] मनु./एस.सी./1366/2017 = (2017) 16 एस. सी. 680 : **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** ; 6

[2016] मनु./यू.पी./0310/2016 : **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **अमजद खान और अन्य** ; 6

[2014] मनु./एस.सी./0033/2014 = (2014) 2 एस. सी. 735 : **सैयद सादिक और अन्य** बनाम **डिविजनल मैनेजर यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी** ; 6

[2014] मनु./डी.ई./6063/2012 = 2014 ए. सी. जे. 1133 :
ऋतु बनाम **क्षेत्रीय मैनेजर उत्तरांचल राज्य सड़क परिवहन निगम** ; 21

[2012] मनु./एस.सी./1281/2011 = 2012 (1) टी. ए. सी./1 (एस. सी.) :
गोविन्द यादव बनाम **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** ; 19

[2011] मनु./एम.एच./1265/2011 = (2011) 5 महा.एल.जे. 854 :
डा. दत्तात्रय लक्ष्मण शिंदे बनाम **नाना रघुनाथ हिरे** ; 20

[2011] मनु./एस.सी./1018/2010 = (2011) 1 एस. सी. सी. 343 :
राजकुमार बनाम **अजय कुमार** ; 18

[2010] मनु./एस.सी./0777/2010 = (2010) 10 एस. सी. सी. 254 :
अरविन्द कुमार मिश्रा बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** ; 15

[2009] मनु./एस.सी./0606/2009 = 2009 ए. सी. जे. 1298 :
श्रीमती सरिता वर्मा और अन्य बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और अन्य** ; 6

[2009] मनु./एस.सी./0803/2009 = (2009) 6 एस. सी. सी. 1 :
निजाम इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज बनाम **प्रशांत एस. धनंका** ; 14

[2009] मनु./टी.एन./1243/2008 = (2009) 2 एल. डब्ल्यू. 767 :
न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **सेंथील कुमार** ; 17

[2008] मनु./एस.सी./7686/2008 = 2008 (3) टी. ए. सी. 17 (एस. सी.) :
राजेश कुमार उर्फ **राजू** बनाम **युद्धवीर सिंह और अन्य** ; 6

[2008] मनु./यू.पी./0616/2008 = 2008 (72) ए. एल. आर. 620 :
न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड द्वारा डिविजनल मैनेजर बनाम **मोहम्मद नबी** ; 6

[2003] मनु./एस.सी./1107/2002 = (2003) 2 एस. सी. सी. 274 :
नागप्पा बनाम **गुरुदयाल सिंह** ; 12

[2003] मनु./एस.सी./0529/2003 = (2003) 7 एस. सी. सी. 197 :
के. एस. आर. टी. सी. बनाम **महादेव शेट्टी** ; 13

[2001] मनु./डी.ई./0339/2001 = 1 (2001) ए. सी. सी. 615 :
अरुण सोंधी बनाम **दिल्ली परिवहन निगम** ; 16

[1999] मनु./एस.सी./0437/1999 = (1999) 6 एस. सी. सी. 667 :
रजिस्टर्ड सोसाइटी बनाम **यूनियन ऑफ इंडिया** ; 11

[1995] मनु./एस.सी./0146/1995 = (1995) 1 एस. सी. सी. 551 :
आर. डी. हतंगड़ी बनाम **पेस्ट कंट्रोल इंडिया प्राइवेट लिमिटेड** ; 10

[1989] मनु./एस.सी./0423/1989 = 1989 (III) एस. एल. वी. आर. 137 :
परमानंद कटारा बनाम **यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य** । 26

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 के आदेश से प्रथम अपील सं. 78.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 सपठित आदेश के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री बी. पी. वर्मा और मयंक

प्रत्यर्थी की ओर से श्री एस. सी. श्रीवास्तव

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र त्रिपाठी – दावेदार-अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल श्री बी. पी. वर्मा और बीमा कंपनी के विद्वान् काउंसेल श्री एस. सी. श्रीवास्तव को सुना ।

2. वर्तमान अपील अपीलार्थी द्वारा मोटर यान अधिनियम, 1988 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 173 के अधीन, तारीख 21 सितंबर, 2010 को मोटर दुर्घटना दावा ट्रिव्यूनल/अपर जिला न्यायाधीश, न्यायालय सं. 7, मथुरा द्वारा मोटर दुर्घटना दावा आवेदन सं. 239/2008 (वीरेन्द्र कुमार बनाम विजय कुमार और अन्य) पारित उस निर्णय और आदेश से व्यथित होकर फाइल की गई है जिसके द्वारा अपीलार्थी को मोटर दुर्घटना में पहुंची क्षतियों के चिकित्सा उपचार पर आए खर्चे के लिए 62,866/- रुपए की राशि प्रतिकर का भुगतान किए जाने की तारीख तक 6 प्रतिशत ब्याज की दर के साथ अधिनिर्णीत किया गया ।

3. 45 वर्ष के दावेदार ने यान के चालक, स्वामी और बीमा कंपनी के विरुद्ध 2008 के मोटर दुर्घटना दावा आवेदन सं. 239 के अधीन मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अपर जिला न्यायाधीश, मथुरा के समक्ष तारीख 17 फरवरी, 2008 को लगभग 12.30 बजे दोपहर में घटित दुर्घटना को अधिकथित मोटर दुर्घटना को अधिकथित मोटर दुर्घटना में उसके द्वारा पहुंची क्षतियों की बाबत 12 प्रतिशत ब्याज के साथ 10,00,000/- रुपए के प्रतिकर का दावा करते हुए फाइल किया था ।

4. दावा यह अधिकथित करते हुए फाइल किया गया है कि दावेदार तारीख 17 फरवरी, 2008 को दोपहर लगभग 12.30 बजे मथुरा से जब फराह की ओर मोटरसाइकिल सं. यू.पी. 85-आर-5810 से अपने मित्र गोवर्धन सिंह के साथ जा रहा था तब क्वालिस यान सं. एच.आर. 70-7263 के चालक ने वाहन को उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण चलाते हुए उक्त मोटरसाइकिल को महुवन गांव के निकट राष्ट्रीय राजमार्ग सं. 2 पर पीछे से टक्कर मारी जिसमें मोटरसाइकिल को नुकसान पहुंचा और चालक गोवर्धन सिंह और पिछली सीट पर सवार दावेदार को गंभीर क्षतियां पहुंचीं । उक्त दुर्घटना के संबंध में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट संबंधित पुलिस थाने मे दर्ज की गई थी । दावेदार-अपीलार्थी को प्रथम उपचार हेतु

मथुरा के लाइफलाइन अस्पताल में भर्ती किया था जहां वह तारीख 17 फरवरी, 2008 से 18 फरवरी, 2008 तक उपचाराधीन रहा । परिणामस्वरूप जब उसकी हालत बिगड़ी तो उसे दिल्ली के लोक नायक अस्पताल में भर्ती कराया गया और वह तारीख 19 अप्रैल, 2008 से 6 मई, 2008 तक वहीं भर्ती रहा । दावेदार-अपीलार्थी को दुर्घटना के कारण गंभीर शारीरिक और मानसिक आघात पहुंचा । अपीलार्थी उक्त दुर्घटना में पहुंचीं क्षतियों के कारण स्थायी तौर पर शारीरिक रूप से नि:शक्त हो गया । अपीलार्थी दुर्घटना के पूर्व मथुरा माहुवान/बराड़ी के निकट टोल प्लाजा पर गार्ड के रूप में कार्यरत था और उसे प्रतिमास 4,000/- रुपए वेतन मिलता था । वह अपने गांव में कृषि व्यवसाय से भी प्रतिमास 4,000/- रुपए कमाता था । इस तरह से, 12 प्रतिशत ब्याज सहित 10,00,000/- रुपए का दावा किया गया था ।

5. विरोधी पक्षकार सं. 3 अर्थात् बीमा कंपनी ने अपना लिखित कथन फाइल किया है और दावेदार के दावे का कई आधारों पर विरोध किया है । कई नोटिसों की तामीली के बावजूद न तो विरोधी पक्षकार सं. 1 और 2 (अपराध करने वाले यान के चालक और स्वामी) कार्यवाहियों में उपस्थित हुए हैं और न ही उन्होंने कोई अपना लिखित कथन फाइल किया है । ऐसी परिस्थिति में कार्यवाहियों का तारीख 28 जुलाई, 2009 के आदेश के विरुद्ध एकपक्षीय आदेश पारित किया गया । मोटर साइकिल का चालक भी योगदायी उपेक्षा का दोषी था और इस प्रकार उसे भी 20 प्रतिशत सीमा तक दुर्घटना का सहयोगी माना गया । अंततः, दावा अधिकरण ने चिकित्सा खर्चों के लिए 5 हजार रुपए पीड़ा के लिए, 5 हजार रुपए असुविधा के लिए, 3 हजार रुपए परिचर खर्चों के लिए, 5 हजार रुपए रूप और विशेष खान-पान के लिए, 5 हजार रुपए के लिए अर्थात् कुल मिलाकर 46,866/- रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया गया है । इस प्रकार दावेदार-अपीलार्थी 46,866+5,000+3,000+3,000+5,000 अर्थात् कुल प्रतिकर 6,52,866/- रुपए प्राप्त करने का हकदार है, जो उसे दावा आवेदन फाइल करने की तारीख से संदाय की तारीख तक 6 प्रतिशत ब्याज सहित देय होगा ।

6. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने सुनवाई के समय पर यह तर्क

दिया कि दावेदार-अपीलार्थी ने दुर्घटना में पहुंची क्षतियों के लिए दस लाख रुपए के प्रतिकर का दावा किया है किन्तु दावे को अधिकरण ने चिकित्सा खर्चे/पीड़ा व कष्ट/सुविधा/परिचर फीस/विशेष खान-पान के लिए मात्र 62,866/- रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया था । अधिकरण ने कमाई की क्षमता की हानि के लिए कोई भी धनराशि का आदेश नहीं किया है । दावा अधिकरण ने विवाद्यक सं. 4 का विनिश्चय नहीं किया है कि क्या अपीलार्थी-दावेदार किसी प्रतिकर का हकदार है और यदि हाँ तो कितनी राशि के लिए और वह किससे प्राप्त करेगा । अपीलार्थी के भाग पर कोई उपेक्षा नहीं हुई थी । अधिकरण ने दावा अभिनिर्धारित करने में यह त्रुटि कारित की है कि अपीलार्थी की ओर से 20 प्रतिशत की उपेक्षा की गई है और इसके विरुद्ध अभिलेख पर साक्ष्य उपलब्ध है । अधिकरण ने दावे में 58,583/- रुपए के कुल प्रतिकर में से 20 प्रतिशत प्रतिकर कम करके विधिक त्रुटि की है । अपीलार्थी ने 2,50,000/- रुपए के चिकित्सा बिल फाइल किए हैं, किन्तु उसे अधिकरण द्वारा इस आधार पर मंजूर नही किया गया कि उनकी तारीखों में भिन्नता पाई गई थी । 50 प्रतिशत नि:शक्तता दर्शाने वाले प्रमाण पत्र को अधिकरण ने अविश्वसनीय ठहराया है और यह मोटर यान अधिनियम के उपबंधों और इसमें विरचित नियमों के विरुद्ध है । यह निवेदन किया गया है कि पीड़ा और कष्ट, सुख-सुविधाओं की हानि, सुविधाएं, विशेष खान-पान और परिचर फीस के शीर्षक के अधीन अधिनिर्णित प्रतिकर काफी कम है जो बढ़ाया जाए । अपने निवेदन के समर्थन में उसने माननीय उच्चतम न्यायालय के **राजेश कुमार** उर्फ **राजू** बनाम **युद्धवीर सिंह और अन्य,**[1] **श्रीमती सरिता वर्मा और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और अन्य,**[2] **सैयद सादिक और अन्य** बनाम **डिविजनल मैनेजर यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी,**[3] **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य**[4] वाले निर्णयों का अवलंब लिया है । उसने इस

---

[1] मनु./एस.सी./7686/2008 = 2008 (3) टी. ए. सी. 17 (एस. सी.).

[2] मनु./एस.सी./10606/2009 = 2009 ए. सी. जे. 1298.

[3] मनु./एस.सी./0033/2014 = (2014) 2 एस. सी. सी. 735.

[4] मनु./एस.सी./1366/2017 = (2017) 16 एस. सी. सी. 680.

न्यायालय के निर्णय **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड द्वारा डिविजनल मैनेजर** बनाम **मोहम्मद नबी**[1] और **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **अमजद खान और अन्य**[2] के निर्णयों का अवलंब लिया है ।

7. दूसरी ओर प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण के निर्णय को उचित ठहराने का प्रयास किया है । लिखित अभिकथन में उसने यह अभिवाक् किया था कि दावा आवेदन में यान के बीमे की पालिसी सं. और बीमा कंपनी की विधिमान्यता साबित नहीं की गई है । यह अपीलार्थी का उत्तरदायित्व था और उल्लंघनकारी यान के रजिस्ट्रीकृत स्वामी को यह साबित करना था कि दुर्घटना क्वालिस सं. एच. आर. 70-7263 से घटित हुई थी और दुर्घटना के समय भी उक्त यान न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड से बीमाकृत था । दावेदार ने न तो मोटरसाइकिल के रजिस्ट्रीकृत स्वामी को और न ही मोटरसाइकिल की बीमा कंपनी को पक्षकार बनाया है । दुर्घटना के समय उल्लंघनकारी यान/क्वालिस के ड्राइवर के पास विधिमान्य चालन अनुज्ञप्ति (ड्राइविंग लाइसेंस) नहीं था । इसमें यह भी आधार लिया गया है कि यान को उल्लंघनकारी यान के स्वामी के साथ मिलीभगत से जानबूझकर योजना बनाई गई थी कि यान के रूप में प्रतिकर का संदाय करने का दायित्व बदलने के लिए बीमा कंपनी द्वारा बीमाकृत था ।

8. न्यायालय ने प्रश्नगत अभिलेख की जांच की और अपीलार्थी द्वारा क्षति के विवाद्यक पर साक्ष्य प्रस्तुत किए गए और यह पाया गया कि दुर्घटना के समय अपीलार्थी, महुवन/बरारी मथुरा के निकट टोल टैक्स पर सुरक्षाकर्मी के रूप में कार्य करता था । अपीलार्थी ने इसके संबंध में साक्ष्य प्रस्तुत किए हैं कि वह गार्ड के रूप में कार्य करता था और वह प्रति मास 4,000/- रुपए का वेतन पाता था । वह कृषि करके प्रति मास 4,000/- रुपए भी कमाता था और इस प्रकार उसकी मासिक आय 8,000/- रुपए थी । जहां तक उक्त दुर्घटना में अपीलार्थी को पहुंची क्षतियों का संबंध है उसने यह भी कथन किया है कि उसका स्वास्थ्य बहुत ही खराब हो गया था जिसके कारण वह सबसे पहले मथुरा के

---

[1] मनु./यू.पी./0616/2008 = 2008 (72) ए. एल. आर. 620.

[2] मनु./यू.पी./0310/2016.

लाइफलाइन अस्पताल में भर्ती हुआ था और तत्पश्चात् वह दिल्ली के लोक नायक अस्पताल में भर्ती हुआ था । इन क्षतियों के कारण वह 50 प्रतिशत स्थायी रूप से विकलांग हो गया है । इसके अतिरिक्त मानसिक और शारीरिक पीड़ा और उक्त विकलांगता से उसको जीवन में हताशा और निराशा होती जा रही है । उसने यह अभिवाक् किया कि इस नि:शक्तता से उसके कार्य पर प्रभाव पड़ा है जिसके कारण भविष्य में उसकी आय की हानि हुई है । अपीलार्थी ने यह दलील दी है कि अधिकरण ने इस विवाद्यक सं. 4 का विनिश्चय नहीं किया है, क्या अपीलार्थी-दावेदार किसी प्रतिकर का हकदार है और यदि है तो कितने का और किससे लेगा । अपीलार्थी को गंभीर क्षतियां पहुंचीं और उसके द्वारा उपचार कराया गया है, यह चिकित्सा दस्तावेजों और नि:शक्तता प्रमाण पत्र से प्रकट होता है और इसका समर्थन अपीलार्थी दावेदार के मौखिक साक्ष्य से भी होता है । तथापि, अधिकरण ने इस पर विश्वास नहीं किया है कि अपीलार्थी-दावेदार की उक्त दुर्घटना के कारण नि:शक्तता 50 प्रतिशत हो गई है । जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया गया है कि अधिकरण ने उपचार, यातायात, मानसिक और शारीरिक पीड़ा के लिए उपगत खर्चे की प्रतिपूर्ति के लिए मात्र 62,866/- रुपए का प्रतिकर उसे मंजूर किया है ।

9. क्षति के मामले, में प्रतिकर मंजूर किए जाने के संबंध में विधि सुनिश्चित है । क्षतिग्रस्त व्यक्ति धन संबंधी और गैर धन संबंधी नुकसान के लिए हकदार होता है । सामान्यतः धन संबंधी नुकसानी जिसे विशेष नुकसानी भी कहा जाता है, का प्रयोग सामान्य धन की हानि को पूरा करने के लिए आम तौर पर किया जाता है जिसकी मात्रा रुपयों रूप में के संगणित की जा सकती है क्योंकि गैर धन संबंधी नुकसानी गणितीय रीति में निर्धारित करने के लिए अक्षम है । धन संबंधी या विशेष नुकसान सामान्यतः उसके उपचार विशेष खानपान सुविधा और नर्सिंग की लागत, परिचर आय की हानि, कमाने की अक्षमता की हानि और अन्य सामग्री हानि पर दावेदारों द्वारा उपगत खर्चे शामिल होते हैं जो उसके शेष जीवन के लिए विशेष उपचार और बीमाकृत शेष जीवन के लिए अपेक्षित है । साधारण नुकसान और गैर धन संबंधी नुकसान

मानसिक या शारीरिक आघात, पीड़ा, कष्ट, जीवन की सुख सविधाओं की हानि, कुरूपता, संभावित विवाह की हानि, अपेक्षित हानि या जीवन की कमाई, असुविधा, विपत्ति, निराशा, हताशा, मानसिक तनाव, उदास और भविष्य के जीवन में अप्रसन्नता इत्यादि शामिल होती हैं ।

10. **आर. डी. हतंगड़ी** बनाम **पेस्ट कंट्रोल इंडिया प्राइवेट लिमिटेड**[1] वाले मामले में, अधिवक्ता (सेवानिवृत्त न्यायाधीश) के कमर के नीचे के अंगों में सड़क दुघर्टना के परिणामस्वरूप आघात के कारण 100 प्रतिशत निःशक्तता हुई थी । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि कोई भी प्रतिकर की राशि अपीलार्थी के शारीरिक ढांचे को वापस नहीं ला सकती है । इसी प्रकार, कई न्यायालयों ने यह कहा है कि जब कभी किसी दुर्घटना के दौरान कारित किसी क्षति के लिए देय प्रतिकर के रूप में कोई रकम निर्धारित की जाती है तो उसका उद्देश्य ऐसी क्षति की प्रतिपूर्ति करना होता है "जिससे कि धन की प्रतिपूर्ति हो सके" क्योंकि इसमें मानवीय क्षतियों या वैयक्तिक हानि के साथ धन की तुलना करना असंभव है । धन से शारीरिक क्षतियों के भंग या ढांचे का नवीकरण नहीं किया जा सकता है । यह बहुत स्वाभाविक है कि जब कभी अधिकरण या न्यायालय को दुर्घटना के मामले में प्रतिकर की राशि निर्धारित करने की अपेक्षा होती है तो वे अनुमानित कार्यों, काल्पनिक विचारों, कारित निःशक्तता की प्रकृति से जुड़ी कुछ सहानुभूतिक रकमों पर विचार करते हैं । किन्तु उपरोक्त सभी अवयवों को उद्देश्यपरक मानकों के अनुसरण में देखा जाता है । जब प्रतिकर पीड़ा, कष्ट और जीवन की सुख सुविधाओं की हानि के प्रयोजनार्थ प्रतिकर का अधिनिर्णय किया जाता है तब इसमें दावेदार की विशेष परिस्थितियों, जिसमें उसकी आयु, अपूरणीय हानि, उसके अपने भावी जीवन के संबंध में कष्ट आदि सम्मिलित है, को ध्यान में रखा जाता है ।

11. सामान्य हेतुक में, **रजिस्टर्ड सोसाइटी** बनाम **यूनियन ऑफ इंडिया**[2] वाले मामले में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह

---

[1] मनु./एस.सी./0146/1995 = (1995) 1 एस. सी. सी. 551.

[2] मनु./एस.सी./0437/1999 = (1999) 6 एस. सी. सी. 667.

अभिनिर्धारित किया है कि नुकसान के अधिनिर्णय का उद्देश्य वादी को जो हानि, नुकसान या क्षति पहुंची है उसके लिए प्रतिकर देना होता है । न्यायालय ने आगे यह अभिनिर्धारित किया है कि विधि द्वारा मान्यताप्राप्त नुकसानी के तत्व को दो मुख्य समूहों : धन संबंधी और गैर-धन संबंधी हानि में विभाजित किया जाता है । धन संबंधी हानि को संगणित किया जा सकता है और गैर-धन संबंधी हानि इस प्रकार संगणित नहीं की जा सकती । गैर-धन संबंधी हानि की प्रतिपूर्ति मुद्रा के निबंधनों में की जा सकती है, किसी अन्य मुद्रा से प्रतिस्थापित या परिवर्तित नहीं की जा सकती है किन्तु मैक ग्रेगर के अनुसार सामान्यतः यह धन से ऐसी हानि की प्रतिपूर्ति नहीं हो सकती । न्यायालय इससे बेहतर नहीं कर सकता ।

12. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **नागप्पा** बनाम **गुरूदयाल सिंह**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि यदि क्षति पूर्तियों की मात्रा पर मामलों का संग्रहण लाभदायक होता है तो इसे आवश्यक रूप से इस प्रकार वर्गीकृत किया जाना आवश्यक हो जाता है कि समान प्रकार के मामले एक साथ सम्मिलित हो सकें । इसमें संदेह नहीं है दोनों मामले एक जैसे नहीं हो सकते किन्तु फिर भी इसे व्यापक रूप से वर्गीकृत किया जाना संभव है जिसमें एक साथ तुलनात्मक रूप से अधिनिर्णय दिया जा सकता है । क्षतिपूर्ति की संगणना करते हुए मुद्रास्फीति को विचार में लेना चाहिए ।

13. प्रभागीय नियंत्रक, **के. एस. आर. टी. सी.** बनाम **महादेव शेट्टी**[2] वाले मामले में सड़क दुर्घटना के परिणामस्वरूप मेरुदण्ड में गंभीर क्षति के कारण अधरांगघात हुआ था । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिकर मंजूर करने का उद्देश्य कठिनाई कम करना और जहां तक हो सके, दावेदार को उस वित्तीय स्थिति में रखना है जिसमें वह दुर्घटना के पूर्व था । नुकसानी की मात्रा क्षति के अनुसरण में नियत की जानी चाहिए । क्षति के कई परिणाम हो सकते हैं, जैसे

---

[1] मनु./एस.सी./1107/2002 = (2003) 2 एस. सी. सी. 274.

[2] मनु./एस.सी./0529/2003 = (2003) 7 एस. सी. सी. 197.

धनार्जन की क्षमता में हानि, मानसिक सुख की हानि और ऐसी कई पारिणामिक हानियां । कोई व्यक्ति मानसिक और शारीरिक क्षति के लिए नुकसानी पाने का हकदार उस समय हो जाता है जब शारीरिक नि:शक्तता के कारण उसका जीवनकाल कम हो जाता है या वह अपने जीवन का उपभोग करने की स्थिति में नहीं रहता है । अधिनिर्णय न्याय करने के लिए नहीं अपितु पुरस्कार के रूप में दिया जाता है । प्रतिकर का निर्धारण करने हेतु अपनाया गया प्रत्येक तरीका न्यायोचित प्रतिकर के आधार पर होना चाहिए जोकि अत्यंत महत्वपूर्ण है । यद्यपि अभिव्यक्ति "जो न्यायोचित प्रतीत होती हो" का प्रयोग करने में अधिकरण का व्यापक विवेकाधिकार निहित होता है, अवनिर्धारण तर्कसंगत होना चाहिए, न्यायिक सोच द्वारा किया जाना चाहिए न कि अनुमानों, मनमानी कल्पनाओं और तरीकों से । अभिव्यक्ति "न्यायोचित" से समानता, ऋजुता और युक्तियुक्तता प्रकट होती है न कि मनमानेपन से । कोई व्यक्ति दुर्घटना के कारण केवल क्षतियों से ही नहीं अपितु मानसिक और शारीरिक क्षति से भी अपने संपूर्ण जीवन में ग्रसित रहता है और वह महसूस करता है कि वह अब सामान्य व्यक्ति नहीं रहा और अन्य सामान्य व्यक्तियों की तरह वह अपने जीवन की सुविधाओं का उपभोग नहीं कर सकता । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिकर नियत करते समय क्षतिग्रस्त व्यक्ति की आयु, वैवाहिक प्रास्थिति, अप्रायिक हानि आदि जो उसके जीवन में घटित हो सकती हैं, को ध्यान में रखते हुए मानसिक हानि, प्रत्याशित जीवनकाल में कमी, उसके अर्जित करने की क्षमता की हानि, नि:शक्तता की मात्रा और जीवन में सुविधाओं की हानि पर इत्यादि पर विचार करना चाहिए ।

14. उच्चतम न्यायालय ने **निजाम इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइंसेज** बनाम **प्रशांत एस. धनंका**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि पर्याप्त प्रतिकर अवनिर्धारित करते समय पीड़ित की अनुचित तथा युक्तियुक्त मांगों और इसी प्रकार विरोधी पक्ष के कायम

---

[1] मनु./एस.सी./0803/2009 = (2009) 6 एस. सी. सी. 1.

रखे जाने वाले इस दावे के बीच संतुलन रखना चाहिए कि कुछ भी देय नहीं है । तथापि, माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि एक क्षतिग्रस्त और निःशक्त व्यक्ति अत्यधिक दया का पात्र है और वह प्रतिदिन आहत, असहाय, लाचार और निराश महसूस करता है । पीड़ित व्यक्ति को जिस समर्थन की आवश्यकता होती है उसके लिए वह न केवल जूझता है अपितु उसके कुटुंब और उसके परिचारकों को भी जूझना पड़ता है और उनकी ऊर्जा और क्षमता तनाव में नष्ट हो जाती है । मानीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिकर की संगणना करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि दावेदार के उज्जवल भविष्य में कमी हो गई है और अब दावेदार की स्थिति में सुधार होने की कोई संभावना नहीं बची है और उस समय तक दावेदार को स्थायी और युक्तियुक्त प्रतिकर दिया जा सकता है जब तक कि दावेदार स्वयं अर्जित करने की स्थिति में नहीं आ जाता है ।

15. **अरविन्द कुमार मिश्रा** बनाम **न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[1] वाले मामले में सड़क दुर्घटना के परिणामस्वरूप इंजीनियरिंग के अंतिम वर्ष के एक छात्र को 100 प्रतिशत स्थायी निःशक्तता कारित हुई । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि गुणांक पद्धति के अनुसार 70 प्रतिशत तक की कार्यात्मक निःशक्तता को अर्जित करने की दृष्टि से संपूर्ण हानि माना गया है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिकर पर संपूर्ण विचार इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए कि जितना धन वह पूर्व में अर्जित करता उतना अब भी कर सके । प्रतिकर का सटीक संदाय करना संभव नहीं होता है किंतु इस बात को ध्यान में रखते हुए पीड़ित के साथ कुछ भी गलत नहीं हुआ होता यदि अपराध करने वाले ने उसके साथ दुर्घटना कारित न होती, न्यायालय को उस क्षति के लिए ऐसा युक्तियुक्त प्रतिकर प्रदान करना चाहिए जिससे वह ग्रसित हुआ है ।

---

[1] मनु./एस.सी./0777/2010 = (2010) 10 एस. सी. सी. 254.

16. **अरुण सोंधी** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम**[1] वाले मामले में सेंट स्टीफन कालेज, दिल्ली से बी. ए. पाठ्यक्रम में अध्ययनरत् 21 वर्षीय छात्र की सड़क दुर्घटना में टांग कट गई थी और पक्षाघात हो गया था जिसके परिणामस्वरूप उसे 100 प्रतिशत स्थायी निःशक्तता हो गई थी । इस न्यायालय ने प्रतिकर की राशि 8,68,781/- रुपए से बढ़ाकर 19,16,781/- रुपए कर दी थी । निर्णय का सुसंगत भाग निम्नलिखित है :–

> "4. इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि अपीलार्थी अशक्त हो गया था और सदैव के लिए स्थायी रूप से नि:शक्त हो गया था । उसकी स्थायी नि:शक्तता 100 प्रतिशत थी और वह व्हीलचेयर पर अपना जीवन व्यतीत कर रहा था और यह स्वीकृत है कि उसे पक्षाघात हो गया है उसे अपना मल-मूत्र त्यागने में भी परेशानी हो रही थी । उसे पूरे समय चिकित्सीय उपचार और एक परिचारक की आवश्यकता थी जिसमें बार-बार खर्चा होता था । उसकी दशा को शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता है, न ही उसकी पीड़ा, हताशा और उसकी निराशा का आंकलन किया जा सकता है । पिछले वर्ष का एथलीट अपनी जीविका अनुताय कर रहा है जो उसके लिए नरक बनकर रह गई है ।
>
> 5. सुस्पष्टत: कोई भी धनराशि इसकी क्षतिपूर्ति नहीं कर सकती और परिणामस्वरूप कोई भी ऐसा युक्तियुक्त प्रतिकर अवधारित नहीं किया जा सकता जिससे उसके पास जो कुछ था, उसकी क्षतिपूर्ति की जा सके और आगे भी ऐसी स्थिति बनी रहे । लेकिन फिर भी न्यायालयों को अपने कर्तव्यों का इस प्रकार निर्वहन करना चाहिए जिससे कि एक सीमा तक उसकी क्षतिपूर्ति के लिए धनराशि का संदाय किया जा सके । जैसाकि वार्ड **बनाम** जेम्स [165 (1) ए. पी. पी. ई. आर 56] वाले मामले में मत व्यक्त किया गया है –
>
> > 'यद्यपि आप एक इतने गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त व्यक्ति को उसके खोए हुए वर्षों अर्थात् "जीवन के प्रत्याशित वर्षों" को वापस नहीं कर सकते हैं । आप उस समय के दौरान अर्जित

---

[1] मनु./डी.ई./0339/2001 = 1 (2001) ए. सी. सी. 615.

आय की हानि और नर्सिंग उपचार और परिचारक के लिए क्षतिपूर्ति कर सकते हैं । लेकिन आप एक असहाय नि:शक्त की क्षतिपूर्ति कैसे कर सकते हैं । उसने वह सब खो दिया है जो उसके जीवन को सार्थक बनाता । केवल धन से उसका भला नहीं होगा । फिर भी न्यायाधीशों को अपने क्षेत्राधिकार में ऐसा करना चाहिए जो उसके लिए उत्तम हो । कोई आश्चर्य नहीं होगा यदि वे अच्छी तरह से इसका समाधान करते हैं । उनसे बेहिसाब संगणना करने के लिए कहा जाता है । इस संगणना से, विनियम धनराशि के अधिकांश भाग की पूर्ति होनी चाहिए ।'

6. इन सबके संबंध में, वर्तमान मामले में गैर-धन संबंधी नुकसानी का आंकलन करना कठिन है क्योंकि अक्षम और अशक्त अपीलार्थी को जो भी धनराशि अधिनिर्णीत की जाएगी वह उसके क्षतिग्रस्त शरीर और दु:खमय जीवन की भरपाई नहीं करेगी । यदि उसके जीवन की मूल न्यूनतम सुख-सुविधाओं और उपयोग की वस्तुओं को उपलब्ध नहीं कराया जाता है तो कम से कम उसकी समुचित क्षतिपूर्ति की जानी चाहिए ताकि उसके कष्ट और पीड़ा को कम किया जा सके ।

7. *** *** ***

8. *** *** ***

9. इस प्रक्रम पर, हमने ए. के. मिश्रा **बनाम** मुनियाम बाबू (1999) 2 एस. सी. सी. 518 वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय का निर्णय उल्लिखित किया है जिसमें 23 वर्षीय नवयुवक को 5 लाख रुपए अधिनिर्णीत किए हैं जिसकी ऐसी ही परिस्थितियों में सड़क दुर्घटना में क्षतिग्रस्त हुई थी । किन्तु इस निर्णय में किसी भी प्रकार से गंभीर दुर्घटना के मामले में, गैर-धन संबंधी नुकसानी के अधिनिर्णय के बारे में कोई सामान्य सिद्धांत अधिकथित नहीं किया गया है । ऐसे मामलों में दुर्घटना में पीड़ित के साथ सहानुभूति होते हुए भी क्षतिपूर्ति का अवधारण प्रत्येक

मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा । हम इस तथ्य के प्रति भी सचेत हैं कि ऐसे मामलों में प्रतिकर का अवधारण वस्तुनिष्ठ मानकों पर आधारित होता है न कि किसी काल्पनिक या गणना पर । चूंकि इसमें कुछ हद तक अनुमान अनुज्ञेय है, इसलिए अपीलार्थी के चिकित्सा व्यय और देखभाल में उपगत खर्चों के लिए उपबंध बनाने में कोई कठिनाई नहीं हुई और हम यह महसूस करते हैं कि इसके लिए संगणित प्रतिकर, रूढ़िवादी संगणना पर आधारित था ।"

17. **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **सेंथील कुमार**[1] वाले मामले में सड़क दुर्घटना में पीड़ित, अस्थि भंग, मेरु रज्जु का संपीड़न और अंगों के पक्षाघात से ग्रसित हो गया था जिसके परिणामस्वरूप वह 100 प्रतिशत नि:शक्त हो गया था । मद्रास उच्च न्यायालय ने क्षतिपूर्ति की रकम को 8,53,000/- रुपए से बढ़ाकर 9,60,000/- रुपए कर दिया । निर्णय का सुसंगत भाग इस प्रकार है :–

"11. इस मामले में क्षतिग्रस्त दावेदार अस्थि भंग और मेरु रज्जु के संपीड़न से ग्रसित था और उसका उपचार लकवाग्रस्त रोगी के रूप में किया गया । वेबस्टर शब्दकोश के अनुसार, व्यक्ति का लकवाग्रस्त होने का अर्थ "मेरु रज्जु की क्षति के परिणामस्वरूप सामान्यत: शरीर के निचले लगभग आधे भाग का संपूर्णत: लकवाग्रस्त होना है ।" इस मामले में नि:शक्तता का अवधारण प्रदर्श (क)-12 के अधीन किया गया है जो 100 प्रतिशत है और इसमें कोई विवाद नहीं है । इसलिए गुणांक पद्धति को अपनाना समुचित होगा । **चोलन रोडवेज कारपोरेशन** वाले मामले में, पूर्ण खंड न्यायपीठ के मत को ध्यान में रखते हुए, दो शीर्षकों के अधीन अर्थात् अर्जित करने की शक्ति की हानि और नि:शक्तता के लिए क्षतिपूर्ति मंजूर नहीं की जा सकती ।

16. इस न्यायालय की खंडपीठ ने यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लि. **बनाम** वेलूचम्मी (2005) 1 सी. टी. सी. 38 वाले

---

[1] मनु./टी.एन./1243/2008 = (2009) 2 एल. डब्ल्यू. 767.

मामले में न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने उन सभी मामलों के उन मापदंडों को स्थापित किया जिनका प्रयोग यह पता लगाने में किया जाता है कि क्षति के मामले में गुणांक पद्धति कब अपनाई जानी चाहिए । निर्णय का पैरा 11 इस प्रकार है –

11. उपरोक्त चर्चा से निम्नलिखित सिद्धांत प्रकट होते हैं –

(क) क्षति या स्थायी नि:शक्तता के उन सभी मामलों में, आय या अर्जित शक्ति में भावी हानि को सुनिश्चित करने के लिए "गुणांक पद्धति" को तकनीकी तौर पर लागू नहीं किया जा सकता ।

(ख) यह कतिपय कारकों पर निर्भर करता है जैसे नि:शक्तता की प्रकृति और सीमा, क्षतिग्रस्त का व्यवसाय और क्या यह उसके नियोजन या अर्जन शक्ति इत्यादि को प्रभावित करेगा और यदि ऐसा है तो किस सीमा तक ?

(ग) (i) यदि यह सुस्पष्ट साक्ष्य है कि क्षति के कारण नि:शक्तता के परिणामस्वरूप क्षतिग्रस्त ने अपना नियोजन या व्यवसाय पूर्ण रूप से खो दिया है और उसे अपने शेष जीवन में निष्क्रिय रहना पड़ेगा तो उसे उस स्थिति में आय या अर्जन करने की हानि को 1988 के मोटर यान अधिनियम, 1988 की द्वितीय अनुसूची के अधीन यथा उपबंधित "गुणांक पद्धति" को लागू करके सुनिश्चित किया जा सकता है ।

(ii) फिर भी अनुसूची के अधीन यथाउपबंधित गंभीर मामलों में जो अवधि अपनाई जाती है उस अवधि को लागू करने की आवश्यकता नहीं है । यदि कोई अंग विच्छेदन नहीं है और यदि यह दर्शित करने के लिए साक्ष्य है कि भावी वर्षों में कमी या सुधार होने की संभावना है तो लघु अवधि, आय की हानि को सुनिश्चित करने के लिए लागू की जा सकती है ।

(घ) मुख्य रूप से यह दुर्घटना के समय पर क्षतिग्रस्त द्वारा किए जा रहे व्यवसाय वृत्ति या नियोजन प्रकृति पर निर्भर करता है ।”

(बलपूर्वक जोर दिया गया)

18. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **राजकुमार** बनाम **अजय कुमार**[1] वाले मामले में एक दुर्घटना में हुई शारीरिक नि:शक्तता और इसके परिणामस्वरूप अर्जित करने की क्षमता की हानि के बारे में विस्तारपूर्वक विचार किया । इस मामले में, निर्णय के पैरा 10, 11 और 13 में इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया :–

“10. जहां दावेदार क्षतियों के परिणामस्वरूप स्थायी नि:शक्तता से ग्रसित है, वहां भावी अर्जन क्षमता की हानि शीर्षक के अधीन प्रतिकर का निर्धारण, उसकी अर्जित क्षमता पर ऐसी स्थायी नि:शक्तता के प्रभाव पर निर्भर करेगा । अधिकरण को तकनीकी रूप से आर्थिक हानि की प्रतिशतता या अर्जित क्षमता की हानि के परिणामस्वरूप स्थायी नि:शक्तता की प्रतिशतता को लागू नहीं करना चाहिए । अधिकतर मामलों में, आर्थिक हानि की प्रतिशतता अर्थात् अर्जन क्षमता की हानि की प्रतिशतता जो स्थायी नि:शक्तता से उद्भूत होती है, स्थायी नि:शक्तता की प्रतिशतता से भिन्न होती है । कुछ अधिकरण गलत रूप से यह उपधारणा करते हैं कि सभी मामलो में, स्थायी नि:शक्तता एक विशिष्ट सीमा (प्रतिशतता), अर्जन क्षमता की हानि के तत्स्थानी होती है, यदि प्रस्तुत साक्ष्य से 45 प्रतिशत तक स्थायी नि:शक्तता दर्शित होती है, तो यह अभिनिर्धारित करना होगा कि इससे भावी अर्जन क्षमता की 45 प्रतिशत की हानि होगी । अधिकतर मामलों में, स्थायी नि:शक्तता की सीमा (प्रतिशतता) तक अर्जन करने की हानि की सीमा (प्रतिशतता) की तुलना करने का परिणाम अत्यधिक कम या अत्यधिक उच्च प्रतिकर का अधिनिर्णय होता है ।

11. अधिकरण द्वारा यह निर्धारित किए जाने की आवश्यकता

---

[1] मनु./एस.सी./1018/2010 = (2011) 1 एस. सी. सी. 343.

है कि क्षतिग्रस्त की अर्जन क्षमता पर स्थायी नि:शक्तता का क्या प्रभाव है और आय की प्रतिशतता के निबंधनों में अर्जन क्षमता की हानि अर्जन की हानि अवधारित करने में प्रयुक्त मानक गुणांक पद्धति लागू करते हुए निर्धारित करने के पश्चात् इसे धन के निबंधनों में मात्रा इंगित करनी चाहिए ताकि भावी अर्जन हानि पर निष्कर्ष निकाला जा सके । तथापि, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि कुछ मामलों में साक्ष्य और निर्धारण की विवेचना करने पर, अधिकरण यह पाते हैं कि स्थायी नि:शक्तता के परिणामस्वरूप, अर्जन क्षमता की हानि की प्रतिशतता लगभग उसी मामले में स्थायी नि:शक्तता की प्रतिशतता के समान होती है । (उदाहरण के लिए, इस न्यायालय के निर्णय अरविंद कुमार मिश्रा **बनाम** न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड [(2010) 10 एस. सी. सी. 254] और यादव कुमार **बनाम** नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड [(2010) 10 एस. सी. सी. 341] को देखें) ।

13. वास्तविक अर्जन क्षमता पर स्थायी नि:शक्तता के प्रभाव को सुनिश्चित करने के तीन उपाय हैं । अधिकरण को सर्वप्रथम यह सुनिश्चित करना होता है कि क्या दावेदार, स्थायी नि:शक्तता के बावजूद अपने क्रियाकलापों को कर सकता है और क्या वह स्थायी नि:शक्तता के परिणामस्वरूप ऐसा नहीं कर सकता (यह भी जीवन की सुख-सुविधाओं की हानि की श्रेणी के अधीन प्रतिकर अधिनिर्णीत करने के लिए सुसंगत है) दूसरा उपाय दुर्घटना से पूर्व उसके कार्य की प्रकृति, व्यवसाय, वृत्ति और उसकी आयु भी सुनिश्चित करना है । तीसरा उपाय यह निष्कर्ष निकालना है कि क्या (i) दावेदार आजीविका के लिए अर्जन करने हेतु पूर्णत: नि:शक्त हो गया है, या (ii) क्या स्थायी नि:शक्तता के बावजूद दावेदार अपने उन क्रियाकलापों और कृत्यों को प्रभावी रूप से जारी रखा जा सकता है जो वह पूर्व में कर सकता था (iii) क्या वह अपने पूर्ववर्ती क्रियाकलापों और कृत्यों का निर्वहन करने से अवरुद्ध या निर्बंधित हो गया है किन्तु वह कुछ अन्य या अपने छोटे-मोटे क्रियाकलापों को थोड़ा बहुत जारी रख सकता है ताकि वह अपनी आजीविका के लिए अर्जन कर सके या अर्जन करना जारी रख सके ।

19. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **राजकुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में की गई पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों की पुनरावृत्ति **गोविन्द यादव** बनाम **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड**[1] वाले मामले में की गई है, जो इस प्रकार है :-

> "14. मोटर यान अधिनियम, 1988 का उपबंध यह स्पष्ट करता है कि अधिनिर्णय न्यायोचित होना चाहिए जिसका अर्थ यह है कि प्रतिकर, जहां तक संभव हो, दावेदार को दुर्घटना के पूर्व की स्थिति में पूर्णतः और पर्याप्त रूप में पुनः स्थापित कर सके । नुकसान का अधिनिर्णय करने का उद्देश्य गलत रीति के परिणामस्वरूप हुए पीड़ित के नुकसान की भरपाई करना है और इसकी भरपाई धनराशि द्वारा निष्पक्ष, युक्तिसंगत उचित रीति से की जा सकती है । न्यायालय या अधिकरण को निष्पक्ष रूप से नुकसान का निर्धारण किसी कल्पना को छोड़कर नहीं करना होगा हालांकि नि:शक्तता की प्रकृति के संदर्भ में मात्र अनुमान लगाना और उसके परिणाम को नियत करना अपरिहार्य है । किसी व्यक्ति को मात्र शारीरिक क्षति के लिए ही नहीं बल्कि उस हानि के लिए भी प्रतिकर दिया जाना चाहिए जिसके फलस्वरूप वह क्षतिग्रस्त हुआ है । इसका अर्थ यह है कि उसे संपूर्ण जीवन जीने में उसकी असमर्थता के लिए और उन सामान्य सुख-सुविधाओं के प्रयोजनार्थ प्रतिकर दिया जाना चाहिए जिन्हें वह क्षतिग्रस्त न होने पर पाता और आगे जितना अर्जित करता या कर सकता था, उसके लिए भी प्रतिकर दिया जाना चाहिए । जिन मदों के अधीन प्रतिकर अधिनिर्णीत किया जाता है, वे निम्न प्रकार हैं –
>
> **आर्थिक हानि (विशेष हानि)**
>
> (i) उपचार, अस्पताल भर्ती, औषधि, परिवहन, पौष्टिक भोजन और प्रकीर्ण खर्चे से संबंधित व्यय ।
>
> (ii) आमदनी की हानि (और अन्य लाभ) जो उस समय होते जब वह क्षतिग्रस्त नहीं था जिसमें –

---

[1] मनु./एस.सी./1281/2011 = 2012 (1) टी. ए. सी. 1 (एस. सी.).

(क) उपचार की अवधि के दौरान आमदनी की हानि ।

(ख) स्थायी नि:शक्तता के कारण भविष्य आमदनी की हानि ।

(iii) भविष्य में होने वाले चिकित्सा खर्चे ।

गैर-आर्थिक हानि (सामान्य हानि)

(iv) क्षतियों के परिणामस्वरूप पीड़ा, कष्ट और ट्रोमा की हानि ।

(v) सुख-सुविधाओं की हानि (और/या विवाह की संभावना की हानि) ।

(vi) जीवन की अपेक्षा की हानि (सामान्य दीर्घायु का छोटा होना) । नियमित व्यक्तिगत क्षति के मामलों में, प्रतिकर केवल शीर्षक (1), (2)(क) और (4) बिन्दुओं के अधीन विनिश्चित होगा । यह केवल क्षति के गंभीर मामलों में होता है, जहां दावेदार के साक्ष्य की पुष्टि करने वाला ऐसा विशिष्ट चिकित्सा साक्ष्य है, कि प्रतिकर स्थायी नि:शक्तता के कारण भविष्य की आमदनी की हानि, भविष्य के चिकित्सा खर्चे, सुख-सुविधाओं की हानि (और/या विवाह की संभावना की हानि) और जीवन की अपेक्षा की हानि से संबंधित (I)(ख),(III), (IV) और (VI) बिन्दुओं के अधीन मंजूर किया जाएगा ।

15. हमारा मत है कि अरविंद कुमार मिश्रा **बनाम** न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (उपरोक्त) और राजकुमार **बनाम** अजय कुमार (उपरोक्त) वाले मामलों में अधिकथित विधि के सिद्धान्तों का अनुसरण दुर्घटना में ऐसे पीड़ित को संदत्त किए जाने वाले प्रतिकर की मात्रा निर्धारित करने में सभी अधिकरणों और उच्च न्यायालयों द्वारा किया जाना चाहिए, जो स्थायी या अस्थायी दोनों प्रकार से नि:शक्त हो गया है । यदि दुर्घटना में कोई पीड़ित स्थायी नि:शक्तता से क्षतिग्रस्त होता है, तो पर्याप्त प्रतिकर विनिश्चित करने के लिए सदैव न कि केवल शारीरिक क्षति और उपचार के लिए प्रयत्न करने चाहिएं, अपितु अर्जन की हानि और सामान्य

जीवन और सुख-सुविधाओं सहित आनंदपूर्वक जीने के लिए उसकी अक्षमता, जिससे वह जीवन का उपभोग तक करता जब दुर्घटना कारित नहीं हुई होती, को भी विचार में लेना चाहिए ।

20. **डा. दत्तात्रय लक्ष्मण शिंदे** बनाम **नाना रघुनाथ हिरे**[1] वाले मामले में, एक नवयुवक मोटर दुर्घटना में लकवाग्रस्त हो गया था । लकवा से थोरेसिक-12 ने नीचे प्रेरक और संवेदी दोनों तन्त्रिकाएं संपूर्ण मूत्राशय और आंत सहित प्रभावित हो गई थीं । बॉम्बे उच्च न्यायालय ने निम्नलिखित **आर. डी. हतंगड़ी** (उपरोक्त) और **राजकुमार** (उपरोक्त) मामलों में प्रतिकर की राशि 8,85,000/- रुपए से बढ़ाकर 34,50,000/- रुपए कर दी थी । निर्णय का सुसंगत भाग इस प्रकार है :–

> "23. वर्तमान मामले में, अपीलार्थी कभी भी चिकित्सक का व्यवसाय करने में सक्षम नहीं होगा । वह शारीरिक नि:शक्तता के कारण प्राध्यापक के रूप से निरंतर कार्य करने में सक्षम नहीं होगा । इसके अलावा, अपीलार्थी की ओर से परीक्षा कराए गए साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि अपीलार्थी के पास प्राध्यापक के पद हेतु अर्हता नहीं है चूंकि उसके पास स्नातकोत्तर की डिग्री नहीं है । वह कोई आय अर्जन करने में अक्षम है । इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए किसी तर्क की आवश्यकता नहीं है कि अर्जन करने की क्षमता को लेकर यह 100 प्रतिशत हानि का मामला है । वर्ष 1993 में, अपीलार्थी की आय प्राध्यापक के रूप में लगभग 4,200/- रुपए थी । अपीलार्थी का शैक्षणिक अभिलेख उत्तम था । इससे यह स्पष्ट होता है कि अपीलार्थी की 4,200/- रुपए से अधिक आय रही होगी । इस तरह के मामले में, प्रतिकर निर्धारण करने के अभ्यास में सदैव अनुमान लगाने के तत्व शामिल होते हैं । अपीलार्थी के शैक्षिक अभिलेख को देखते हुए, युक्तिसंगत आय 6,000/- रुपए प्रतिमास मानी जा सकती है । 18 का गुणांक लागू करना होगा चूंकि दुर्घटना की तारीख को अपीलार्थी की आयु लगभग 25 वर्ष थी ।

---

[1] मनु./एम.एच./1265/2011 = (2011) 5 महा. एल. जे. 854.

18 का गुणांक लागू करते हुए, आय की हानि 12,96,000/- (6,000×12×18) रुपए हो सकती है । जैसा पूर्व में इंगित किया है, अपीलार्थी का नीचे की कमर का संपूर्ण शरीर लकवाग्रस्त हो गया है और उसका मूत्राशय और मल त्याग करने पर नियंत्रण नहीं है । उसे नियमित रूप से केथीटराइजेशन की आवश्यकता होती है । जैसाकि डाक्टर जोशी द्वारा उल्लिखित किया गया है उसे 24 घंटे एक परिचारक की आवश्यकता होती है । यदि परिचारक 200/- रुपए प्रतिदिन के अनुमान के हिसाब से अपना शुल्क लेता है तब भी उसका शुल्क 6,000/- रुपए प्रतिमास बनेगा । गुणांक पद्धति को अपनाते हुए, कुल धनराशि 12,96,000/- रुपए बनेगी ।

24. जहां तक चिकित्सा उपचार पर खर्चों के दावे का संबंध है, अभिलेख पर यह लाया गया है कि अपीलार्थी पुणे के तीन विभिन्न अस्पतालों में और काराड और सतारा के अस्पतालों में भर्ती कराया गया था । अभिलार्थी दो मास से अधिक की अवधि तक कोयम्बतूर के संस्थान में भी भर्ती था । अत्यधिक खर्च, यात्रा और नातेदारों के निवास और अपीलार्थी के मित्रों पर किया गया होगा । अपीलार्थी की दवाओं, उपचार, विशेष आहार और नातेदारों और मित्रों के यात्रा व्यय और निवास पर खर्चे से संबंधित बिल अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए हैं । इसमें दस्तावेजों की चार सूची 85/1 से 85/4 के रूप में चिह्नित की हैं । इसके साथ उक्त चार सूची जैसे बिल, वाउचरों के रूप में मूल दस्तावेज अभिलेख पर प्रस्तुत किए गए हैं । जैसाकि अपेक्षित था, प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा किसी भी दस्तावेज को स्वीकृत नहीं किया गया है । शायद प्रत्यर्थी सं. 3 यह चाहता था कि दस्तावेज साबित किए जाने के प्रयोजनार्थ बड़ी संख्या में साक्षियों की परीक्षा की जानी चाहिए । मुख्य परीक्षा के दौरान अपीलार्थी ने सभी बिलों और वाउचरों को निर्दिष्ट किया है । अधिनियम के अधीन गठित अधिकरण साक्ष्य के नियमों का सख्ती से पालन करने के लिए बाध्य नहीं है । इसलिए, उक्त बिलों और वाउचरों को विशिष्ट मामलों की अनुपस्थिति में विचार में लिया

जाना चाहिए था कि दस्तावेज मनगंढ़त थे । कुल राशि उक्त बिलों और वाउचरों से 1,54,526/- रुपए बनती है जिसको 1,55,000/- रुपए पूर्णांकित किया जा सकता है । इसलिए अधिकरण द्वारा कुर्सी, पानी, बिस्तर आदि के रूप में ऐसे उपकरण कम करने के प्रयोजनार्थ पृथक् धनराशि विनिश्चित नहीं की जा सकती है ।

25. डाक्टर जोशी के साक्ष्य से उपदर्शित होता है कि अपीलार्थी को निरन्तर उपचाराधीन रहना होगा । डाक्टर जोशी ने यह अधिकथित किया कि ऐसे मरीज जो लकवाग्रस्त हैं वह अन्य कई बीमारियों से भी पीड़ित हो सकते हैं । उपरोक्त पैरा 5 में, भविष्य में अपेक्षित उपचार से संबंधित डाक्टर जोशी का उल्लिखित बयान प्रस्तुत किया गया है । डाक्टर जोशी ने कहा कि यह माना जाता है कि लकवाग्रस्त रोगियों को गंभीर अवसाद हो जाता है और कभी-कभी तो आत्महत्या भी कर लेते हैं । लकवाग्रस्त की दोनों टांगों और पीठ में गंभीर दर्द होता है जो मूलरूप से तंत्रिका संबंधी रोग है । इसके अतिरिक्त, वे मूत्राशय के कई प्रकार के संक्रमण से पीड़ित होते हैं जिसके कारण वृक्कों में अत्यधिक संक्रमण हो सकता है और तंत्रिकाएं निर्बल होने के कारण दोनों टांगों में भी शिथिलता आ सकती है । इसके अलावा जो रोगी पूर्व में घूमता-फिरता था उसे अब भविष्य व्यर्थ दिखाई देता है और आत्महत्या के बारे में सोच सकता है । तंत्रिका संबंधी उत्तेजना से दोनों टांगों में गंभीर दर्द हो सकता है । उपरोक्त अधिकथित सभी लक्षण उक्त रोगी में दिखाई दिए थे । इस पीड़ा को दूर करने के लिए मैजटोल की टेबलेट (औषधि) अर्थात् एंटीएपीलिप्टिक औषधि दी जाती है । इस दवा के दुष्परिणाम मुख्य रूप में अवसाद के साथ ड्रोउजिनेस, ग्रौस्टिक जलन हैं । यह शरीर में मल्टीविटामिन की कमी सहित भूख न लगने की स्थिति पैदा करता है । रोगी को इस प्रकार के उच्च प्रोटीन आहार के साथ-साथ मल्टीविटामिन के पूरक की आवश्यकता होती है । इन रोगियों को समय-समय पर पेशाब करने हेतु केथीराइजेशन की आवश्यकता होती है । इसके संक्रमण को कई

प्रयास से ठीक किया जा सकता है जिसमें उच्च एंटीबायोटिक औषधि दी जाती है । इन रोगियों को सोते समय टांगों और नितंबों पर दबाव से बचाने के लिए वाटर बेड की आवश्यकता होती है । इसके अतिरिक्त रोगी नियमित रूप से मल त्याग करने के लिए एनीमा और मल्टीविटामिन के साथ उच्च आहार प्रोटीन की आवश्यकता होती है । उन्हें दोनों निचले अंगों के लिए फिजियोथैरिपी की आवश्यकता भी होती है । आमतौर पर रात में, रोगी को सोने में सहायता के लिए ट्रेंक्विलाहजर दिए जाते हैं । कभी-कभी कुछ रोगियों में निचले अंगों में ऐंठन होती है जो अक्सर 4 से 6 वर्ष के बीच विकसित होती है और जिसके लिए ट्रेंक्विलाहजर दिया जाता है । फूट-सप्लीमेन्ट के रूप में रेशे और प्रोटीन की प्रचुर मात्रा दी जाती है । अधिकरण ने उपचार पर भविष्य खर्चे के प्रयोजनार्थ केवल 1,00,000/- रुपए की धनराशि मंजूर की है । अपीलार्थी को भविष्य में औषधियों और व्हीलचेयर, वाटर बेड, मूत्र निस्सारक आदि जैसे उपकरणों के लिए खर्च में अधिक धनराशि की आवश्यकता होगी । मोटे तौर पर अनुमान लगाने पर, उक्त राशि 2,50,000/- रुपए से कम नहीं किया जा सकता है ।

26. वास्तविक समस्या गैर-धन संबंधी हानि को निर्धारित करने में है क्योंकि गैर-धन संबंधी हानि निर्धारित करने का कोई नियत मानक नहीं है । इस तरह के मामलों में जहां पीड़ित लकवाग्रस्त होता है गैर-धन संबंधी हानि का आंकलन निम्नलिखित शीर्षकों के अधीन किया जाएगा –

(i) पीड़ा और कष्ट ;

(ii) जीवन की सुख-सुविधाओं की हानि ; और

(iii) विवाह की संभावनाओं की हानि या नुकसान । जहां तक प्रथम दो मदों का संबंध है, लकवा से पीड़ित होते हैं, बच्चों या नौजवान व्यक्ति के मामलों में धनराशि की हकदारी वृद्ध व्यक्तियों की अपेक्षाकृत अधिक होनी चाहिए । इसलिए ऐसे मामलों में इस न्यायालय और उच्चतम न्यायालय द्वारा

निर्धारित की गई धनराशि में भिन्नता है । अपने अनेकों निर्णयों में उच्चतम न्यायालय और इस न्यायालय ने अत्यधिक धनराशि के लिए प्रथम दो शीर्षकों के अधीन कम से कम 1,00,000/- रुपए या उससे अधिक राशि मंजूर की है । **निजाम इंस्टीट्यूट आफ मेडिकल साइंसेज** (उपरोक्त) वाले मामले में, जहां उच्चतम न्यायालय ने उपभोक्ता निवारण फोरम द्वारा पारित किए गए आदेश से उद्भूत मामले का समाधान किया था जिसमें 10,00,000/- रुपए की बहुत अधिक धनराशि पीड़ा और कष्ट के लिए मंजूर की गई है । वह मामला एक इंजीनियर छात्र का था जिसकी आयु 20 वर्ष थी, जो चिकित्सा की उपेक्षा से पीड़ित था । उच्चतम न्यायालय के समक्ष मामला नौजवान छात्र का था जो लकवा से पीड़ित होने से व्हीलचेयर पर आ गया और अंततः उसने उत्तम वेतन के साथ आई. टी. इंजीनियर के रूप में नियोजन प्राप्त कर लिया था । न्यू इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** श्वेता दिलीप मेहता (उपरोक्त) वाले मामले में खंड न्यायपीठ के निर्णय का अवलंब लिया गया । इस न्यायालय ने 11 वर्ष के अवयस्क बच्चे को पहुंची क्षतियों का समाधान किया जिसमें वह दुर्घटना की क्षतियों के कारण लकवाग्रस्त हो गया था । मामले के तथ्यों के आधार पर इस न्यायालय ने पीड़ा और कष्ट के कारण 4,00,000/- रुपए की कुल धनराशि मंजूर की थी । वर्तमान मामले में जीवन की सुख-सुविधाओं की हानि के कारण उच्चतम न्यायालय द्वारा **राजकुमार** (उपरोक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित मत के अनुसार प्रतिकर मंजूर नहीं किया जा सकता है । निर्णय के पैरा 15 में, उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि –

"15. इसमें यह उल्लेख किया जा सकता है कि जब भविष्य अर्जन क्षमता की हानि के लिए प्रतिकर 100 प्रतिशत या 50 प्रतिशत से अधिक विनिश्चित किया है, सुख-सुविधाओं की हानि या जीवन की अपेक्षा की हानि के शीर्षक के अधीन पृथक् रूप से प्रतिकर विनिश्चित करने की आवश्यकता

अन्तर्धान हो जाए और इसके परिणामस्वरूप टोकन या नाममात्र धनराशि सुख-सुविधाओं की हानि या जीवन की अपेक्षा की हानि के शीर्षक के अधीन विनिश्चित किया जाना चाहिए, चूंकि अन्यथा इसके प्रतिकर के अधिनिर्णय में आवृत्ति हो सकती है । जैसा हो सकता है वैसा रहने दें ।" (बल दिया गया)

27. उच्चतम न्यायालय ने प्रभागीय नियंत्रक, कर्नाटक राज्य सड़क परिवहन निगम **बनाम** महादेव शेट्टी (उपरोक्त) वाले मामले में समान क्षतियों के लिए 1,00,000/- रुपए की धनराशि मंजूर की थी । अन्ततोगत्वा धनराशि प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करती है । यह पीड़ित की आयु, उसकी सामाजिक और वैवाहिक स्थिति, तथा उसकी कुटुंब पृष्ठभूमि आदि पर निर्भर होगी । इसकी अनदेखी नहीं की जा सकती है कि अपीलार्थी जैसा नौजवान व्यक्ति जो कि लकवाग्रस्त हो गया है वह मानसिक रूप से ग्रसित होगा और दिए गए मामले में, ऐसा व्यक्ति मानसिक रूप से विकृत ही है । शरीर के नीचे के अंगों का पक्षाघात (लकवा) अपीलार्थी जैसे व्यक्ति के दिमाग पर गंभीर प्रभाव डाल सकता है जिसका प्रतिभाशाली शैक्षिक केरियर रहा है और जिसका लक्ष्य आयुर्वेद चिकित्सा में स्नात्तकोत्तर अध्ययन करना था । यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि दुर्घटना वर्ष 1993 में घटित हुई थी । अपीलार्थी दुर्घटना के समय अविवाहित था । अपीलार्थी पर माता और दो छोटे भाइयों सहित कुटुंब का उत्तरदायित्व था । इन सभी कारकों का प्रभाव विचार में लिया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय और इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा इस आधार पर मंजूर की गई धनराशि 1,00,000/- से बढ़ाकर 4,00,000/- रुपए की गई है । इस मामले के तथ्यों पर विचार करते हुए, पीड़ा और कष्ट के लिए प्रतिकर 3,75,000/- रुपए निर्धारित किए जाने योग्य है । जैसाकि प्रतिकर अर्जन क्षमता की 100 प्रतिशत की हानि के लिए मंजूर पृथक् किया गया है । धनराशि जीवन की सुख-सुविधाओं की हानि

के लिए मंजूर नहीं की जा सकती है । मंडल नियंत्रक, कर्नाटक राज्य सड़क परिवहन निगम **बनाम** महादेव शेट्टी (उपरोक्त) वाले मामले में, उच्चतम न्यायालय ने विवाह की संभावनाओं की पूर्ण हानि के लिए अधिकरण द्वारा मंजूर की गई 75,000/- रुपए की धनराशि का अनुमोदन किया है । यह धनराशि मंजूर किए जाने योग्य है ।

28. जहां तक इस न्यायालय का संबंध है, इस निर्णय के साथ एक लम्बे समय से चल रहे मुकदमे का अंत हो गया है । अपील के खर्चे के रूप में 20,000/- रुपए निर्धारित किया जाता है ।

29. इस प्रकार, अपीलार्थी निम्नलिखित प्रतिकर पाने का हकदार है –

(क) आय की हानि 12,96,000/- रुपए ।

(ख) परिचारक की लागत 12,96,000/- रुपए ।

(ग) औषधि, उपचार, सुविधा पर खर्च 1,55,000/- रुपए ।

(घ) पीड़ा और कष्ट के कारण प्रतिकर 3,75,000/- रुपए ।

(ङ) विवाह की संभावनाओं की हानि के कारण प्रतिकर 75,000/- रुपए ।

(च) भविष्य में चिकित्सा खर्च के कारण प्रतिकर 2,50,000/- रुपए ।

इस प्रकार, कुल प्रतिकर 34,47,000/- रुपए होना चाहिए । यह आंकड़ा 34,50,000/- रुपए के आस-पास हो सकता है ।

30. अधिकरण द्वारा 8,85,000/- रुपए की धनराशि पर विचार करने के 25,65,000/- रुपए की बढ़ोतरी का हकदार होगा । जहां तक 2,50,000/- रुपए की धनराशि का संबंध है, ब्याज दुर्घटना की तारीख से देय नहीं होगा बल्कि इस निर्णय की तारीख

से देय होगा । शेष बढ़ी हुई धनराशि 23,15,000/- रुपए पर ब्याज 7.5 प्रतिशत वार्षिक की दर से मंजूर किया जाता है ।

21. **ऋतु** बनाम **क्षेत्रीय मैनेजर उत्तरांचल राज्य सड़क परिवहन निगम**[1] वाले मामले में एक छह वर्ष का बच्चा 80 प्रतिशत नि:शक्तता के कारण लकवाग्रस्त हो गया था । इस न्यायालय ने क्षति के मामले में प्रतिकर अधिनिर्णीत करने के संबंध में निर्णयज विधि के आधार पर उसे 41,19,928/- रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया ।

22. अधिकरण ने कोई युक्तियुक्त कारण समनुदेशित किए बिना यह निष्कर्ष निकालने में त्रुटि की है कि दावेदार भी कोई दुर्घटना के लिए योगदायी था । दुर्घटना में दावेदार की योगदायी उपेक्षा को किसी भी समय बीमा कंपनी द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करके साबित नहीं किया गया है । दावेदार ने अस्पतालों और चिकित्सा खर्चों के लिए अपने दावे के समर्थन में सुसंगत सभी चिकित्सा बिलों को भी साबित किया है । दावेदार के सुसंगत फोटोग्राफ अभिलेख पर भी संलग्न हैं जिससे पता चलता है कि दावेदार की एक टांग भी दुर्घटना में छोटी हो गई है । दुर्घटना में योगदायी उपेक्षा की सीमा के मामले पर, अधिकरण ने विवाद्यक सं. 1 और नज़रा नक्शा तथा बीमा कंपनी के विद्वान् काउंसेल के स्वीकृत बयान पर विचार किया है, जिन्होंने यह अभिवाक् किया था कि उल्लंघनकारी यान (क्वालिस) की मोटरसाइकिल से टक्कर होने के कारण दुर्घटना घटित हुई और मोटरसाइकिल सड़क के मध्य में थी । हालांकि अधिकरण द्वारा इस पहलू पर विचार नहीं किया गया है परन्तु फिर भी बीमा कंपनी के काउंसेल द्वारा लिया गया आधार स्वीकृत किया गया और उल्लंघनकारी यान को 80 प्रतिशत की सीमा तक दुर्घटना के लिए योगदायी ठहराया था और अपीलार्थी-दावेदार को भी 20 प्रतिशत की सीमा तक दुर्घटना के लिए योगदायी ठहराया था । यह स्वीकृत परिस्थिति है कि उल्लंघनकारी यान ने पीछे से मोटरसाइकिल को टक्कर मारी थी । इसलिए, मैं यह अभिनिर्धारित करता हूं कि अपीलार्थी/दावेदार का दुर्घटना में योगदान, बीमा कंपनी द्वारा साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए

---

[1] मनु./डी.ई./6063/2012 = 2014 ए. सी. जे. 1133.

साबित नहीं किया गया है और इसलिए योगदायी उपेक्षा के बाबत अधिकरण का निष्कर्ष अपास्त किया जाता है । (सैय्यद सादिक और अन्य **बनाम** डिवीजनल मैनेजर, यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी (उपरोक्त) वाला मामला देखें) ।

23. अधिकरण ने अभिलेख विशेषकर दावेदार-अपीलार्थी के चिकित्सा इतिहास को प्रतिकूल कार्यवाही की है । सामग्री का मूल्यांकन करने के अनुक्रम में, जिन्हें अधिकरण के समक्ष अभिलेख पर लाया गया है, उस तथ्यात्मक परिस्थिति को पुन: प्रस्तुत करना समुचित होगा, जो अभिलेख से स्पष्ट होती है । दुर्घटना, तारीख 17 फरवरी, 2008 को घटित हुई और उसका मथुरा के स्थानीय अस्पताल में इलाज चल रहा था । अंतत: इसे तारीख 18 फरवरी, 2008 को नई दिल्ली के जवाहर लाल नेहरु मार्ग पर लोकनायक अस्पताल में भर्ती कराया गया था और उसे तारीख 1 अप्रैल, 2008 को अस्पताल से छुट्टी दे दी गई थी । उसकी बाईं जंघास्थि में कई अस्थिभंग होने पर भी उक्त अस्पताल में ही उसकी शल्य-चिकित्सा की गई और वह पूरी तरह ठीक न हो सका । अंतत: उसे लुधियाना के दयानंद मेडिकल कालेज और अस्पताल में भर्ती करके शल्य-चिकित्सा कराई गई थी और उसकी डिस्चार्ज-समरी के अनुसार उसे तारीख 6 अक्तूबर, 2009 को भर्ती किया गया था और तारीख 15 अक्तूबर, 2009 को छुट्टी दे दी गई थी । अस्पताल में भर्ती के दौरान यह पता चला कि एक वर्ष और आठ माह पुरानी टूटी हुई जंघास्थि का उपचार किया गया था और शल्य-चिकित्सा में यह भी उल्लेख किया गया कि ब्रॉड एल. सी. पी. (सिन्थेस के साथ टूटी हुई जंघास्थि को काटा गया और आंतरिक नियतन किया गया और तारीख 7 अक्तूबर, 2009 को घुटने को स्थिर करने वाला यंत्र लगाने के साथ (इप्सीलेटिड इलियक शिखा से हार्वेस्ट किया गया) कोटिकोकेंसलस को हार्वेस्ट करते हुए असंयुक्त हड्डी को ग्राफ्ट किया गया । अस्पताल में भर्ती हुए निम्नलिखित शब्दों में बीमारी का विस्तार से यह उल्लेख भी किया गया है – रोगी की अस्थि में ग्रेड-III बी का अस्थिभंग है जिसका उपचार एक वर्ष और आठ माह से चल रहा है जिसके लिए तारीख 27 मार्च, 2008 को अंत:पाशी शल्य-चिकित्सा की थी । रोगी की जांच के

अनुवर्ती असंयुक्त संक्रमित अस्थि का निदान किया गया जिसके लिए तारीख 12 अगस्त, 2009 को अंत:पाशी टांकें हटाए गए थे । अब उसे आगे के उपचार के लिए डी.एम.सी.एच. में भर्ती किया गया है ।

24. यह भी उपदर्शित करना सुसंगत है कि अस्पताल ने स्थानीय जांच शीर्षक में यह उल्लेख किया था कि बायां निचला अंग, सीटू में कंकाल कर्षण ऊपरी टिबियल ; तृतीय क्षेत्र की प्रोक्िसमा में जंघा के पार्श्व पहलू पर मौजूद 8×2 सें. मी. का चिह्न, घुटने और नितंब पर रोम प्रतिबंधित और पीड़ादायक ; न्यूरोवासकुला स्थिति बरकरार है । इसलिए अधिकरण द्वारा अभिलिखित किया गया निष्कर्ष अभिलेख के विपरीत है और अधिकरण के समक्ष लोकनायक अस्पताल और लुधियाना के दयानंद मेडिकल कालेज और अस्पताल में चल रहे चिकित्सा उपचार के वृत्तांत के साथ चिकित्सा-रसीदें प्रस्तुत की गई थीं । अधिकरण ने अधिनिर्णय पारित करते समय, उपचार के बिना उसके चिकित्सा वृत्तांत और उसके दो वर्ष के किसी ठोस कारण के प्रतिकूल नि:शक्तता प्रमाण-पत्र पर विश्वास नहीं किया । यद्यपि ऐसे असावधानीपूर्वक किए गए चिकित्सा वृत्तांत और अभिलेख को देखने के पश्चात् एक साधारण आदमी भी यह समझ सकता है कि दावेदार/अपीलार्थी उपचाराधीन था । वर्ष 2009 में भी उसकी सुधारात्मक शल्य-चिकित्सा हुई थी और इसलिए इस पृष्ठभूमि में मात्र 50 प्रतिशत की नि:शक्कता वाला प्रमाणपत्र, जो सरकारी मेडिकल कालेज के चिकित्सा बोर्ड ने जारी किया था और जो लोक दस्तावेज है, पर संदेह नहीं किया जा सकता । चिकित्सा वृत्तांत के अनुसार आरंभ में उसकी बाईं जंघास्थि में एक कील लगाई गई थी और तत्पश्चात् वर्ष 2009 में सुधारात्मक शल्य-चिकित्सा की गई थी । अधिकरण ने इस आधार पर भी नि:शक्तता प्रमाणपत्र खारिज करने में विधि की त्रुटि की है कि इसे दुर्घटना घटित होने के दो वर्ष पश्चात् प्रस्तुत किया गया है और वह अप्रत्याशित भी था । इसलिए, चिकित्सा प्रमाणपत्र पर बिना किसी ठोस कारण के अविश्वास नहीं किया जा सकता और इस प्रकार विद्वान् अधिकरण द्वारा पूर्वोक्त चिकित्सा वृत्तांत के विपरीत अभिलिखित निष्कर्ष, कायम रखे जाने योग्य नहीं है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है ।

25. सरकारी चिकित्सा कालेज के चिकित्सा बोर्ड द्वारा जारी नि:शक्तता प्रमाणपत्र एक लोक दस्तावेज है । विधि न्यायालय के समक्ष मंजूरी प्रदान करने के लिए प्रमाणपत्र के अनुसार, 50 प्रतिशत की नि:शक्तता अन्य साक्ष्यों अर्थात् दस्तावेजी या मौखिक साक्ष्यों द्वारा समर्थित होनी चाहिए । अपीलार्थी ने अपनी क्षति प्रकृति और अर्जन क्षमता की हानि के बाबत विस्तारपूर्वक साक्ष्य दिए हैं जिससे मैं बीमा कंपनी को दायी न ठहराने या उसके दायित्व का खंडन करने का कोई कारण नहीं पाता हूं । वर्तमान मामले में, इस संबंध में बीमा कंपनी की ओर से किसी स्वतंत्र साक्षी की परीक्षा नहीं कराई गई । (**राजेश कुमार** उर्फ **राजू** बनाम **युद्धवीर सिंह और एक अन्य** (उपरोक्त) तथा **न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड मार्फत प्रभागीय प्रबंधक** बनाम **मोहम्मद नबी** (उपरोक्त) वाले मामले देखें) ।

26. इस संबंध में, **परमानंद कटारा** बनाम **यूनियन ऑफ इंडिया और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय की मताभिव्यक्तियों का उल्लेख करना सुसंगत हो सकता है जिसमें चिकित्सक को आवश्यकता पड़ने पर भी बुलाने का वर्णन किया गया है :–

> "हमें यह भी आशा है और हम यह विश्वास करते हैं कि हमारे विधि न्यायालय, चिकित्सक को साक्ष्य देने के लिए तब तक समन नहीं भेजेंगे जब तक कि साक्ष्य में आवश्यक नहीं है और इस व्यवसाय में कार्यरत व्यक्ति, अनावश्यक रूप से प्रतीक्षा करने और समय बरबाद करने के लिए नहीं है और सभी यह जानते हैं कि हमारे विधि न्यायालय सदैव ही चिकित्सा व्यवसाय में लगे व्यक्तियों का सम्मान करते हैं और उन्हें साक्ष्य देने के लिए तभी बुलाते हैं जब आवश्यकता होती है तथा यह प्रयत्न किया जाता है कि उन्हें लंबी प्रतीक्षा नहीं करनी पड़े । हमें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि विधि व्यवसाय में कार्यरत सदस्यों से जो स्वयं भी सम्माननीय व्यवसाय में हैं, यह प्रत्याशा की जाती है कि

---

[1] मनु./एस.सी./0423/1989 = 1989 (III) एस. एल. वी. आर. 137.

चिकित्सा व्यवसाय में कार्यरत व्यक्तियों का सम्मान करें और यह ध्यान रखें कि उन्हें बार-बार साक्ष्य देने के लिए तब तक नहीं बुलाया जाए जब तक कि अति आवश्यक न हो ।"

27. मेरी राय में अपीलार्थी के शरीर पर क्षतियों के कारण, जो दावेदार और डाक्टर द्वारा दिए गए साक्ष्य से भी साबित होता है कि वह अपनी ड्यूटी पर स्वतंत्र रूप से आ-जा नहीं सकता । उसका आना-जाना काफी हद तक सीमित है । इसमें इन सभी कारणों के लिए न्यायालय यह महसूस करता है कि अधिकरण ने इस शीर्षक के अधीन प्रतिकर विनिश्चित करने में विधि की त्रुटि की है और इसीलिए कुछ 'पीड़ा और कष्ट' शीर्षक के अधीन और कुछ स्थायी आंशिक नि:शक्तता के शीर्षक के अधीन थी और अर्जन क्षमता की हानि के एवज में प्रतिकर बढ़ाना अपेक्षित है । इस आंकड़े को बढ़ाने में सभी सुसंगत तत्वों पर विचार किया गया है ।

28. क्योंकि दावेदार, क्षतियों के परिणामस्वरूप स्थायी नि:शक्तता से पीड़ित होता है, इसलिए भावी अर्जन की हानि के लिए प्रतिकर का निर्धारण स्थायी नि:शक्तता के प्रभाव के आधार पर किया जाना चाहिए । अधिकरण को अर्जन क्षमता की हानि या आर्थिक हानि की प्रतिशतता के रूप में स्थायी नि:शक्तता की प्रतिशतता तकनीकी रूप से लागू करनी चाहिए । अधिकरण द्वारा निर्धारिती अर्जन क्षमता पर स्थायी नि:शक्तता के प्रभाव को निर्धारित करने की आवश्यकता होती है और आय की प्रतिशतता के निबंधनों में अर्जन क्षमता की हानि निर्धारित करने के पश्चात् अर्जित करने की भावी हानि के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए धन के निबंधनों में मात्रा निर्धारित की जानी चाहिए । अधिकरण ने सही दिशा में विवाद्यक का समाधान नहीं किया है और अधिकरण का निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण है । अपीलार्थी को पहुंची क्षतियों को ध्यान में रखते हुए, सुनिश्चित तौर पर अर्जन क्षमता की हानि हुई है क्योंकि प्रतिकर मंजूर करने में गुणांक पद्धति को अपनाना चाहिए ।

29. अपीलार्थी/दावेदार पिछली सीट पर यात्रा कर रहा था जिसकी उस समय आयु 45 वर्ष थी, वह 8,000/- रुपए प्रतिमास कमाता था । उसकी स्थायी नि:शक्तता 50 प्रतिशत निर्धारित की गई है और उसकी

सेवाएं समाप्त कर दी गई हैं । उसको कोई अन्य रोजगार मिलने की संभावना भी कम है और यदि रोजगार मिल भी जाता है तो भी वेतन बहुत कम मिलने की संभावना है । इसलिए मैंने उसकी भविष्य की हानि 50 प्रतिशत निर्धारित की है ।

30. मैं क्षति की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी-दावेदार की स्थायी नि:शक्तता, चिकित्सा उपचार कराने में उपगत वास्तविक खर्चे, दुर्घटना के कारण हानि या मानसिक पीड़ा के लिए प्रतिकर बढ़ाने को उचित मानता हूं, इसलिए अपीलार्थी/दावेदार निम्नलिखित शीर्षक के अधीन प्रतिकर पाने के हकदार हैं :–

> "8,000/- रुपए दुर्घटना से पूर्व क्षति की मासिक आय (टोल प्लाजा से 4,000/- रुपए और कृषि कार्य से 4,000/- रुपए)×12 = 96,000/- रुपए ।
>
> 48,000/- रुपए प्रतिवर्ष भविष्य की आमदनी की हानि 50 प्रतिशत स्थायी नि:शक्तता ।
>
> क्षति की गुणांक कुल हानि के लिए 6,72,000/- रुपए ।
>
> भविष्य की आर्थिक हानि के लिए 1,68,000/- रुपए ।
>
> पीड़ा, सदमा और दुःखों के लिए 5,000/- रुपए ।
>
> चिकित्सा व्यय के लिए 2,50,000/- रुपए ।
>
> यात्रा के लिए 5,000/- रुपए ।
>
> विशेष आहार के लिए 5,000/- रुपए ।
>
> भूत और भविष्य के लिए परिचारक शुल्क हेतु 3,000/- रुपए ।
>
> कुल प्रतिकर 11,06,000/- रुपए ।

31. जहां तक ब्याज की दर जारी किए जाने का संबंध है, (**नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **बीरेन्द्र और अन्य**) वाले मामले में फाइल की गई 2020 की सिविल अपील सं. 242/243 में, जो 13 जनवरी,

2020 को अर्थात् हाल ही में विनिश्चित की गई थीं, उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय को दृष्टिगत करते हुए 9 प्रतिशत होनी चाहिए ।

32. उपरोक्त कारणों से, दावेदार/अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई वर्तमान अपील मंजूर की जाती है और अधिनिर्णय उपरोक्त सीमा तक रूपांतरित किया जाता है । प्रत्यर्थी बीमा कंपनी द्वारा याचिका फाइल करने की तारीख से अधिनिर्णय किए जाने तक 9 प्रतिशत ब्याज की दर से आज से 12 सप्ताह अवधि के भीतर जमा किया जाएगा और उसके पश्चात् इस राशि को 6 प्रतिशत की दर से जमा किया जाएगा । पहले से जमा की गई धनराशि को जमा की जाने वाली धनराशि में से कम किया जाएगा ।

33. संयोग से, अपीलार्थी बीमा कंपनी ने यह प्रार्थना की है कि इस अपील को फाइल करने के पूर्व इस न्यायालय के समक्ष कानूनी रूप से जमा की गई 25,000/- रुपए की राशि को दावेदार को संदेय किए जाने वाले प्रतिकर की धनराशि में समायोजित करने के लिए संबंधित मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण को यथाशीघ्र वापस भेजा जाए, तथापि, यह प्रार्थना मंजूर की जाती है ।

34. मूल अभिलेख निचले न्यायालय को वापस भेजा जाए ।

अपील भागत: मंजूर की गई ।

मही./अस.

ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती सुमन देवी

(2008 के आदेश से प्रथम अपील सं. 3263 और 3490)

तारीख 20 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति विवेक अग्रवाल

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 166 – प्रश्नगत यान द्वारा दुर्घटना कारित होना – प्रश्नगत यान उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण चलाया जाना साबित होना – उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम के अधीन यान चलाया जाना – दुर्घटना दावा – क्षतिपूर्ति का दायित्व – यदि यह साबित कर दिया जाता है कि उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम के अधिकृत चलाए जाने वाले प्रश्नगत यान के चालक द्वारा यान को उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण चलाए जाने के कारण दुर्घटना हुई है तथा दुर्घटना के परिणामस्वरूप आहत व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है तो यान का स्वामी दायी नहीं होगा अपितु उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम दायी होगा ।

संक्षेप में तथ्य ये हैं कि दुर्घटना के लिए प्रतिकर अभिनिर्धारित होने के पश्चात् दावेदारों ने उस आधार पर प्रतिकर बढ़ाने की अपेक्षा करते हुए यह अपील फाइल की है कि इसमें चार आश्रित हैं, इस प्रकार एक तिहाई के स्थान पर एक चौथाई की कटौती की जानी है । उसी प्रकार मृतक की आयु से भविष्य की संभावनाओं के शीर्षक के अधीन 36 वर्ष थी और वह वेतन पर कार्य करता था । न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – जब मृतक की आय प्रतिमास 8,657/- रुपए की गई है और उसमें 50 प्रतिशत भविष्य की संभावना के लिए जोड़ा है तत्पश्चात् मासिक निर्भरता 12,985.50 रुपए प्रतिमास या 1,55,826/- रुपए प्रतिवर्ष में से बनती है । जब मृतक की स्वयं पर एक-चौथाई खर्च की गई आय के लिए कटौती की गई है तब कुल निर्भरता 1,16,869.50 रुपए प्रतिवर्ष बनेगी, जब 15 का गुणांक सरला वर्मा वाले मामले में

अधिकथित विधि के अनुसार लागू होता है तब कुल धन संबंधी प्रतिकर 17,53,042.50 रुपए (सत्रह लाख तिरपन हजार बयालीस रुपए और पचास पैसे) बनेगा । इसके अलावा याची को 10,12,700/- रुपए की धनराशि के लिए विद्वान् न्यायाधीश दावा ट्रिब्युनल द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर के विरुद्ध 18,23,42/- रुपए की कुल प्रतिकर धनराशि लेते हुए 70,000/- रुपए की राशि के लिए हकदार है इस प्रकार 8,10,342/- (आठ लाख दस हजार तीन सौ बयालीस) रुपए की राशि की वृद्धि की जाएगी जिसके लिए दावेदार हकदार होगा । ब्याज दर को सम्मिलित करने के लिए अन्य निबंधन और शर्त बढ़ाए गए प्रतिकर पर लागू होगी, वे भी बरकरार रहेंगी । (पैरा 7)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2017]	(2017) 16 एस. सी. सी. 680 : **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य** ;	6
[2011]	(2011) 8 एस. सी. सी 142 : **उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम** बनाम **कुलसूम और अन्य** ;	4
[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 121 : **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन और एक अन्य** ।	6, 7

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2008 के आदेश से प्रथम अपील सं. 3263 और 3490.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 और मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री रमेश सिंह और भानुभूषण जौहरी

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री डी. के. श्रीवास्तव, बी. बी. जौहरी, नृपेन्द्र मिश्रा, समीर शर्मा, अरुण कुमार गुप्ता और सुयश अग्रवाल

न्यायमूर्ति विवेक अग्रवाल – अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री रमेश सिंह और प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री बी. बी. जौहरी को सुना ।

2. ये अपीलें क्रमशः ओरियंटल इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड और दावेदारों द्वारा 2007 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका संख्या 51 में शाहजहांपुर के न्यायालय संख्या 7 के विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण/अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा तारीख 11 अगस्त, 2008 को पारित अधिनिर्णय से व्यथित होकर फाइल की गई हैं ।

3. बीमा कम्पनी के काउंसेल ने यह निवेदन किया है कि अपील इस आधार पर फाइल की गई थी कि मोटर-बस संविदा के अधीन उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम के नियंत्रण में चलाई जा रही थी और इसलिए प्रतिकर का संदाय करने का दायित्व उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम पर होगा न कि बीमाकर्ता पर ।

4. **उत्तर प्रदेश सड़क परिवहन निगम** बनाम **कुलसूम और अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय को ध्यान में रखते हुए, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि ऐसा कोई प्रतिबंध नहीं है कि वाहन के स्वामी की क्षतिपूर्ति निगम द्वारा नहीं की जा सकती और पूर्णतया स्पष्ट है कि बीमा कंपनी अपनी बाध्यता से बच नहीं सकती । अत: अपील खारिज की जाती है ।

5. 2008 की एफ. ए. ओ. एफ. सं. 3490 – अपीलार्थी-दावेदार के विद्वान् काउंसेल श्री बी. बी. जौहरी, बीमा कम्पनी (प्रत्यर्थी सं. 3) की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल सुयश अग्रवाल और उल्लंघनकारी यान के स्वामी की ओर से हाजिर होने वाले श्री पवन कुमार सिंह को सुना है ।

6. दावेदारों ने यह अपील इस आधार पर प्रतिकर बढ़ाने की ईप्सा करते हुए फाइल की है कि चार आश्रित हैं, अत: कटौती एक तिहाई के रूप में न करके एक चौथाई के रूप में की जाए । इसी प्रकार **नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड** बनाम **प्रणय सेठी और अन्य**[2] वाले मामले में

---

[1] (2011) 8 एस. सी. सी 142.

[2] (2017) 16 एस. सी. सी. 680.

अधिकथित विधि के आलोक में भावी संभावनाओं के मद के अधीन, चूंकि मृतक की आयु 36 वर्ष थी और वह पुलिस कांस्टेबल के रूप में वेतन पाने वाला कर्मचारी था, 50 प्रतिशत राशि और जोड़ी जानी चाहिए । **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन और एक अन्य**[1] वाले मामले में अधिकथित विधि के अनुसार 15 का गुणांक लागू होगा । कुल मिलाकर यह दावेदार गैर धन-संबंधी फायदों के मद के अधीन 70 हजार रुपए के संदाय का हकदार होगा ।

7. जब मृतक की आय प्रतिमास 8,657/- रुपए स्वीकार कर ली गई है और उसमें 50 प्रतिशत भावी संभावनाओं के संबंध में जोड़ी गई है तो मासिक निर्भरता 12,985.50 रुपए प्रतिमास या प्रतिवर्ष 1,55,826/- रुपए होती है । जब स्वयं पर मृतक द्वारा खर्च आय के संबंध में कटौती एक चौथाई है तो शुद्ध निर्भरता प्रतिवर्ष 1,16,869.50 रुपए हो तो **सरला वर्मा** (उपरोक्त) वाले मामले में अधिकथित विधि के अनुसार 15 का गुणांक लागू होता है तब कुल धन संबंधी प्रतिकर 17,53,042.50 (सत्रह लाख तिरपन हजार बयालीस रुपए पचास पैसे) होगी । कुल मिलाकर जिन दावेदारों ने विद्वान् अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत 10,12,700/- (दस लाख बारह हजार सात सौ) रुपए प्रतिकर के विरुद्ध 18,23,042/- (अठारह लाख तेईस हजार बयालीस) रुपए का कुल प्रतिकर प्राप्त किया है और वे 70,000/- (सत्तर हजार) रुपए पाने के हकदार हैं । इस प्रकार 8,10,342/- (आठ लाख दस हजार तीन सौ बयालीस) रुपए की वृद्धि की जाएगी जिसे दावेदार पाने के हकदार होंगे । अधिनिर्णय के अन्य निबंधन और शर्तें जिनमें ब्याज की दर सम्मिलित होंगी, बढ़े हुए प्रतिकर पर लागू होती हैं, वे भी यथास्थिति रूप में बनी रहेंगी ।

8. उपरोक्त निबंधनों में 2008 के आदेश से प्रथम अपील संख्या 3490 का निपटारा किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

मही./शुक्ला

---

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 121.

अपर गंगेज शुगर एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड*

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

(2017 की रिट सिविल सं. 5712 और 2016 की रिट सिविल सं. 58295)

तारीख 6 दिसंबर, 2021

न्यायमूर्ति सौरभ श्याम शमशेरी

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण अधिनियम, 1960 की धारा 10(2)] – तत्कालीन विहित प्राधिकारी द्वारा याची को सीमा आरोपण का नोटिस जारी किया जाना – इस धारा के अंतर्गत दिए गए नोटिस की आपत्ति का निस्तारण विहित प्राधिकारी द्वारा अधिनियम की धारा 12(1) के अन्तर्गत वर्णित प्रक्रिया द्वारा किया जाएगा तथा जो आदेश पारित होगा उसकी अपील धारा 13 के अन्तर्गत आयुक्त के समक्ष पेश की जा सकती है ।

इस मामले में, सबसे पहले तत्कालीन विहित प्राधिकारी के समक्ष एक वाद सं. 170/1976 फाइल किया गया था जिसके परिणाम स्वरूप उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण अधिनियम, 1960 की धारा 10 के अंतर्गत अपर गंगेज शुगर एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड, स्योहारा अर्थात याची को एक नोटिस भेजा गया । इस प्रक्रिया में अन्य सहकारी समितियों की जोत भी सम्मिलित हो गई और उन समितियों ने उस वाद में पक्षकार बनने हेतु आवेदन किया परंतु विहित प्राधिकारी द्वारा वह आवेदन दिनांक 8.9.1980 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया गया । इस आदेश के विरुद्ध कुरी सहकारी समिति आदि बनाम उत्तर प्रदेश सरकार के नाम से उच्च न्यायालय में रिट याचिका सं. 8239/1980 फाइल की गई जिसमें दिनांक 9.12.1996 को एक निर्णय पारित किया गया जिसके द्वारा दिनांक 8.9.1980 के आदेश को निरस्त करते हुए याची

---

* मूल निर्णय हिन्दी में है ।

अन्य सहकारी समितियों को वाद संख्या 170/1976 में पक्षकार बना लिया गया और तत्कालीन प्राधिकारी को यह निर्देश दिया गया कि वह गुण-दोष के आधार पर वाद का निपटारा करे । उच्च न्यायालय के दिनांक 9.12.1996 के आदेश के उपरांत तत्कालीन विहित प्राधिकारी ने वाद की कार्यवाही में कोई प्रगति नहीं की । काफी वर्षों के उपरांत कॉमन कलेक्टर के आदेशानुसार उप जिलाधिकारी, धामपुर द्वारा की गई दिनांक 5.12.2008 की जांच आख्या के उपरांत प्रकरण की कार्यवाही पुन: प्रारंभ हुई और उच्च न्यायालय के तारीख 9.12.1996 के आदेश के अनुसरण में याची को नोटिस भेजा गया । वाद सं. 170/1976 की पत्रावली कहीं गुम हो जाने के कारण पत्रावली का पुनः निर्माण (रिकंस्ट्रक्ट) कराने की तारीख 5.12.2008 की आख्या के आधार पर वाद संख्या 7/2009 फाइल किया गया । इस पर याची ने तारीख 2.12.2010 के आवेदन के माध्यम से यह आपत्ति प्रस्तुत की कि उसे पुरानी पत्रावली के अधीन ही नोटिस दिया जाए जैसा कि उच्च न्यायालय के तारीख 9.12.1996 के आदेश से विहित है । अत: विहित प्राधिकारी ने पुरानी वाद पत्रावली शीघ्र तलाश कर उसके समक्ष प्रस्तुत करने का निदेश दिया ताकि रिट याचिका सं. 8239/1980 में उच्च न्यायालय के तारीख 9.12.1996 के आदेश के अनुपालन में कार्यवाही की जा सके । परिणामस्वरूप विहित प्राधिकारी ने अधिनियम, 1960 के अंतर्गत दिए गए नवीन नोटिस को तारीख 1.4.2015 के आदेश द्वारा निरस्त कर दिया । इसके पश्चात् उत्तर प्रदेश सरकार ने इस अधिनियम की धारा 13 के अंतर्गत अपील प्रस्तुत की तथा साथ ही 4 माह के विलंब की माफी के लिए न्यायालय आयुक्त, मुरादाबाद मंडल, मुरादाबाद के समक्ष आवेदन भी किया । आयुक्त, मुरादाबाद मंडल ने याची को नोटिस दिए बिना 4 माह का विलंब तारीख 3.9.2015 के आदेश द्वारा माफ कर दिया और अपील को गुण-दोष के आधार पर सुनने के लिए अंगीकृत कर लिया । इस आदेश को रिकॉल कराने के लिए याची ने पुन: आवेदन किया और आयुक्त मुरादाबाद ने तारीख 1.12.2016 के आदेश के माध्यम से याची का आवेदन रद्द कर दिया । तारीख 3.9.2015 और 1.12.2016 के उक्त वर्णित आदेशों से क्षुब्ध होकर याची ने उच्च न्यायालय के समक्ष तारीख 7.12.2016 को याचिका सं. 58295/2016 फाइल की । याचिका संख्या 58295/2016

उच्च न्यायालय में विचारधीन थी, कि आयुक्त मुरादाबाद, ने अपील सं. 2015 1300001305 में उभय पक्ष के विद्वान् अधिवक्ताओं को सुनकर अंतिम निर्णय दिनांक 29.12.2016 को पारित कर दिया, जिसके द्वारा आक्षेपित आदेश दिनांक 1.4.2005 को निरस्त कर दिया गया । उपरोक्त वर्णित आदेश दिनांक 29.12.2016 से क्षुब्ध होने के कारण याची ने एक और याचिका (व्यवहार प्रकीर्ण आज्ञापत्र याचिका संख्या 5712 वर्ष 2017) इस उच्च न्यायालय में योजित की । इस याचिका पर निम्न उद्धृत आदेश दिनांक 7.2.2017 को पारित हुआ । दोनों याचिकाएं (58295/2016) व 5712/2017) वर्तमान आदेश से एक साथ निर्णीत की जा रही हैं । दोनों याचिकाओं को खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – 'अधिनियम 1960' की धारा 10 (2) के अन्तर्गत दिए गए नोटिस की आपत्ति का निस्तारण विहित प्राधिकारी द्वारा 'अधिनियम 1960' की धारा 12(1) के अन्तर्गत वर्णित प्रक्रिया के द्वारा किया जाएगा तथा जो आदेश पारित होगा उसकी अपील 'अधिनियम 1960' की धारा 12 के अन्तर्गत आयुक्त के सामने पेश की जा सकती है । जैसा की वर्तमान प्रकरण में किया गया है । अतः उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पारित अपील पोषणीय है । 'अधिनियम 1960' की धारा 13 के अन्तर्गत पेश की गई अपील की सुनवाई की अनुकरणीय प्रक्रीया 'अधिनियम 1960' की धारा 38 में उल्लेखित है । जिसके अनुसार सि. प्र. सं. 1908 में वर्णित अपीलों की सुनवाई की वर्णित प्रक्रिया का अनुसरण करना चाहिए । सि. प्र. सं. के आदेश 41, नियम 3 क, अपील में विलम्ब की माफी के आवेदन को निस्तारण करने की प्रक्रिया को वर्णित करता है । जिसके अनुसार यदि न्यायालय यह समझता है कि प्रत्यर्थी को सूचना जारी किए बिना आवेदन को नामंजूर करने का कोई कारण नहीं है तो जिसकी सूचना प्रत्यर्थी को जारी की जाएगी । इस प्रकरण में प्रत्यर्थी/याची को बिना सूचना दिए, विलम्ब क्षमा का आवेदन स्वीकार कर लिया गया था । परन्तु यह प्रक्रिया दोष को रिकॉल (प्रत्याहार) आवेदन पर उभय पक्षों को सुनकर पूर्व में पारित आदेश को यथावत् रखने के कारण निवारण किया जा चुका है अतः वर्तमान प्रकरण में कोई प्रक्रिया दोष नहीं रह जाता है । तथा पूर्व में कोई प्रक्रिया दोष

नहीं रह जाता है । तथा पूर्व में उत्पन्न प्रक्रिया दोष का प्रतिकर कर लिया गया है । विलम्ब क्षमा के प्रार्थनापत्र का निस्तारण करते समय न्यायालय को उदार व व्यवाहरिक दृष्टिकोण रखना चाहिए न कि तकनीकी या रूढ़िवादी दृष्टिकोण । अतः वर्तमान प्रकरण में आयुक्त ने उदार व व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाकर कोई विधिक त्रुटि नहीं की है वरन् उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित न्यायिक सिद्धांतों का परिपालन ही किया है । 'विलम्ब क्षमा' के प्रार्थनापत्र पर विचार करते समय न्यायालय को उदार, व्यावहारिक, न्याय उन्मुखी, गैर रूढ़िवादी दृष्टिकोण रखना चाहिए, क्योंकि न्यायालय अन्याय को दूर करने के लिए उपकृत है, न की अन्याय को कानूनी रूप देने के लिए । उपरोक्त विवेचना के आधार पर यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि आक्षेपित आदेश दिनांक 29.12.2016 में गुण-दोष पर कोई विधिक त्रुटि नहीं है । अतः आक्षेपित आदेश न्यायसंगत है । अतः याचिका संख्या 5712/2017 भी बलहीन होने के कारण निरस्त की जाती है । याचिका सं. 58295/2016 तथा याचिका सं. 5712/2017 बलहीन होने के कारण निरस्त की जाती है । (पैरा 10 और 11)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2009] (2009) 10 एस. सी. सी. 531 :
सुपर कैसट इंडस्ट्रीज लि. बनाम **उत्तर प्रदेश सरकार** । 7

अपीली (रिट) अधिकारिता : 2017 की रिट सिविल सं. 5712 और 2016 की रिट सिविल सं. 58295.

भारत के संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री अनिल किशोर शर्मा और श्रेय शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से मुख्य स्थायी अधिवक्ता

न्यायमूर्ति सौरभ श्याम शमशेरी – प्रस्तुत प्रकरण के तथ्य संक्षेप में निम्न हैं :–

(i) अपर गंगेज शुगर एंड इंडस्ट्रीज लिमिटेड, स्योहारा (याची) को 1976 में तत्कालीन विहित प्राधिकारी, द्वारा 'उत्तर प्रदेश' अधिकतम जोत सीमा आरोपण अधिनियम, 1960 (संक्षेप में 'अधिनिमय 1960') की धारा 10 के अंतर्गत नोटिस प्रेषित किया गया था (वाद सं. 170/1976) । ऐसा प्रतीत होता है, इस प्रक्रिया में अन्य सहकारी समितियों की जोत भी सम्मिलित हो गई थी, इस कारणवश उन समितियों ने उक्त कार्यवाही में पक्षकार बनने हेतु एक प्रार्थनापत्र दिया, परन्तु तत्कालीन विहित प्राधिकारी द्वारा उक्त प्रार्थनापत्र को आदेश दिनांक 8.9.1980 द्वारा निरस्त कर दिया था । जिसके विरुद्ध इस उच्च न्यायालय में रिट याचिका 8239/1980 (कुरी सहकारी समिति आदि बनाम उ. प्र. सरकार) आयोजित की गई थी, जो 9.12.1996 को निर्णीत हुई; जिसके द्वारा आदेश दिनांक 8.9.1980 निरस्त किया गया तथा याची व अन्य सहकारी समितियों को वाद में आपत्ति पेश करने का निर्देश दिया गया व वाद सं. 170/1979 के तत्कालीन विहित प्राधिकारी को गुण-दोष पर आधारित निर्णय पारित करने हेतु प्रतिप्रेषित किया गया था ।

(ii) ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त आदेश दिनांक 9.12.1996 के उपरान्त तत्कालीन विहित प्राधिकारी ने, वर्तमान प्रकरण की कार्यवाही में कोई प्रगति नहीं की । काफी वर्षों के उपरान्त, कलक्टर के आदेशानुसार उपजिलाधिकारी, धामपुर द्वारा दी गई जांच आख्या दिनांक 5.12.2008 के उपरान्त इस प्रकरण की कार्यवाही पुनः आरम्भ हुई एवं उच्च न्यायालय के आदेश 9.12.1996 के अनुक्रम में याची को नोटिस प्रेषित किया गया । पूर्व योजित वाद संख्या 170/1976 की पत्रावली न मिलने के कारण उस पत्रावली का पुनः निर्माण (रिकन्स्ट्रक्ट) कराने व आख्या दिनांक 5.12.2008 के आधार पर वाद (वाद सं. 7/2009) योजित किया गया ।

(iii) याची ने प्रार्थनापत्र दिनांक 2.12.2010 के माध्यम से उक्त नोटिस पर आपत्ति प्रस्तुत करी, जिसमें मुख्य रूप से कहा गया कि विहित प्राधिकारी को नवीन नोटिस प्रेषित करने का

अधिकार नहीं है । पूर्व योजित वाद सं. 170/1976 के क्रम में ही कार्यवाही अग्रसर की जा सकती है । अतः उक्त वाद संख्या 170/1976 की पत्रावली को तलब किया जाए तथा उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 9.12.1996 का कठोरतापूर्वक अनुपालन किया जाए ।

(iv) याची के उपरोक्त वर्णित आपत्ति की प्रतिउत्तर, उ. प्र. सरकार द्वारा दिया गया, जिसमें मुख्य कथन किया कि –

"1. यह कि प्रतिवादी का प्रार्थनापत्र सरासर गलत तथ्यों पर आधारित होने के कारण खण्डित होने योग्य है ।

2. यह कि प्रस्तुत वाद की कार्यवाही में पत्रावली रिकन्स्ट्रक्ट (Reconघtruct) करने की कार्यवाही जिलाधिकारी महोदय के पत्र दिनांक 18.11.2008 पर इस कारण करनी पड़ी क्योंकि मूल पत्रावली का उपलब्ध होना नहीं पाया गया ।

3. यह कि प्रश्नगत नोटिस का हरगिज यह तात्पर्य नहीं है कि खातेदार अथवा आपत्ति कर्तागण के पक्ष में या विरोध में पूर्व पारित आदेशों का संज्ञान न लिया जाए ।

4. यह कि मूल पत्रावली उपलब्ध न होने की दशा में नई पत्रावली बनाकर कार्यवाही किया जाना न्यायहित में आवश्यक है । ताकि किसी भी पक्ष के हितों पर विपरीत प्रभाव न पड़े ।

5. यह कि मूल पत्रावली के उपलब्ध न होने की दशा में पत्रावली रिकन्स्ट्रक्ट प्रार्थना करने में सहयोग करना खातेदार का भी दायित्व है, इसलिए प्रार्थनापत्र में प्रस्तुत कार्यवाही समाप्त किए जाने के लिए लिखना औचित्यपूर्ण नहीं है ।"

याची के उक्त प्रतिउत्तर का जवाब पेश किया जिसके द्वारा पुनः कथन किया कि विहित प्राधिकारी द्वारा की जा रही कार्यवाही न्यायहित में नहीं है । इस प्रकरण में आदेश पारित करने का कलक्टर को कोई अधिकार नहीं है ।

(v) विहित प्राधिकारी ने उभय पक्ष के विद्वान् अधिवक्ताओं को सुनकर अपने निर्णय व आदेश दिनांक 1.4.2015 द्वारा

अधिनियम, 1960 के अन्तर्गत निर्गत नवीन नोटिस को निरस्त कर दिया । निर्णय का निष्कर्ष व आदेश निम्न है –

"वाद पत्रावली पर उपलब्ध अभिलेखों का गहनता से अवलोकन किया गया । वाद पत्रावली पूर्ण रूप से रिकन्स्ट्रक्ट नहीं की गई है । जब तक वाद पत्रावली पूर्ण रूप से रिकन्स्ट्रैक्ट नहीं हो जाती तब तक खातेदार को दिए गए नोटिस पर कार्यवाही किया जाना न्यायसंगत प्रतीत नहीं होता ।

अतः तहसीलदार धामपुर वाद से सम्बन्धित पुरानी वाद पत्रावलियां शीघ्र तलाश कर इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करे ।"

एवम् आदेश किया :-

"तहसीलदार धामपुर को निर्देशित किया जाता है कि खातेदार से संबंधित पुरानी वाद पत्रावलियां शीघ्र तलाश कर इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करे, जिससे रिट याचिका संख्या 8239/1980 में माननीय उच्च न्यायालय का आदेश दिनांक 9.12.1996 के अनुपालन में कार्यवाही की जा सके । वाद पत्रावली उपलब्ध होने तक वर्ष 2009 में खातेदार को सीलिंग अधिनियम की धारा 10(2) के अन्तर्गत दिया गया नोटिस निरस्त किया जाता है ।"

(vi) विहित प्राधिकारी के आदेश दिनांक 1.4.2005 के विरुद्ध, उत्तर प्रदेश सरकार ने सीलिंग अपील संख्या 204551300001305, न्यायालय आयुक्त, मुरादाबाद मण्डल, मुरादाबाद के समक्ष अधिनियम, 1961 की धारा 13 के अंतर्गत पेश की । अपील के संग धारा 5 के अंतर्गत प्रार्थनापत्र भी दायर किया, जिसके द्वारा अपील दायर करने में हुए करीब 4 माह के विलम्ब को क्षमा करने की प्रार्थना की गई । उक्त प्रार्थनापत्र के मुख्य अंश आगे वर्णित किए गए हैं –

"प्रार्थी द्वारा अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 1/4/2015 के विरुद्ध अपील इस न्यायालय में 30

दिवस के भीतर योजित करनी थी, किंतु सम्बंधित प्रकरण में उ. प्र. सरकार की ओर से अपीलीय न्यायालय में अपील योजित किए जाने के संबंध में जिला शासकीय अधिवक्ता राजस्व द्वारा अपनाई विधिक राय प्रभारी अधिकारी सीलिंग को दिनांक 13/7/2015 को प्रस्तुत की गई जिसके पश्चात् दिनांक 17/7/2015 को जिलाधिकारी बिजनौर द्वारा उक्त आदेश के विरुद्ध अपील योजित किए जाने के लिए मण्डलीय शासकीय अधिवक्ता राजस्व को पत्र प्रेषित किया गया, जिसके अनुसरण में यह अपील नहीं हो सकी, इस कारण इस अपील को योजित करने में लगभग 4 माह का विलम्ब हो गया है, जो न्याय की दृष्टि से क्षमा किए जाने योग्य है ।

अतः श्रीमानजी से प्रार्थना है कि अपील योजित करने में हुआ विलम्ब क्षमा करते हुए अपील सुनवाई हेतु ग्रहण किए जाने के आदेश पारित किए जावे ।"

(vii) आयुक्त, मुरादाबाद मण्डल, मुरादाबाद ने निम्न उद्धृत आदेश दिनांक 3.9.2015 के द्वारा याची को नोटिस दिए बिना, केवल उ. प्र. सरकार के अधिवक्ता को सुनकर, अपील पेश करने में हुए करीब 4 माह के विलम्ब को क्षमा कर दिया और अपील को गुण-दोष पर सुनने लिए अंगीकृत कर लिया –

"पत्रावली प्रस्तुत हुई । अपीलार्थी/उ.प्र. सरकार की ओर से उपस्थित विद्वान् शासकीय अधिवक्ता को सुना गया । अपील योजित करने में हुए विलम्ब को क्षमा किया गया जाता है । अपील सुनवाई हेतु ग्रहण की जाती है । दर्ज की जाए । नोटिस निर्गत किए जाए । अवर न्यायालय का अभिलेख मंगाया जाए । पत्रावली वास्ते सुनवाई दिनांक 8-10-2015 को पेश हो ।"

(viii) आयुक्त मुरादाबाद मण्डल द्वारा पारित आदेश दिनांक 3.9.2015 के विरुद्ध याची ने उक्त आदेश को प्रत्याहार (रिकाल) व अपास्त करने का आवेदन दिनांक 3.11.2006 को आयुक्त के समक्ष पेश किया । आयुक्त ने उभय पक्षों के तर्कों पर विचार

करके अपने आदेश 1.12.2016 के माध्यम से, उक्त प्रार्थनापत्र को निरस्त कर दिया । उक्त आदेश के मुख्य अंश निम्न है –

"मेरे द्वारा उभयपक्षों की ओर से प्रस्तुत तर्कों पर विचार किया गया तथा पत्रावली का अवलोकन किया गया । प्रश्नगत अपील लगभग 4 माह विलम्ब से योजित की गई थी, जिसका कारण धारा 5 का प्रार्थनापत्र में दर्शाया गया है । अतः धारा 5 का प्रार्थनापत्र स्वीकार करके कोई विधिक त्रुटि नहीं की गई है प्रतिपक्षीगण को अपील में आपत्ति प्रस्तुत करने का पर्याप्त अवसर प्राप्त है । माननीय उच्च न्यायालय द्वारा 2015 की रिट संख्या 28715 विनीत कुमार और अन्य **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और तीन अन्य तारीख 19.5.2015 के आदेश एवं माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा कलेक्टर, भूमि अधिग्रहण, अंतनाग और अन्य **बनाम** मास्टर काटीजी और अन्य जेटी 2000(5) 389, पेरुमोन भगवती देवास्म **बनाम** भगवती अम्मा (2008) एस.सी.सी. 321 में समय पर दी गई विभिन्न व्यवस्थाओं में धारा-5 के प्रार्थनापत्र पर उदारता का दृष्टिकोण अपनाए जाने के निर्देश दिए गए हैं । वाद के शीघ्र निस्तारण में सहयोग करना सभी पक्षकारों का दायित्व होता है । ऐसी स्थिति में प्रश्नगत आदेश दिनांक 3.9.2015 को रिकॉल प्रार्थनापत्र निरस्त किए जाते हैं । पत्रावली अन्तिम बहस हेतु दिनांक 8.12.2016 को पेश हो ।"

(ix) उक्त वर्णित आदेश दिनांक 3.9.2015 व 1.12.2016 से क्षुब्ध होने के कारण याची, ने याचिका (आज्ञापत्र याचिका संख्या 58295/2016), उच्च न्यायालय के समक्ष दिनांक 7.12.2016 को योजित की । इस याचिका पर दिनांक 9.12.2016 को आदेश पारित हुआ कि याचिका की अग्रिम तिथि 21.2.2016 होगी, साथ ही प्रति-शपथपत्र दाखिल करने का आदेश भी पारित किया गया ।

(x) याचिका संख्या 58295/2016 उच्च न्यायालय में विचाराधीन थी, कि आयुक्त मुरादाबाद, ने अपील सं. 2015 । 1300001305 में उभय पक्ष के विद्वान् अधिवक्ताओं को सुनकर

अंतिम निर्णय दिनांक 29.12.2016 को पारित कर दिया, जिसके द्वारा आक्षेपित आदेश दिनांक 1.4.2005 को निरस्त कर दिया गया । आदेश के मुख्य अंश निम्न हैं –

"सम्पूर्ण तथ्यों के परिशीलन से यह स्पष्टतः विदित होता है कि प्रश्नगत प्रकरण में वर्ष 1976 में दिए गए नोटिस से संबंधित पत्रावलियां तलाश करने के उपरान्त भी नहीं मिली । माननीय उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश दिनांक 9.12.1996 के अनुपालन में तहसीलदार धामपुर द्वारा प्रतिवादीगण के जोत में सम्मिलित समस्त भूमि के आधार पर सीलिंग प्रपत्र तैयार करके उप जिलाधिकारी द्वारा अपने पत्र दिनांक 5.12.2008 के साथ संलग्न कर प्रपत्र विहित प्राधिकारी (सीलिंग) के न्यायालय में अग्रेतर कार्यवाही हेतु प्रस्तुत किए । विहित प्राधिकारी (सीलिंग) द्वारा दिनांक 5.12.2009 को पत्रावली पर अंकित फर्देहकॉम आदेश में पक्षकारों को नोटिस जारी करने का आदेश दिया गया है तथा मूल वाद पत्रावली पर उपलब्ध अभिलेख भी रिकन्स्ट्रक्ट (Reconघtruct) करने से सम्बन्धित है । जहां तक रिट याचिका संख्या 36916/2008 अपर गंगेज शुगर मिल स्योहारा बनाम उ. प्र. सरकार में तत्कालीन तहसीलदार कालीशंकर वर्मा द्वारा दिनांक 25.11.2008 को प्रति-शपथपत्र दाखिल करते हुए प्रति-शपथपत्र के पैरा सं. 3 से 52 तक सत्यापित किए जाने का प्रश्न है । उक्त प्रति-शपथपत्र अन्य राजस्व अभिलेखों उद्वरण खतौनी आदि के आधार पर भी सत्यापित किया जा सकता है । ऐसी स्थिति में विहित प्राधिकारी को आदेश दिनांक 1.4.2015 के अन्तर्गत धारा 10(2) के अन्तर्गत दिया गया नोटिस वापिस करने के विद्वान् अधिवक्ता की ओर से [2009 (9) ए. डी. जे. 811 (एस. सी.)] में दी गई व्यवस्था की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया गया है, परन्तु विहित प्राधिकारी (सीलिंग) बिजनौर द्वारा पारित आदेश दिनांक 1.4.2015 के अन्तर्गत धारा 10(2) का नोटिस वापिस लिया गया है । ऐसी स्थिति में प्रतिपक्षीगण

का यह कथन कि "उत्तर प्रदेश सरकार को अधिकतम जोत सीमा आरोपण अधिनियम की धारा 13 के अन्तर्गत अपील योजित करने का अधिकार नहीं था," – प्रतिपक्षीगण की ओर से प्रस्तुत माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा दी गई विधिक व्यवस्था [2009 (9) ए. डी. जे. 811 (एस. सी.)] के आलोक में विधिमान्य नहीं है । अतः वर्णित परिस्थितियों में अपीलार्थी उत्तर प्रदेश सरकार की ओर से उपस्थित विद्वान् शासकीय अधिवक्ता के तर्कों में बल प्रतीत होता है तथा उ. प्र. सरकार की ओर से योजित अपील स्वीकार किए जाने योग्य पाई जाती है ।

आदेश

उपरोक्त विवेचना के आधार पर उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा योजित अपील स्वीकार की जाती है । विहित प्राधिकारी (सीलिंग)/अपर कलेक्टर बिजनौर द्वारा पारित आदेश दिनांक 1.4.2015 निरस्त किया जाता है पत्रावली की जाती है कि माननीय उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका संख्या 8239/1980 कुरी सहकारी समिति लि. आदि बनाम उत्तर प्रदेश में पारित आदेश दिनांक 9.12.1996 के समादर में पक्षकारों के आपत्ति एवं साक्ष्य का पर्याप्त अवसर देते हुए गुण-दोष के आधार पर निर्णयादेश पारित करें । उक्त आदेश की प्रमाणित प्रतिलिपि सहित अवर न्यायालय का अभिलेख वापिस किया जाए । अपील पत्रावली संचयार्थ अभिलेखागार प्रेषित की जाए ।"

(xi) उपरोक्त वर्णित आदेश दिनांक 29.12.2016 से क्षुब्ध होने के कारण याची ने एक और याचिका (व्यवहार प्रकीर्ण आज्ञापत्र याचिका संख्या 5712 वर्ष 2017) इस उच्च न्यायालय में योजित की । इस याचिका पर निम्न उद्धृत आदेश दिनांक 7.2.2017 को पारित हुआ –

"विद्वान् काउंसेल ने सभी प्रत्यर्थियों की ओर से नोटिस स्वीकार किए । उसने निदेश या प्रति-शपथपत्र फाइल करने के

लिए दो सप्ताह का समय मांगने का अनुरोध किया । तथापि, प्रत्युत्तर शपथपत्र तीन दिनों के भीतर फाइल किया जा सकता है ।

अतिरिक्त वाद सूची में तारीख 27.2.2017 को यह मामला सूचीबद्ध हुआ ।

इसी बीच कोई कार्रवाई इस रिट याचिका में पारित किए जाने वाले अन्तिम निर्णय के अध्यधीन होगी ।"

(xii) दोनों याचिकाएं (58295/2016 व 5712/2017) वर्तमान आदेश से एक साथ निर्णीत की जा रही है ।

2. याचिका सं. 58295 वर्ष 2016 में प्रतिपक्ष सं. 1 व 2 की तरफ से प्रति-शपथपत्र दाखिल किया गया है, जिसमें कथन किया गया है कि आयुक्त महोदय ने 'पर्याप्त कारण' होने के कारण 4 माह के विलम्ब को क्षमा किया । ए. आई. आर. 1987 एस. सी. 1353 में प्रतिवेदित निर्णय को भी आधार बनाया । प्रति-शपथपत्र का उत्तर देते हुए याची ने कथन किया कि आयुक्त ने बिना नोटिस दिए, विलम्ब को क्षमा करने का अवैधानिक आदेश पारित किया है ।

3. याचिका संख्या 5712 वर्ष 2017 में भी प्रति-शपथपत्र 2 व 3 की तरफ से प्रति-शपथपत्र दायर किया गया है, जिसमें मुख्य रूप से कहा कि :-

"5. यह कि अपील प्रश्नगत आदेश दिनांकित 29.12.2016 द्वारा बिल्कुल सही प्रकार, नियमानुसार विधिपूर्वक, समस्त तथ्यों एवं साक्ष्यों के आधार पर निर्णित की है और स्पष्ट किया गया है कि प्रश्नगत प्रकरण में वर्ष 1976 में दिए गए नोटिस से संबंधित पत्रावली जो तलाश करने के उपरान्त भी नहीं मिली, उनको रिकन्स्ट्रक्ट कराने के आदेश दिए गए हैं और उनको रिकन्स्ट्रक्ट कराना आवश्यक है तद्नुसार अपील स्वीकार की जाकर प्रश्नगत आदेश द्वारा आदेशित किया गया कि विहित प्राधिकारी/अपर जिलाधिकारी, बिजनौर को इस निर्देश के साथ प्रतिप्रेषित किया

जाता है कि वह माननीय उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका संख्या – 8239/1980 कुरी सहकारी समिति आदि बनाम उ. प्र. सरकार में पारित आदेश दिनांक 9.12.1996 के समादर में पक्षकारों को आपत्ति एवं साक्ष्य का पर्याप्त अवसर देते हुए गुण-दोष के आधार पर निर्णय पारित करे । उक्त आदेश के विरुद्ध रिट याचिका पोषणीय नहीं है । याची को यह वैकल्पिक सुविधा प्राप्त है कि अवर न्यायालय/विहित प्राधिकारी सीलिंग, बिजनौर के समक्ष उपस्थित होकर प्रस्तुत कर सकते थे जो याची द्वारा नहीं किया गया इस आधार पर याचिका पोषणीय नहीं है और सव्यय निरस्तकरणीय है ।"

याची के प्रति-शपथपत्र का उत्तर भी दिया है, जिसमें याचिका में वर्णित कथनों का समर्थन किया गया है ।

4. याची के विद्वान् अधिवक्ता श्रेय शर्मा ने कथन किया कि आक्षेपित आदेश निम्न कारणों से न्याय विरुद्ध है :–

(क) विहित प्राधिकारी के द्वारा पारित आदेश दिनांक 1.4.2015 के विरुद्ध 'अधिनियम 1960' की धारा 13 के अन्तर्गत अपील पोषणीय नहीं है, क्योकि आदेश दिनांक 1.4.2015 'अधिनियम 1960' की धारा 11(2) या धारा (12) के अधीन पारित नहीं किया गया है । याची के विद्वान् अधिवक्ता ने अपने कथन के समर्थन में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय सुपर कैसेट इंडस्ट्रीज लि. **बनाम** उ. प्र. सरकार (2009) 10 एस. सी. सी. 531 का उल्लेख किया ।

(ख) विद्वान् अधिवक्ता ने कथन किया कि आयुक्त के द्वारा विलम्ब क्षमा का आदेश याची को नोटिस दिए बिना ही पारित किया गया है, अतः यह न्याय विरुद्ध है । अपने कथन के समर्थन में इस उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश शम्भू सरन चौबे व अन्य **बनाम** उ. प्र. सरकार व अन्य 2012 (10) ए. डी. जे. 742 का उल्लेख किया ।

(ग) विद्वान् अधिवक्ता का यह भी कथन है, कि विलम्ब क्षमा के आदेश को चुनौती देने वाली याचिका (याचिका संख्या 58295/2016) इस उच्च न्यायालय में लम्बित थी की इस दौरान ही आयुक्त ने अपील पर गुण-दोष पर निर्णय ले लिया गया था, परन्तु केवल इस कारण से उक्त याचिका स्वयं ही निष्फल नहीं हो जाती है । अगर यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि विलम्ब क्षमा का आदेश न्याय विरुद्ध था, तो अपील पर गुण-दोष पर दिया गया आदेश स्वतः ही निष्फल हो जाएगा, क्योंकि वो आदेश एक 'आश्रित आदेश' (dependent order) है । इस तर्क को पुख्ता करने के लिए विद्वान् अधिवक्ता ने उच्चतम न्यायालय के द्वारा पारित रामा गोउडा, मेजर **बनाम** स्पेशल लैंड एक्यूज़ीशन ऑफिसर, बैंगलोर (1988) 2 एस. सी. सी. 142 के निर्णय का उल्लेख किया ।

(घ) विद्वान् अधिवक्ता ने आगे कथन किया कि आक्षेपित आदेश दिनांक 29.12.2016 गुण-दोष पर भी विधिविरुद्ध 'अधिनियम 1960' के अंतर्गत नवीन नोटिस प्रेषित नहीं किया जा सकता था तथा जिलाधिकारी के आदेश से प्रकरण के दस्तावेजों का पुनर्निर्माण (Recontruct) नहीं किया जा सकता । यह आदेश उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 9.12.1996 में पारित दिशा निर्देशों के विपरीत भी है ।

(ङ) याची द्वारा लिखित बहस भी पेश की गई है, जिसमें ऊपर वर्णित बहस को दोहराया गया है ।

5. विद्वान् मुख्य स्थायी अधिवक्ता, उ. प्र. सरकार ने प्रति-उत्तर में कथन किया कि :-

"(क) 'अधिनियम 1960' की धारा 13 में स्पष्ट रूप से वर्णित है कि 'धारा 11' की उपधारा (2) या धारा 12 के अधीन दिए गए किसी आदेश से क्षुब्ध कोई पक्ष उक्त आदेश की तारीख से 30 दिन के अन्दर उस आयुक्त के समक्ष अपील पेश कर सकता है, जिसके अधिक्षेत्र में वह भूमि या उसका कोई भाग स्थित हो । धारा

10(2) में यह स्पष्ट रूप से उल्लेखित है कि, खातेदार को धारा 10(1) में प्रेषित नोटिस की आपत्ति धारा 10(2) में की जा सकती है तथा ऐसी आपत्ति का निर्णय धारा 12(1) के अनुसार किया जाएगा । प्रस्तुत प्रकरण में वर्ष 2010 में एक नोटिस धारा 10(2) के अंतर्गत पूर्व में योजित कार्यवाही की निरंतरता में प्रेषित किया गया था, जिसके विरुद्ध याची ने आपत्ति पेश की थी । आपत्ति पेश होने पर विहित प्राधिकारी ने उभय पक्ष को सुनकर, कारणों को अभिलिखित करके आपत्तियों को अस्वीकार करने का निर्णय दिनांक 1.4.2015 को पारित किया । अतः उक्त आदेश, धारा 12 (1) के अंतर्गत पारित आदेश माना जाएगा । अतः उ. प्र. सरकार द्वारा दाखिल अपील पूर्णतः पोषणीय है । आयुक्त ने 'पर्याप्त कारण' होने के कारण विलम्ब क्षमा का आवेदन पर विधिपूर्वक आदेश पारित किया । आयुक्त द्वारा बिना नोटिस दिए विलम्ब क्षमा का आदेश पारित करने में यदि कोई विधिक त्रुटि थी तो भी याची द्वारा रिकॉल (प्रत्याहार) प्रार्थनापत्र पर याची को सुनकर पूर्व में पारित विलम्ब क्षमा का आदेश यथावत् रख कर आयुक्त द्वारा उक्त त्रुटि को दूर कर लिया गया है ।"

6. उभय पक्षों के विद्वान् अधिवक्ताओं के तर्कों को ध्यान पूर्वक सुना व प्रकरण के अभिलेखों व याची के द्वारा पेश की गई लिखित बहस का परिशीलन ध्यान पूर्वक किया ।

7. (i) प्रथम बिन्दू जिस पर इस न्यायालय को विचार करना है, वो है कि, प्रस्तुत प्रकरण में विहित प्राधिकारी के आदेश दिनांक 1.4.2015 के विरुद्ध उ. प्र. सरकार के द्वारा पेश की गई अपील 'अधिनियम 1960' की धारा 13 के अंतर्गत पोषणीय है या नहीं ?

(ii) 'अधिनियम 1960' के वो उपबंध जो इस प्रकरण को निस्तारित करने के लिए सुसंगत हैं, वो निम्न हैं :-

धारा 10. विवरण प्रस्तुत न करने वाला या अपूर्ण अथवा गलत विवरण प्रस्तुत करने वाले खातेदारों को नोटिस – (1) यदि कोई जोतदार आधार 9 के अधीन प्रस्तुत किए जाने हेतु अपेक्षित

कोई विवरण प्रस्तुत न करे या अपूर्ण अथवा गलत विवरण प्रस्तुत करे तो ऐसी हर एक दशा में विहित प्राधिकारी या तो स्वयं या अपने अधीनस्थ किसी व्यक्ति के माध्यम से ऐसी जांच करने के बाद जो वह आवश्यक समझे, एक विवरण तैयार करवाएगा जिसमें ऐसे ब्यौरे दिए होंगे जो विहित किए जाएं इस विवरण में विशेष रूप से धारा 6 के अधीन विमुक्त भूमि, यदि कोई हो, दिखाई जाएगी तथा वह गाटा या वे गाटे भी दिखाए जाएंगे जिसे या जिन्हें अतिरिक्त भूमि घोषित करने का विचार हो ।

(2) तत्पश्चात् विहित प्राधिकारी उपधारा (1) के अधीन तैयार किए गए विवरण की एक प्रति के सहित एक नोटिस ऐसी रीति से, जो विहित की जाए, हर एक ऐसे जोतदार पर तामील कराएगा, जिसमें उससे कहा जाएगा कि वह उस नोटिस में निर्दिष्ट अवधि के अन्दर कारण प्रकट करें कि विवरण क्यों ठीक न मान लिया जाए । निर्दिष्ट अवधि नोटिस की तामील की तारीख से 10 दिन से कम की न होगी ।

धारा 11. आपत्ति प्रस्तुत न किए जाने पर अतिरिक्त भूमि का अवधारण – (1) यदि धारा 9 के अधीन प्रकाशित नोटिस के अनुसरण में किसी जोतदार द्वारा प्रस्तुत किया गया कोई विवरण विहित प्राधिकारी द्वारा स्वीकार कर लिया जाए अथवा यदि धारा 10 के अधीन विहित प्राधिकारी द्वारा तैयार किए गए विवरण पर निर्दिष्ट अवधि के अन्दर आपत्ति न की जाए तो विहित प्राधिकारी जोतदार की अतिरिक्त भूमि तद्नुसार अवधारित करेगा ।

(2) विहित प्राधिकारी ऐसे जोतदार द्वारा जो अपनी अनुपस्थिति में दिए गए आदेश से क्षुब्ध हो, उपधारा (1) के अधीन आदेश की तारीख से 30 दिन के अन्दर प्रार्थना को रद्द कर देगा और उस जोतदार को धारा 10 के अधीन तैयार किए गए विवरण के विरुद्ध आपत्ति प्रस्तुत करने की अनुमति देगा तथा धारा 12 के उपबन्धों के अनुसार उसका निर्णय करने हेतु कार्यवाही करेगा ।

(3) धारा 13 के उपबन्धों के अधीन रहते हुए विहित

प्राधिकारी का आदेश अंतिम तथा निश्चायक होगा तथा उन पर किसी विधि न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी ।

धारा 12. आपत्ति प्रस्तुत किए जाने पर विहित प्राधिकारी द्वारा अधिशेष भूमि का अवधारण – (1) यदि धारा 10 की उपधारा (2) के अधीन या धारा 11 की उपधारा (2) के अधीन अथवा धारा 13 के अधीन अपील में दिए गए किसी आदेश के परिणामस्वरूप कोई आपत्ति प्रस्तुत की गई हो तो विहित प्राधिकारी पक्षों की सुनवाई का और साक्ष्य प्रस्तुत करने का समुचित अवसर देने के बाद अपने कारणों को अभिलिखित करके आपत्तियों का निर्णय करेगा तथा अतिरिक्त भूमि अवधारित करेगा ।

(2) धारा 13 के अधीन में दिए गए किसी आदेश के अधीन रहते हुए उपधारा (1) के अधीन विहित प्राधिकारी का आदेश अंतिम तथा निश्चायक होगा तथा उस पर किसी विधि न्यायालय में आपत्ति नहीं की जाएगी ।

धारा 12-क. कतिपय मामलों के सिवाय खातेदार का विकल्प माना जाना – धारा 11 या धारा 12 के अधीन अतिरिक्त भूमि का अवधारण करने में विहित प्राधिकारी, यथा सम्भव, खातेदार द्वारा प्लाट या प्लाटों के सम्बन्ध में जिन्हें वह और उसके परिवार के अन्य सदस्य, यदि कोई हो, इस अधिनियम के उपबन्धों के अधीन अपने पर अथवा उन पर प्रयोज्य अधिकतम क्षेत्र के भाग के रूप में रखना चाहे, इंगित विकल्प को स्वीकार करेगा, चाहे वह उसके द्वारा धारा 9 के अधीन अपने विवरण-पत्र में या किन्हीं अनुवर्ती कार्यवाहियों में इंगित किया गया हो :

परन्तु यह कि –

(क) विहित प्राधिकरी खातेदार के संबंध में प्रयोज्य अधिकतम क्षेत्र में शामिल की जाने वाली भूमि की संपार्श्विकता को ध्यान में रखेगा ;

(ख) यदि जोतदार की पत्नी के पास कोई ऐसी भूमि हो तो

अधिकतम क्षेत्र का अवधारण करने के प्रयोजनार्थ जोतदार द्वारा धृत भूमि के साथ शामिल की गई हो, तथा उसकी पत्नी ने उन पर प्रयोज्य अधिकतम क्षेत्र के भाग के रूप में रखे जाने वाले प्लाट या प्लाटों के सम्बन्ध में जोतदार द्वारा इंगित विकल्प के विषय में सम्मति न दी हो, तो विहित प्राधिकारी यथासंभव, ऐसी रीति से अतिरिक्त भूमि घोषित करेगा कि जोतदार की पत्नी द्वारा धृत भूमि में से लिए जाने वाले क्षेत्र का कुल अतिरिक्त क्षेत्र में वही अनुपात हो जो उसके (पत्नी) द्वारा मूलतः धृत क्षेत्र का परिवार द्वारा धृत कुल भूमि में हो ;

(ग) यदि किसी व्यक्ति के पास राज्य सरकार या उत्तर प्रदेश कृषि उधार अधिनियम, 1973 की धारा 2 खण्ड (ग) में यथा परिभाषित किसी बैंक अथवा किसी सहकारी भूमि विकास बैंक या अन्य सहकारी समिति या निगम या किसी सरकारी कम्पनी के पास गिरवी रखी गई भूमि को शामिल करके अधिकतम क्षेत्र से अधिक भूमि से भिन्न भूमि अतिरिक्त भूमि अवधारित की जाएगी ;

(घ) यदि किसी व्यक्ति के पास, धारा 5 की उपधारा (6) या उपधारा (7) में निर्दिष्ट किसी अन्तरण या विभाजन विषयक किसी भूमि को शामिल करके, अधिकतम क्षेत्र से अधिक भूमि हो तो, यथासम्भव ऐसे अन्तरण या विभाजन विषयक भूमि से भिन्न भूमि अतिरिक्त भूमि अवधारित की जाएगी तथा यदि अतिरिक्त भूमि के अन्तर्गत कोई ऐसी भूमि शामिल है जो ऐसे अन्तरण या विभाजन का विषय हो तो ऐसा अन्तरण या विभाजन जहां तक उसका सम्बन्ध अतिरिक्त भूमि में शामिल भूमि से है, शून्य समझा जाएगा और सदैव से शून्य होगा, तथा –

(1) अंतरिती अपने द्वारा अंतरक को अग्रिम दिए गए प्रतिफल की अनुपातिक धनराशि को, यदि कोई हो, लौटाने हेतु दावा कर सकता है, तथा यह धनराशि धारा 17 के अधीन अंतरक को देय राशि पर तथा अधिकतम क्षेत्र के अन्दर अंतरक द्वारा रखी

गई किसी भूमि पर भी धारित होगी और उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि व्यवस्था अधिनियम, 1950 की धारा 153 में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी ऐसी भूमि को उस प्रभार की पुष्टि हेतु बेचा जा सकेगा ;

(2) बटवारा से सम्बन्धित (ऐसे खातेदार जिसके सम्बन्ध में अधिशेष भूमि अवधारित की गई हो, से भिन्न) कोई पक्ष जिसकी भूमि उक्त जोतदार की अतिरिक्त भूमि में शामिल की गई हो, बटवारा को फिर से कराने का हकदार होगा ।

धारा 13. अपील – (1) धारा 11 की उपधारा (2) या धारा 12 के अधीन दिए गए किसी आदेश से क्षुब्ध कोई पक्ष उक्त आदेश की तारीख से 30 दिन के अन्दर उस आयुक्त के समक्ष अपील पेश कर सकता है जिसके अधिक्षेत्र में वह भूमि या उसका कोई भाग स्थित हो ।

(2) अपील को यथाशक्य शीघ्र निस्तारित करेगा तथा उस पर उसका आदेश अन्तिम और निश्चायक होगा तथा किसी विधि न्यायालय में उस पर आपत्ति नहीं की जाएगी ।

(3) यदि इस धारा के अधीन अपील की जाएं तो आयुक्त उस आदेश के प्रवर्तन को जिसके विरुद्ध अपील की गई हो तो ऐसे समय के लिए और ऐसी शर्तों पर स्थगित कर सकता है, जो ठीक और उचित समझी जाए ;

प्रतिबन्ध यह कि भूमि के उस भाग के सम्बन्ध में जिसके अतिरिक्त होने के विषय में या तो धारा 10 की उपधारा (2) के अधीन या धारा 11 की उपधारा (2) के अधीन आपत्ति में विवाद नहीं उठाया गया था अथवा अपील में विवाद न उठाया गया हो उस आदेश का प्रवर्तन जिसके विरुद्ध अपील की गई हो, स्थगित नहीं किया जाएगा और 28 सितम्बर, 1970 के पहले इस उपधारा के अधीन दिया गया कोई स्थगन आदेश राज्य सरकार द्वारा अपील न्यायालय को तदर्थ आवेदन-पत्र दिए जाने पर उस न्यायालय द्वारा तदनुसार परिष्कृत कर दिया जाएगा ।

स्पष्टीकरण – इस प्रतिबन्धात्मक के प्रयोजानार्थ धारा 9 या धारा 10 के अधीन किसी नोटिस की, अथवा विहित प्राधिकारी के समक्ष कार्यवाहियों की नियमितता, विधिमाविहिता या वैधता के सम्बन्ध में कोई विवाद स्वतः भूमि का अतिरिक्त भूमि होने से सम्बन्धित विवाद नहीं समझा जाएगा ।"

(iii) उपरोक्त वर्णित उपबंधों से यह विदित है कि अधिनियम, 1960 की धारा 11 की उपधारा (2) या धारा 12 के अधीन दिए गए किसी आदेश से क्षुब्ध कोई पक्ष धारा 13 के अंतर्गत आयुक्त के समक्ष अपील पेश कर सकता है । प्रस्तुत प्रकरण में यह देखना आवश्यक है कि क्या विहित प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 1.4.2015 धारा 11 की उपधारा (2) या धारा 12 के अधीन पारित आदेश है या नहीं । प्रकरण के तथ्यों से यह भी विदित है कि वाद सं. 7/2009 में याची को धारा 10(2) के अंतर्गत प्रेषित नोटिस पर याची द्वारा पेश की गई आपत्ति को विहित प्राधिकारी ने आदेश दिनांक 1.4.2005 द्वारा निरस्त किया गया था । अतः यह आदेश धारा 12(1) के अन्तर्गत पारित किया गया । अतः आदेश दिनांक 1.4.2015 के विरुद्ध अपील धारा 13, अधिनियम, 1960 के अंतर्गत पोषणीय है । उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय **सुपर कैसट इंडस्ट्रीज लि.** बनाम **उत्तर प्रदेश सरकार**[1] में भी यही प्रतिपादित किया गया है कि यदि कोई आदेश धारा 12, अधिनियम, 1961 के अंतर्गत पारित होता है तो उसके विरुद्ध धारा 13, 'अधिनियम, 1961' में अपील पेश की जा सकती है । धारा 12 की कार्यवाही, धारा 10(2) के नोटिस पर आरम्भ होती है तथा उक्त नोटिस पर आपत्ति धारा 12(1) के अन्तर्गत विनिश्चित की जाती है, जैसा प्रस्तुत प्रकरण में हुआ है । अतः प्रस्तुत प्रकरण में धारा 13 के अन्तर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पेश की गई अपील पोषणीय है ।

8. (i) वर्तमान प्रकरण में द्वितीय बिन्दू जिस पर निर्णय लिया जाना है वह यह है कि क्या धारा 13 अधिनियम, 1961 के अंतर्गत अपील पेश करने में विलम्ब को क्षमा करने का प्रार्थनापत्र, प्रतिवादी (यहां याची)

---

[1] (2009)10 एस. सी. सी. 531.

को बिना नोटिस दिए, स्वीकार किया जा सकता है या नहीं ? यदि नहीं, तो उक्त आदेश के विरुद्ध रिकॉल (प्रत्याहार) प्रार्थनापत्र पर उभय पक्ष को सुनकर पूर्व में पारित 'विलम्ब क्षमा' का आदेश यथावत् बनाए रखने के आदेश का क्या असर होगा ?

(ii) प्रस्तुत प्रकरण के तथ्यों से यह निर्विवाद है कि आयुक्त ने प्रतिवादी (यहां याची) को पूर्व नोटिस दिए बिना ही उ. प्र. सरकार द्वारा अपील पेश करने में हुए 4 माह के विलम्ब को क्षमा कर दिया था । उसके उपरान्त याची की रिकॉल (प्रत्याहार) प्रार्थनापत्र पर उभय पक्षों को सुनकर पूर्व में पारित 'विलम्ब क्षमा' के आदेश को ही यथावत् रखा ।

(iii) अधिनियम, 1960 की धारा 38, अपीलीय न्यायालय की शक्तियों तथा उसके द्वारा अनुकरणीय प्रक्रिया को वर्णित करती है । धारा 38(1) के अनुसार इस अधिनियम के अधीन अपील की सुनवाई करने में तथा उसका निर्णय करने में अपीलीय न्यायालय को व्यवहार न्यायालय (सिविल कोर्ट) की सब शक्तियां तथा विशेषाधिकार प्राप्त है तथा वह उस प्रक्रिया का अनुसरण करेगा जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में अपीलों की सुनवाई तथा उनके निर्णय हेतु दी हुई हैं । अर्थात् विलम्ब क्षमा करने की प्रक्रिया का स्रोत सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (संक्षेप में सि. प्र. सं.) से होगा । आदेश 41, नियम 3अ सि. प्र. सं. में अपील पेश करने में हुए विलम्ब क्षमा के प्रार्थनापत्र को निस्तारित करने की प्रक्रिया वर्णित की गई है । 'अधिनियम 1960' की धारा 38 व सि. प्र. सं. का आदेश 41, नियम 3क निम्न उद्धृत किया गया है :-

> **"धारा 38. अपीलीय न्यायालय की शक्तियां तथा उसके द्वारा अनुकरणीय प्रक्रिया** – (1) इस अधिनियम के अधीन अपील की सुनवाई करने में तथा उसका निर्णय करने में अपीलीय न्यायालय को व्यवहार न्यायालय (सिविल कोर्ट) की सब शक्तियां तथा विशेषाधिकार प्राप्त होंगे तथा वह उस प्रक्रिया का अनुसरण करेगा जो सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में अपीलों की सुनवाई तथा उनके निर्णय हेतु दी हुई है ।

आदेश 41, नियम 3क. विलम्ब की माफी के लिए आवेदन – (1) जब कोई अपील उसके लिए विहित परिसीमाकाल के पश्चात् उपस्थापित की जाती है, तब उसके साथ ऐसे शपथपत्र द्वारा समर्थित आवेदन होगा जिसमें वे तथ्य उपवर्णित होंगे जिन पर अपीलार्थी न्यायालय का यह समाधान करने के लिए निर्भर करता है कि ऐसी अवधि के भीतर अपील न करने के लिए उसके पास पर्याप्त कारण था ।

(2) यदि न्यायालय यह समझता है कि प्रत्यर्थी को सूचना जारी किए बिना आवेदन को नामंजूर करने का कोई कारण नहीं है तो उसकी सूचना प्रत्यर्थी को जारी की जाएगी और, यथास्थिति, नियम 11 या नियम 13 के अधीन अपील को निपटाने के लिए अग्रसर होने के पूर्व न्यायालय द्वारा उस मामले का अन्तिम रूप से विनिश्चय किया जाएगा ।

(3) जहां उपनियम (1) के अधीन कोई आवेदन किया गया है वहां न्यायालय उस डिक्री के जिसके विरुद्ध अपील फाइल किए जाने की प्रस्थापना है, निष्पादन, को रोकने के लिए आदेश उस समय तक नहीं करेगा जब तक न्यायालय नियम 11 के अधीन सुनवाई के पश्चात् अपील सुनने का विनिश्चय नहीं कर लेता है ।"

(iv) उपरोक्त वर्णित प्रक्रिया से यह विदित होता है कि विलम्ब से पेश की गई अपील पर 'विलम्ब क्षमा' का प्रार्थनापत्र मंजूर करने से पहले प्रत्यार्थी को नोटिस देना चाहिए, परन्तु वर्तमान प्रकरण में ऐसा कोई नोटिस नहीं दिया गया था । अतः आदेश 41, नियम 3क (2) में वर्णित प्रक्रिया या विशुद्ध रूप से अनुपालन नहीं किया है, परन्तु यहां यह उल्लेखित करना प्रासंगिक है, कि याची के एक रिकॉल (प्रत्याहार) प्रार्थनापत्र दिनांक 3.11.2016, आयुक्त के समक्ष पेश किया था, जिसके माध्यम से 'विलम्ब क्षमा' का आदेश अपास्त करने का निवेदन किया गया था । उक्त प्रार्थनापत्र पर आयुक्त ने उभय पक्षों को सुनकर निर्णय दिनांक 1.12.2016 पारित किया जिसके द्वारा उक्त प्रार्थनापत्र को

निरस्त कर दिया तथा विलम्ब क्षमा का पूर्व में पारित आदेश को यथावत् रखा । अतः इस प्रक्रिया का अनुपालन कर लिया तथा पूर्व में हुई प्रक्रिया दोष का निवारण भी कर लिया, क्योंकि पूर्व में बिना नोटिस दिए, विलम्ब क्षमा का आदेश पारित करना मात्र प्रक्रिया दोष था । आयुक्त ने आदेश दिनांक 1.12.2016 में उभय पक्षों को सुनकर स्पष्ट रूप से उल्लेखित किया है कि धारा 5, प्रार्थनापत्र पर उदारता का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, इसलिए 4 माह के विलम्ब को क्षमा करने में कोई वैधानिक त्रुटि नहीं है ।

(v) उपरोक्त विवेचना से यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि याची की शिकायत कि क्षमा विलम्ब के प्रकरण में उसका पक्ष नहीं सुना गया, सत्य नहीं है । आयुक्त ने याची का पक्ष पूर्ण रूप से अपने आदेश दिनांक 1.12.2016 जो रिकॉल (प्रत्याहार) प्रार्थनापत्र पर पारित करने से पहले सुना व इस पर विचार भी किया । अतः आयुक्त के क्षमा विलम्ब के आदेश में कोई त्रुटि नहीं है । याची के विद्वान् अधिवक्ता यह बताने में असमर्थ रहे कि वर्तमान तथ्यों पर ध्यान देते हुए 4 माह का विलम्ब, क्षमा क्यों नहीं किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय ने अपने कई निर्णयों में प्रतिपादित किया है कि 'विलम्ब क्षमा' के प्रार्थनापत्र का निर्णय करते समय, न्यायालय को 'उदार' व 'व्यावहारिक' दृष्टिकोण रखना चाहिए न कि 'तकनीकी' या 'रूढ़िवाद' दृष्टिकोण । शम्भू सरन चौबे (पूर्व में उल्लेखित) के निर्णय में इस उच्च न्यायालय की एकल पीठ ने यह प्रतिपादित किया है कि विलम्ब से पेश की गई अपील, विलम्ब क्षमा प्रार्थनापत्र के पेश किए बिना तथा उक्त प्रार्थनापत्र को स्वीकार किए बिना अंगीकृत नहीं की जा सकती । एकल पीठ ने आदेश 41, नियम 3क सि. प्र. सं. की प्रक्रिया को पूर्ण रूप से अनुपालन करने पर बल दिया है । वर्तमान वाद में आयुक्त ने पूर्व में उक्त प्रक्रिया को पूर्णरूप से न अपनाने का दोष, रिकॉल (प्रत्याहार) प्रार्थनापत्र को निस्तारित करते समय पूर्णरूप से उक्त प्रक्रिया का अनुपालन करके दूर कर लिया है, अतः शम्भू सरन चौबे (पूर्व में उल्लेखित) में प्रतिपादित विधि सिद्धांतों का पालन कर लिया गया है । **अतः आयुक्त द्वारा पारित**

आदेश दिनांक 3.9.2015 व 1.12.2016 में कोई विधिक त्रुटि नहीं है । अतः उक्त आदेशों के विरुद्ध पेश की गई रिट याचिका सं. 58295/2011 बलहीन होने के कारण, निरस्त करने योग्य है, अतः निरस्त की जाती है ।

9(i) इस प्रकरण का अन्तिम बिन्दू इस पर न्यायालय को विचार करना है वो यह है कि आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 29.12.2016 गुण-दोष पर विधिसम्मत् है अथवा नहीं ? आयुक्त ने अपने उक्त आदेश में स्पष्ट रूप से उल्लेखित किया है, कि समस्त कार्यवाही उच्च न्यायालय के आदेश दिनांक 9.12.1996 के अनुपालन में ही की गई है तथा पूर्व कार्यवाही का ही भाग है, जो तहसीलदार की आख्या से भी विदित होता है । नोटिस पर जो आपत्तियां प्रस्तुत कीं गईं उसमें भी यह उल्लेखित नहीं है कि खातेदार की जोत में 1976 के बाद, भूमि का क्षेत्रफल अधिक या कम हुआ है । अतः इस कार्यवाही से याची के विरुद्ध किसी भी प्रकार से पूर्वाग्रह ग्रस्त होने की आकांक्षा नहीं है । याची को यह अधिकार है कि वो अपना पक्ष अधिनियम 1961 में दी गई प्रक्रिया के अंतर्गत रख सकता है ।

(ii) पत्रावली न मिलने के कारण, तहसीलदार धामपुर द्वारा याची के जोत में सम्मिलित समस्त भूमि के आधार पर सीलिंग प्रपत्र तैयार किया गया था और उसके अनुक्रम में ही याची को नोटिस दिया गया था । विहित प्राधिकारी ने समस्त प्रक्रिया 'अधिनियम 1960' के उपबन्धों के परिपालन में की गई है । सम्पूर्ण प्रक्रिया इस न्यायालय के आदेश दिनांक 9.2.1996 के परिपालन में ही की गई है । अतः आयुक्त महोदय द्वारा पारित आदेश 29.12.2016 में कोई विधिक त्रुटि नहीं है ।

(iii) रामा गोउडा (पूर्व में उल्लिखित) के निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने प्रतिपादित किया है कि विलम्ब क्षमा के आदेश के विरुद्ध कोई याचिका विचारधीन हो तथा उसी दौरान अपील में निर्णय पारित हो जाए तो पहली याचिका का अन्तिम निर्णय पर अपील के निर्णय के विरुद्ध याचिका का निर्णय निर्भर रहेगा, क्योंकि अपील में पारित हो जाए तो पहली याचिका का अन्तिम निर्णय पर अपील के निर्णय पर अपील के निर्णय के विरुद्ध याचिका का निर्णय निर्भर रहेगा, क्योंकि अपील में

पारित आदेश एक 'आश्रित आदेश' (Dependent Order) है । परन्तु वर्तमान प्रकरण में विलम्ब क्षमा के आदेश के विरुद्ध याचिका वर्तमान आदेश के द्वारा निरस्त की जा रही है । अतः रामा गोउडा (पूर्व में उल्लेखित) के निर्णय की गई प्रासंगिकता वर्तमान प्रकरण में नहीं रह जाती है ।

10. उपरोक्त विवेचना के आधार पर यह न्यायलय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है :–

(i) 'अधिनियम 1960' की धारा 10 (2) के अन्तर्गत दिए गए नोटिस की आपत्ति का निस्तारण विहित प्राधिकारी द्वारा 'अधिनियम 1960' की धारा 12(1) के अन्तर्गत वर्णित प्रक्रिया के द्वारा किया जाएगा तथा जो आदेश पारित होगा उसकी अपील 'अधिनियम 1960' की धारा 12 के अन्तर्गत आयुक्त के सामने पेश की जा सकती है । जैसा की वर्तमान प्रकरण में किया गया है । अतः उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा पारित अपील पोषणीय है ।

(ii) 'अधिनियम 1960' की धारा 13 के अन्तर्गत पेश की गई अपील की सुनवाई की अनुकरणीय प्रक्रिया 'अधिनियम 1960' की धारा 38 में उल्लेखित है । जिसके अनुसार सि. प्र. सं. 1908 में वर्णित अपीलों की सुनवाई की वर्णित प्रक्रिया का अनुसरण करना चाहिए । सि. प्र. सं. के आदेश 41, नियम 3क, अपील में विलम्ब की माफी के आवेदन को निस्तारण करने की प्रक्रिया को वर्णित करता है । जिसके अनुसार यदि न्यायालय यह समझता है कि प्रत्यार्थी को सूचना जारी किए बिना आवेदन को नामंजूर करने का कोई कारण नहीं है तो जिसकी सूचना प्रत्यर्थी को जारी की जाएगी । इस प्रकरण में प्रत्यर्थी/याची को बिना सूचना दिए, विलम्ब क्षमा का आवेदन स्वीकार कर लिया गया था । परन्तु यह प्रक्रिया दोष को रिकॉल (प्रत्याहार) आवेदन पर उभय पक्षों को सुनकर पूर्व में पारित आदेश को यथावत् रखने के कारण निवारण किया जा चुका है अतः वर्तमान प्रकरण में कोई प्रक्रिया दोष नहीं रह जाता है । पूर्व में

कोई प्रक्रिया दोष नहीं रह जाता है । तथा पूर्व में उत्पन्न प्रक्रिया दोष का प्रतिकर कर लिया गया है ।

(iii) विलम्ब क्षमा के प्रार्थनापत्र का निस्तारण करते समय न्यायालय को उदार व व्यवहारिक दृष्टिकोण रखना चाहिए न कि तकनीकी या रूढ़िवादी दृष्टिकोण । अतः वर्तमान प्रकरण में आयुक्त ने उदार व व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाकर कोई विधिक त्रुटि नहीं की है वरन् उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रतिपादित न्यायिक सिद्धांतों का परिपालन ही किया है । 'विलम्ब क्षमा' के प्रार्थनापत्र पर विचार करते समय न्यायालय को उदार, व्यावहारिक, न्याय उन्मुखी, गैर रूढ़िवादी दृष्टिकोण रखना चाहिए, क्योंकि न्यायालय अन्याय को दूर करने के लिए उपकृत है, न की अन्याय को कानूनी रूप देने का लिए । [ईशा भट्टाचारजी **बनाम** रघुनाथपुर नाफर अकादमी; (2013) 12 एस. सी. सी. 649 : पैराः 21 (21.1)]

(iv) उपरोक्त विवेचना के आधार पर यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि आक्षेपित आदेश दिनांक 29.12.2016 में गुण-दोष पर कोई विधिक त्रुटि नहीं है । अतः आक्षेपित आदेश न्याय संगत है ।

(v) अतः याचिका संख्या 5712/2017 भी बलहीन होने के कारण निरस्त की जाती है ।

11. याचिका सं. 58295/2016 तथा याचिका सं. 5712/2017 बलहीन होने के कारण निरस्त की जाती है । व्यय पर कोई आदेश पारित नहीं किया जा रहा है ।

याचिका खारिज की गई ।

मही.

फ्रांसिस वडक्कल

बनाम

केरल सरकार द्वारा सचिव खाद्य और सिविल आपूर्ति विभाग, सचिवालय, तिरुवनंतपुरम और अन्य

(2019 की सिविल रिट याचिका सं. 1918)

तारीख 8 मार्च, 2021

न्यायमूर्ति एन. नागरेश

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10) – धारा 3 [सपठित केरल राशन आदेश, 1966 का खंड 51(8)] – याची के गोदाम का निरीक्षण – स्टॉक की मात्रा में अनियमितता – याची को वसूली का नोटिस दिया जाना – याची द्वारा यह अभिवाक् किया गया है कि स्टॉक की मात्रा का सही आंकलन बोरियों को वास्तविक रूप से तौल कर ही किया जा सकता है अन्यथा नहीं – अभिवाक् खारिज – निरीक्षण अधिकारी द्वारा याची के विक्रेता की मौजूदगी में बोरियों की गिनती करके स्टॉक की मात्रा का आंकलन करना न्यायोचित है ।

केरल राशन आदेश, 1966 – खंड 51 – याची द्वारा बाजारी दर पर राशन सामग्री के मूल्य का निर्धारण किए जाने का अभिवाक् – अभिवाक् खारिज – रियायती दर पर मूल्य की गणना का न्यायोचित पाया जाना – बिना छूट राशन सामग्री का जो मूल्य तय किया गया है उसे रियायती दर कहा गया है, अत: याची से रियायती दर पर वसूली करना न्यायोचित है ।

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 – धारा 3 – वसूली की कार्यवाही में प्रत्यर्थी द्वारा विलंब की माफी का अभिवाक् किया जाना – गोदाम के निरीक्षण के 3 वर्ष बाद वसूली की कार्यवाही – याची का आक्षेप निरस्त किया जाना – याची द्वारा निदेशक, सिविल आपूर्ति के समक्ष फाइल की गई अपील के कारण प्रत्यर्थी द्वारा वसूली की कार्यवाही में विलंब हुआ जिसके लिए प्रत्यर्थी जिम्मेदार नहीं है और यह भी स्पष्ट नहीं किया गया है कि याची को विलंब से क्या नुकसान हुआ है, अत:

याची को विलंब का लाभ नहीं दिया जा सकता और उसकी याचिका मंजूर नहीं की जा सकती ।

इस मामले में, याची केरल राशन आदेश, 1966 के अधीन नियुक्त एक प्राधिकृत थोक वितरक है जिसने प्रदर्श पी-5, पी-7 और पी-9 आदेशों को चुनौती दी है । याची ने यह कथन किया है कि वह एक प्राधिकृत थोक वितरक (ए. डब्ल्यू. डी.) है जो उदमबंचोला तालुक में ए. डब्ल्यू. डी.-12 (वितरण केन्द्र) चलाता है । तारीख 30 अक्तूबर, 2014 को याची को एक नोटिस (प्रदर्श पी-1) तामील कराया गया जिसमें यह अभिकथन किया गया कि तालुक आपूर्ति अधिकारी (टी. एस. ओ.) ने राशन अधिकारी के साथ तारीख 30 अक्तूबर, 2010 को उसके थोक गोदाम का निरीक्षण किया था और उसने स्टॉक में कुछ भिन्नताएं पाईं । याची ने यह कथन किया है कि तारीख 30 अक्तूबर, 2010 को हुई जांच के दौरान गोदाम से संबंधित निरीक्षण बुक में कोई भी अनियमितता नहीं पाई गई । याची को इस निरीक्षण/जांच के 4 वर्ष बाद नोटिस तामील कराया गया । याची से 6,59,532/- रुपए की वसूली की ईप्सा की गई । याची को कोई भी गणना पत्र नहीं दिया गया । याची ने नोटिस (प्रदर्श पी-1) में अन्तर्विष्ट अभिकथनों से इनकार किया और तारीख 23 दिसंबर, 2014 को अपना जवाब (प्रदर्श पी-3) प्रस्तुत किया । तारीख 21 जुलाई, 2016 को अतिरिक्त स्पष्टीकरण (प्रदर्श पी-4) भी प्रस्तुत किया गया । जांच के पश्चात् तृतीय प्रत्यर्थी अर्थात् जिला कलक्टर ने एक आदेश जारी किया जिसके अनुसार याची के प्रतिवाद को खारिज किया गया था और यह आदेश किया गया कि स्टॉक में पाई गई राशन सामग्री की आर्थिक कीमत अर्थात् 6,59,532/- रुपए वसूल करने का आदेश किया गया और जुर्माने के रूप में 5,000/- रुपए तारीख 4 जुलाई, 2017 की कार्यवाही (प्रदर्श पी-5) के अनुसार वसूल करने के लिए भी आदेश किया गया । याची ने द्वितीय प्रत्यर्थी अर्थात् आयुक्त सिविल आपूर्ति के समक्ष तारीख 20 जुलाई, 2017 को अपील फाइल की । तारीख 13 दिसंबर, 2017 की कार्यवाही (प्रदर्श पी-7) के अनुसार आयुक्त सिविल आपूर्ति द्वारा अपील खारिज की गई । याची ने पुनरीक्षण याचिका (प्रदर्श पी-8) सरकार के समक्ष प्रस्तुत की । सरकार ने तारीख 15 दिसंबर, 2018 के आदेश (प्रदर्श पी-9) के अनुसार वह पुनरीक्षण आवेदन खारिज

कर दिया । याची ने प्रदर्श पी-5, प्रदर्श पी-7 और प्रदर्श पी-9 से व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष याचिका फाइल की है । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – याची की ओर से मुख्य दलील यह दी गई है कि राशन सामग्री में आई भिन्नता का अनुमान वास्तविक नाप-तौल के साथ नहीं किया गया है । किंतु यह उल्लेखनीय है कि याची एक प्राधिकृत थोक विक्रेता है जो थोक डिपो चलाता है और जूट की बोरियां भारतीय खाद्य निगम से प्राप्त की गई थीं । प्रत्यर्थियों ने गोदाम में रखे गए स्टॉक के भार का अनुमान लगाने के लिए केवल बोरियों की गिनती की है । अत: यह नहीं कहा जा सकता है कि राशन सामग्री के स्टॉक में बोरियों की गिनती स्टॉक तौलकर ठीक-ठीक पता नहीं की जा सकती । याची द्वारा यह प्रतिवाद किया गया है कि गोदाम का निरीक्षण उसकी और उसके विक्रयकर्ता की अनुपस्थिति में कराया गया है । रिट याचिका में किए गए अभिवाक् से यह प्रकट होता है कि अनुज्ञप्त परिसर का निरीक्षण विक्रयकर्ता श्री एम. के. दिलीप, जो उस समय प्राधिकृत थोक वितरण का भार संभाले हुए था, की मौजूदगी में तारीख 30 अक्तूबर, 2010 को कराया गया था । (पैरा 11 और 13)

याची की ओर से एक अन्य दलील यह दी गई है कि राशन सामग्री का मूल्य रियायती दर पर निकाला गया था । यह मूल्य बाजार-दर पर निकाला जाना चाहिए था । प्रत्यर्थियों ने जितनी रकम बरामद की उसे सही ठहराते हुए मूल्य का आंकलन किया । तथापि, प्रति-शपथपत्र में यह कथन किया गया है कि रियायती दर बिना छूट के तय की गई राशन सामग्री की कीमत है । अत:, रियायती दर शोध्य रकम की बरामदगी करना किसी प्रकार भी गलत नहीं है । (पैरा 12)

याची ने यह प्रतिवाद किया है कि गोदाम का निरीक्षण किए जाने के पश्चात् तीन वर्ष से अधिक समय बीत जाने पर कार्यवाही आरंभ की गई है । यह दलील दी गई है कि अपीलें सिविल आपूर्ति निदेशक के समक्ष लंबित थीं और साथ ही याची द्वारा फाइल की गई सिविल रिट याचिका सं. 34445/2010 लंबित थी । इन्हीं कार्यवाहियों के कारण कार्रवाई करने में विलंब हुआ । इसके अतिरिक्त यह उल्लेखनीय है कि याची ने इन कार्यवाहियों के आरंभ किए जाने में हुए विलंब से जो

प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है उसे इंगित नहीं किया है । इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि याची की दलील स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है । (पैरा 14)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 की सिविल रिट याचिका सं. 1918.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका ।

याची की ओर से श्री सी. के. पवित्रन और सुश्री नीनू पवित्रन

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री दीपा नारायणन (सरकारी प्लीडर)

न्यायमूर्ति एन. नागरेश – इस मामले में याची केरल राशन आदेश, 1966 के अधीन नियुक्त एक प्राधिकृत थोक वितरक है जिसने प्रदर्श पी-5, पी-7 और पी-9 आदेशों को चुनौती दी है ।

2. याची ने यह कथन किया है कि वह एक प्राधिकृत थोक वितरक (ए. डब्ल्यू. डी.) है जो उदमबंचोला तालुक में ए. डब्ल्यू. डी.-12 (वितरण केन्द्र) चलाता है । तारीख 30 अक्तूबर, 2014 को याची को एक नोटिस (प्रदर्श पी-1) तामील कराया गया जिसमें यह अभिकथन किया गया कि तालुक आपूर्ति अधिकारी (टी. एस. ओ.) ने राशन अधिकारी के साथ तारीख 30 अक्तूबर, 2010 को उसके थोक गोदाम का निरीक्षण किया था और उसने स्टॉक में कुछ भिन्नताएं पाईं । याची ने यह कथन किया है कि तारीख 30 अक्तूबर, 2010 को हुई जांच के दौरान गोदाम से संबंधित निरीक्षण बुक में कोई भी अनियमितता नहीं पाई गई । याची को इस निरीक्षण/जांच के 4 वर्ष बाद नोटिस तामील कराया गया । याची से 6,59,532/- रुपए की वसूली की ईप्सा की गई । याची को कोई भी गणना पत्र नहीं दिया गया ।

3. याची ने नोटिस (प्रदर्श पी-1) में अन्तर्विष्ट अभिकथनों से इनकार किया और तारीख 23 दिसंबर, 2014 को अपना जवाब (प्रदर्श पी-3) प्रस्तुत किया । तारीख 21 जुलाई, 2016 को अतिरिक्त स्पष्टीकरण (प्रदर्श पी-4) भी प्रस्तुत किया गया । जांच के पश्चात्

तृतीय प्रत्यर्थी अर्थात् जिला कलक्टर ने एक आदेश जारी किया जिसके अनुसार याची के प्रतिवाद को खारिज किया गया था और यह आदेश किया गया कि स्टॉक में पाई गई राशन सामग्री की आर्थिक कीमत अर्थात् 6,59,532/- रुपए वसूल करने का आदेश किया गया और जुर्माने के रूप में 5,000/- रुपए तारीख 4 जुलाई, 2017 की कार्यवाही (प्रदर्श पी-5) के अनुसार वसूल करने के लिए भी आदेश किया गया ।

4. याची ने द्वितीय प्रत्यर्थी अर्थात् आयुक्त सिविल आपूर्ति के समक्ष तारीख 20 जुलाई, 2017 को अपील फाइल की । तारीख 13 दिसंबर, 2017 की कार्यवाही (प्रदर्श पी-7) के अनुसार आयुक्त सिविल आपूर्ति द्वारा अपील खारिज की गई । याची ने पुनरीक्षण याचिका (प्रदर्श पी-8) सरकार के समक्ष प्रस्तुत की । सरकार ने तारीख 15 दिसंबर, 2018 के आदेश (प्रदर्श पी-9) के अनुसार वह पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिया । याची ने प्रदर्श पी-5, प्रदर्श पी-7 और प्रदर्श पी-9 से व्यथित होकर इस न्यायालय के समक्ष आवेदन किया है ।

5. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि राशन निरीक्षक द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य में यह कथन किया गया है कि निरीक्षण दल द्वारा गोदाम में रखे स्टॉक की पुष्टि नहीं की गई थी और केवल औसत लेकर बोरियों की गिनती की गई थी । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि अचानक की गई जांच के दौरान इस गिनती में भिन्नता पाई गई थी और यदि ठीक प्रकार गिनती की जाती तो ऐसी विसंगति न पाई जाती ।

6. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि आरोप ज्ञापन जारी किए जाने और मात्रा सुनिश्चित किए जाने में तीन वर्ष से अधिक समय का विलंब हुआ है जिसके परिणामस्वरूप याची पर सारभूत रूप से प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है । याची के विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि जब निरीक्षण किया गया था उस समय न तो याची और न ही उसका विक्रयकर्ता वहां मौजूद था ।

7. याची के विद्वान् ने यह भी दलील दी है कि केरल राशन आदेश, 1966 के खंड 51(8) के अनुसार मदों का अर्थ विक्रय-बिल के

अनुसार उसका मूल्य है । तथापि, रियायती दर पर राशन संबंधी वस्तुओं के मूल्य के अनुमान के आधार पर याची से उस रकम की वसूली की ईप्सा की गई है । अत: ऐसा अनुमान त्रुटिपूर्ण है ।

8. जिला आपूर्ति अधिकारी (चौथा प्रत्यर्थी) ने प्रति-शपथपत्र फाइल करते हुए रिट याचिका का विरोध किया है । प्रत्यर्थियों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् सरकारी प्लीडर ने यह दलील दी है कि अनुज्ञप्त परिसर के निरीक्षण से स्टॉक में भिन्नता पाई गई है और यह निरीक्षण याची के विक्रयकर्ता की मौजूदगी में कराया गया था । याची की इस दलील में कोई गुणता नहीं है कि स्टॉक की गिनती अन्य किसी तरीके से की जा सकती थी । प्रदर्श पी-7 एक आख्यापक आदेश है ।

9. विद्वान् सरकारी प्लीडर ने यह इंगित किया है कि याची के विरुद्ध कार्यवाही, सिविल आपूर्ति निदेशक के समक्ष अपीलों और सिविल रिट याचिका सं. 34445/2010 के लंबित रहने के कारण पहले से ही विलंबित थीं । रियायती दर का अर्थ बिना छूट के राशन सामग्री का वास्तविक मूल्य है । याची ने राशन सामग्री का दुर्विनियोग किया है और इसीलिए वह इस रकम का संदाय करने का जिम्मेदार है ।

10. मैंने याची के विद्वान् काउंसेल और प्रत्यर्थियों की ओर से विद्वान् सरकारी प्लीडर को सुना है ।

11. याची की ओर से मुख्य दलील यह दी गई है कि राशन सामग्री में आई भिन्नता का अनुमान वास्तविक नाप-तौल के साथ नहीं किया गया है । किंतु यह उल्लेखनीय है कि याची एक प्राधिकृत थोक विक्रेता है जो थोक डिपो चलाता है और जूट की बोरियां भारतीय खाद्य निगम से प्राप्त की गई थीं । प्रत्यर्थियों ने गोदाम में रखे गए स्टॉक के भार का अनुमान लगाने के लिए केवल बोरियों की गिनती की है । अत: यह नहीं कहा जा सकता है कि राशन सामग्री के स्टॉक में बोरियों की गिनती स्टॉक तौलकर ठीक-ठीक पता नहीं की जा सकती ।

12. याची की ओर से एक अन्य दलील यह दी गई है कि राशन सामग्री का मूल्य रियायती दर पर निकाला गया था । यह मूल्य बाजार-

दर पर निकाला जाना चाहिए था । प्रत्यर्थियों ने जितनी रकम बरामद की उसे सही ठहराते हुए मूल्य का आंकलन किया । तथापि, प्रति-शपथपत्र में यह कथन किया गया है कि रियायती दर बिना छूट के तय की गई राशन सामग्री की कीमत है । अत:, रियायती दर शोध्य रकम की बरामदगी करना किसी प्रकार भी गलत नहीं है ।

13. याची द्वारा यह प्रतिवाद किया गया है कि गोदाम का निरीक्षण उसकी और उसके विक्रयकर्ता की अनुपस्थिति में कराया गया है । रिट याचिका में किए गए अभिवाक् से यह प्रकट होता है कि अनुज्ञप्त परिसर का निरीक्षण विक्रयकर्ता श्री एम. के. दिलीप, जो उस समय प्राधिकृत थोक वितरण का भार संभाले हुए था, की मौजूदगी में तारीख 30 अक्तूबर, 2010 को कराया गया था ।

14. याची ने यह प्रतिवाद किया है कि गोदाम का निरीक्षण किए जाने के पश्चात् तीन वर्ष से अधिक समय बीत जाने पर कार्यवाही आरंभ की गई है । यह दलील दी गई है कि अपीलें सिविल आपूर्ति निदेशक के समक्ष लंबित थीं और साथ ही याची द्वारा फाइल की गई सिविल रिट याचिका सं. 34445/2010 लंबित थी । इन्हीं कार्यवाहियों के कारण कार्रवाई करने में विलंब हुआ । इसके अतिरिक्त यह उल्लेखनीय है कि याची ने इन कार्यवाहियों के आरंभ किए जाने में हुए विलंब से जो प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है उसे इंगित नहीं किया है । इन परिस्थितियों में, इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि याची की दलील स्वीकार करने का कोई कारण नहीं है ।

उपरोक्त तथ्यों और कारणों को दृष्टिगत करते हुए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि प्रदर्श पी-5, पी-7 और पी-9 में कोई भी अवैधता नहीं है । अत: रिट याचिका खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

अस.

बिन्दु

बनाम

कुलदीप

(2021 की वैवाहिक अपील सं. 28)

तारीख 23 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति विपिन सांघी और न्यायमूर्ति रेखा पल्ली

हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (1955 का 25) – धारा 13(1) और धारा 28 – विवाह-विच्छेद की डिक्री – पत्नी द्वारा पति और उसके परिवार के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया जाना – विवाह-विच्छेद का आधार माना जाना – पत्नी की ओर से यह आरोप लगाया जाना कि पति और उसके परिजन उसके साथ दुर्व्यवहार कर दहेज की मांग करते हैं – पति की प्रतिपरीक्षा करने में पत्नी का असफल हो जाना – क्रूरता कारित किए जाने की विशिष्ट घटना से संबंधित पत्नी द्वारा पति की प्रतिपरीक्षा ही नहीं की गई अपितु वह पति के विरुद्ध अपने आरोपों को भी सिद्ध नहीं कर सकी, अत: विवाह-विच्छेद संबंधी निचले न्यायालय के निर्णय में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता ।

वर्तमान अपील 2016 के एच. एम. ए. सं. 803 में अपर मुख्य न्यायाधीश कुटुम्ब न्यायालय, पश्चिमी जिला, तीस हजारी कोर्ट, दिल्ली द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2020 को पारित उस निर्णय के विरुद्ध हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में “अधिनियम” कहा गया है) की धारा 28 के अधीन फाइल की गई है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी/पति की ओर से प्रस्तुत की गई विवाह-विच्छेद की अर्जी इस अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन क्रूरता के आधार पर मंजूर की गई थी । संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 3 मई, 2013 को हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार अनुष्ठापित किया गया था किंतु वे तारीख 25 जून, 2016 से ही अलग-अलग रह रहे हैं । इस विवाह-बंधन से उनके यहां कोई संतान नहीं है ।

पक्षकारों के एक-दूसरे से अलग-अलग रहने के कुछ मास पश्चात् अर्थात् तारीख 10 अगस्त, 2016 को प्रत्यर्थी/पति ने अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन अर्जी प्रस्तुत की जिसमें उसने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की ईप्सा की । कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी की ओर से यह पक्षकथन रखा गया कि पति के परिजनों द्वारा अच्छा व्यवहार किए जाने और विवाह-बंधन को बनाए रखने में भरपूर प्रयास किए जाने के बावजूद अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्यों के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है । विवाह-विच्छेद अर्जी में क्रूरता संबंधी घटनाओं का उल्लेख है जिसमें यह भी बताया गया है कि अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी की भाभी को सीढ़ियों से धक्का दे दिया था, प्रत्यर्थी/पति की बहिन के विवाह के अवसर पर भी अपीलार्थी/पत्नी ने हंगामा किया था जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी के माता-पिता ने प्रत्यर्थी को स्थावर और जंगम संपत्ति से तारीख 17 मई, 2017 को राष्ट्रीय सहारा नामक समाचारपत्र में प्रकाशित सूचना के आधार पर बेदखल कर दिया था ; अपीलार्थी/पत्नी प्रत्यर्थी/पति के भाई को यह धमकी भी दिया करती थी वह दिल्ली पुलिस से उसकी नौकरी खत्म करवा देगी और इसी के आधार पर प्रत्यर्थी/पति का भाई उनसे अलग रहने लगा । अपीलार्थी ने विवाह-विच्छेद की अर्जी का विरोध करते हुए अपना लिखित कथन फाइल किया जिसमें उसने प्रत्यर्थी/पत्नी की ओर से लगाए गए आरोपों से इनकार किया और यह अभिकथन किया कि प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्य अपीलार्थी/पत्नी के साथ दहेज की मांग करके दुर्व्यवहार करते थे और कहते थे कि यदि दहेज की मांग पूरी नहीं की गई तो उसे उसके वैवाहिक गृह में रहने नहीं दिया जाएगा और इस मांग को पूरा करने के लिए उसके साथ बुरी तरह मार-पीट भी की जाती थी । पति और उसके परिजनों द्वारा किए गए इस व्यवहार से विवश होकर अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी और उसके परिजनों के विरुद्ध पुलिस को फोन किया ; तथापि, अपीलार्थी/पत्नी ने पुलिस थाने में कोई शिकायत इसलिए दर्ज नहीं कराई क्योंकि पक्षकारों के बीच मौखिक रूप से समझौता हो गया था । अपीलार्थी/पत्नी ने यह भी प्रकथन किया है कि विवाह-विच्छेद अर्जी मात्र इस कारण फाइल की गई है कि उसका आकस्मिक गर्भपात

होने के पश्चात् वह किसी संतान को जन्म देने के लिए अक्षम है । विद्वान् कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी/पति ने अपने अभिकथनों के समर्थन में शपथपत्र के माध्यम से साक्ष्य प्रस्तुत किया जिसमें उन सभी घटनाओं का उल्लेख किया जो अपीलार्थी की ओर से की गई क्रूरता को दर्शाती हैं जिसमें तारीख 30 दिसंबर, 2014 को हुई उस घटना का भी उल्लेख है जब अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी/पति की भाभी पर हमला किया था । इसके उत्तर में अपीलार्थी/पत्नी ने शपथपत्र के माध्यम से साक्ष्य प्रस्तुत किया जिसमें उसने सभी अभिकथनों से पूरी तरह इनकार किया । यद्यपि दोनों ओर से एक-दूसरे की प्रतिपरीक्षा की गई है जिससे यह पता चलता है कि अपीलार्थी/पत्नी प्रत्यर्थी/पति की प्रतिपरीक्षा क्रूरता से संबंधित बिन्दुओं पर नहीं कर सकी है । इन परिस्थितियों में कुटुम्ब न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय के अनुसार यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी/पत्नी के विरुद्ध प्रत्यर्थी/पति द्वारा किए गए क्रूरता के आरोप का खंडन नहीं किया गया है । परिणामतः प्रत्यर्थी के पक्ष में विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित की गई जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी/पति के साथ क्रूरता कारित की है । इस निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी/पत्नी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय का यह मत है कि अपीलार्थी/पत्नी ने पति/प्रत्यर्थी द्वारा किए गए विशिष्ट प्रकथनों को लेकर उसकी प्रतिपरीक्षा नहीं की है जिसके परिणामस्वरूप पत्नी यह दावा नहीं कर सकती कि विवाह-विच्छेद अर्जी में प्रत्यर्थी/पति द्वारा किए गए अभिकथन, जो प्रत्यर्थी/पति के अभिखंडित न किए गए परिसाक्ष्य और अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजों से और अधिक प्रबलित हो जाते हैं, सही नहीं हैं । प्रत्यर्थी/पति की प्रतिपरीक्षा न कराए जाने से अपीलार्थी/पत्नी, प्रत्यर्थी/पति के परिसाक्ष्य की विश्वसनीयता को निष्फल करने में असफल रही है । वास्तव में, यह भी पता चलता है कि क्रूरता कारित किए जाने की अभिकथित विशिष्ट घटना से संबंधित अपीलार्थी/पत्नी न केवल प्रत्यर्थी/पति की प्रतिपरीक्षा करने में असफल रही अपितु वह प्रत्यर्थी/पति के विरुद्ध किए गए अपने आरोपों को साबित करने के लिए कोई भी

साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकी । जहां तक अपीलार्थी की इस शिकायत का संबंध है कि प्रत्यर्थी/पति के परिवार के साथ की गई कोई भी तात्पर्यित क्रूरता को विवाह-विघटन के प्रयोजनार्थ क्रूरता नहीं माना जा सकता, न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थी/पत्नी द्वारा प्रत्यर्थी/पति के नातेदारों के साथ किए गए दुर्व्यवहार से निश्चित रूप से पति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और वह मानसिक पीड़ा से ग्रसित भी हो जाएगा । अपीलार्थी/पत्नी द्वारा किया गया कृत्य, जिसकी प्रत्याशा किसी वैवाहिक संबंध में नहीं की जा सकती, प्रत्यर्थी/पति के साथ मानसिक क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आएगा । अत: अपीलार्थी/पत्नी की ओर से दी गई इस दलील से न्यायालय सहमत नहीं है कि क्रूरता कारित किए जाने का कोई भी निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए था । इन सब कारणों के आधार पर न्यायालय की यह राय है कि आक्षेपित निर्णय में ऐसी कोई कमी दिखाई नहीं देती है जिसके आधार पर हस्तक्षेप किया जा सके । इसके अतिरिक्त, (i) पक्षकार तारीख 25 जून, 2016 से आज तक अलग-अलग रह रहे हैं, (ii) इस विवाह-बंधन से उनके यहां किसी संतान ने जन्म नहीं लिया है और (iii) पक्षकारों ने विशेषकर अपीलार्थी/पत्नी द्वारा वैवाहिक संबंधों को पुर:स्थापित करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया है, इसलिए न्यायालय अपीलार्थी/पत्नी द्वारा की गई इस प्रार्थना को स्वीकार करने के लिए आनत नहीं है कि प्रत्यर्थी/पति के साथ हुआ विवाह विघटित कर दिया जाए । (पैरा 10, 11 और 12)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2021 की वैवाहिक अपील सं. 28.

2016 के एच. एम. ए. सं. 803 में अपर मुख्य न्यायाधीश कुटुम्ब न्यायालय, पश्चिमी जिला, तीस हजारी कोर्ट, दिल्ली द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2020 को पारित निर्णय के विरुद्ध हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 28 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री सिंधु सकरवाल

प्रत्यर्थी की ओर से –

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति रेखा पल्ली ने दिया ।

न्या. पल्ली – वर्तमान अपील 2016 के एच. एम. ए. सं. 803 में अपर मुख्य न्यायाधीश कुटुम्ब न्यायालय, पश्चिमी जिला, तीस हजारी कोर्ट, दिल्ली द्वारा तारीख 17 दिसंबर, 2020 को पारित उस निर्णय के विरुद्ध हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) की धारा 28 के अधीन फाइल की गई है जिसके द्वारा प्रत्यर्थी/पति की ओर से प्रस्तुत की गई विवाह-विच्छेद की अर्जी इस अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन क्रूरता के आधार पर मंजूर की गई थी ।

2. संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि पक्षकारों के बीच विवाह तारीख 3 मई, 2013 को हिन्दू रीति-रिवाज के अनुसार अनुष्ठापित किया गया था किंतु वे तारीख 25 जून, 2016 से ही अलग-अलग रह रहे हैं । इस विवाह-बंधन से उनके यहां कोई संतान नहीं है ।

3. पक्षकारों के एक-दूसरे से अलग-अलग रहने के कुछ मास पश्चात् अर्थात् तारीख 10 अगस्त, 2016 को प्रत्यर्थी/पति ने अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन अर्जी प्रस्तुत की जिसमें उसने क्रूरता के आधार पर विवाह-विच्छेद की ईप्सा की । कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी की ओर से यह पक्षकथन रखा गया कि पति के परिजनों द्वारा अच्छा व्यवहार किए जाने और विवाह-बंधन को बनाए रखने में भरपूर प्रयास किए जाने के बावजूद अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्यों के साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है । विवाह-विच्छेद अर्जी में क्रूरता संबंधी घटनाओं का उल्लेख है जिसमें यह भी बताया गया है कि अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी की भाभी को सीढ़ियों से धक्का दे दिया था, प्रत्यर्थी/पति की बहिन के विवाह के अवसर पर भी अपीलार्थी/पत्नी ने हंगामा किया था जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी के माता-पिता ने प्रत्यर्थी को स्थावर और जंगम संपत्ति से तारीख 17 मई, 2017 को राष्ट्रीय सहारा नामक समाचारपत्र में प्रकाशित सूचना के आधार पर बेदखल कर दिया था ; अपीलार्थी/पत्नी प्रत्यर्थी/पति के भाई को यह धमकी भी दिया करती थी वह दिल्ली पुलिस से उसकी नौकरी खत्म करवा देगी और इसी के आधार पर प्रत्यर्थी/पति का भाई उनसे अलग रहने लगा ।

4. अपीलार्थी ने विवाह-विच्छेद की अर्जी का विरोध करते हुए अपना लिखित कथन फाइल किया जिसमें उसने प्रत्यर्थी/पत्नी की ओर से लगाए गए आरोपों से इनकार किया और यह अभिकथन किया कि प्रत्यर्थी और उसके परिवार के सदस्य अपीलार्थी/पत्नी के साथ दहेज की मांग करके दुर्व्यवहार करते थे और कहते थे कि यदि दहेज की मांग पूरी नहीं की गई तो उसे उसके वैवाहिक गृह में रहने नहीं दिया जाएगा और इस मांग को पूरा करने के लिए उसके साथ बुरी तरह मार-पीट भी की जाती थी । पति और उसके परिजनों द्वारा किए गए इस व्यवहार से विवश होकर अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी और उसके परिजनों के विरुद्ध पुलिस को फोन किया ; तथापि, अपीलार्थी/पत्नी ने पुलिस थाने में कोई शिकायत इसलिए दर्ज नहीं कराई क्योंकि पक्षकारों के बीच मौखिक रूप से समझौता हो गया था । अपीलार्थी/पत्नी ने यह भी प्रकथन किया है कि विवाह-विच्छेद अर्जी मात्र इस कारण फाइल की गई है कि उसका आकस्मिक गर्भपात होने के पश्चात् वह किसी संतान को जन्म देने के लिए अक्षम है ।

5. विद्वान् कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी/पति ने अपने अभिकथनों के समर्थन में शपथपत्र के माध्यम से साक्ष्य प्रस्तुत किया जिसमें उन सभी घटनाओं का उल्लेख किया जो अपीलार्थी की ओर से की गई क्रूरता को दर्शाती हैं जिसमें तारीख 30 दिसंबर, 2014 को हुई उस घटना का भी उल्लेख है जब अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी/पति की भाभी पर हमला किया था । इसके उत्तर में अपीलार्थी/पत्नी ने शपथपत्र के माध्यम से साक्ष्य प्रस्तुत किया जिसमें उसने सभी अभिकथनों से पूरी तरह इनकार किया । यद्यपि दोनों ओर से एक-दूसरे की प्रतिपरीक्षा की गई है जिससे यह पता चलता है कि अपीलार्थी/पत्नी प्रत्यर्थी/पति की प्रतिपरीक्षा क्रूरता से संबंधित बिन्दुओं पर नहीं कर सकी है ।

6. इन परिस्थितियों में कुटुम्ब न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय के अनुसार यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी/पत्नी के विरुद्ध प्रत्यर्थी/पति द्वारा किए गए क्रूरता के आरोप का खंडन नहीं किया गया है । परिणामत: प्रत्यर्थी के पक्ष में विवाह-विच्छेद की डिक्री पारित की गई जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि अपीलार्थी/पत्नी ने

प्रत्यर्थी/पति के साथ क्रूरता कारित की है । कुटुम्ब न्यायालय के निर्णय का सुसंगत भाग निम्न प्रकार है :–

> "34. उपरोक्त चर्चा से यह दर्शित होता है कि प्रत्यर्थी/पति ने अर्जीदार के बड़े भाई की पत्नी पर हमला किया था ; उस महिला ने अर्जीदार की बहिन के विवाह के समय काफी हंगामा किया था ; उसके इस कृत्य के परिणामस्वरूप अर्जीदार को अपने परिवार से अलग होना पड़ा । वह धमकी भरी शिकायतें किया करती थी जिससे अर्जीदार के भाई की नौकरी खत्म हो गई । प्रत्यर्थी/पत्नी ने अर्जीदार के परिवार के सदस्यों के साथ अभद्र व्यवहार किया था । मेरी यह राय है कि प्रत्यर्थी ने ऐसा कृत्य किया है कि अर्जीदार से अब यह नहीं कहा जा सकता है कि वह उसके साथ रहे । इसके अतिरिक्त यह भी प्रतीत होता है कि पक्षकारों के बीच समझौते की कोई संभावना नहीं है ।
>
> 35. उपरोक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया है कि विवाह सम्पन्न होने के पश्चात्, प्रत्यर्थी ने अर्जीदार के साथ हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 13(1)(i-क) के अधीन क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया । इस प्रकार, विवाद्यक सं. 1 प्रत्यर्थी के विरुद्ध और याची के पक्ष में विनिश्चित किया गया है ।"

7. अपील के समर्थन में, अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि कुटुम्ब न्यायालय ने यह निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण निकाला है कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी/पति की भाभी पर हमला किया था । विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि विद्वान् कुटुम्ब न्यायालय यह मूल्यांकन करने में असफल रहा है कि प्रत्यर्थी/पति का एकमात्र परिसाक्ष्य तारीख 30 दिसंबर, 2014 की तात्पर्यित घटना को साबित करने के लिए पर्याप्त नहीं है क्योंकि प्रत्यर्थी/पति अभिकथित घटना के समय घर में मौजूद ही नहीं था । इसके अतिरिक्त जहां तक इस बात का संबंध है कि प्रत्यर्थी/पति की भाभी के मोबाइल फोन से पुलिस को कॉल की गई थी, अपीलार्थी/पत्नी की ओर से यह दलील दी गई है कि

चूंकि उसे अपने वैवाहिक गृह में मोबाइल फोन रखने की अनुमति नहीं थी, इसलिए वह उस दिन हुई घटना के संबंध में शिकायत नहीं कर सकी थी, जबकि प्रत्यर्थी/पति की भाभी मिथ्या शिकायत करने में कामयाब हो गई जिस पर कुटुम्ब न्यायालय द्वारा जो विश्वास किया गया है वह त्रुटिपूर्ण है । अपीलार्थी/पत्नी की ओर से यह भी दलील दी गई है कि किसी भी स्थिति में प्रत्यर्थी/पति द्वारा लगाए गए किसी भी आरोप से यहां तक कि इस आरोप से भी प्रत्यर्थी/पति के विरुद्ध क्रूरता साबित नहीं होती है कि अपीलार्थी/पत्नी ने प्रत्यर्थी/पति की भाभी पर हमला किया था, अतः मात्र इस आधार पर ही आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

8. हमने अपीलार्थी/पत्नी के विद्वान् काउंसेल को सुना है और आक्षेपित निर्णय सहित अभिलेख का परिशीलन किया है ।

9. अपीलार्थी/पत्नी के विद्वान् काउंसेल द्वारा दी गई यह दलील कि क्रूरता कारित किए जाने से संबंधित उसके विरुद्ध कोई भी निष्कर्ष मात्र प्रत्यर्थी/पति के परिसाक्ष्य के आधार पर नहीं निकाला जा सकता और इस पर विचार इस तथ्य को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए कि अपीलार्थी/पत्नी कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थी/पति द्वारा किए गए विशिष्ट प्रकथनों को अभिखंडित करने में असफल रही है ।

10. हमारा यह मत है कि अपीलार्थी/पत्नी ने पति/प्रत्यर्थी द्वारा किए गए विशिष्ट प्रकथनों को लेकर उसकी प्रतिपरीक्षा नहीं की है जिसके परिणामस्वरूप पत्नी यह दावा नहीं कर सकती कि विवाह-विच्छेद अर्जी में प्रत्यर्थी/पति द्वारा किए गए अभिकथन, जो प्रत्यर्थी/पति के अभिखंडित न किए गए परिसाक्ष्य और अभिलेख पर प्रस्तुत दस्तावेजों से और अधिक प्रबलित हो जाते हैं, सही नहीं हैं । प्रत्यर्थी/पति की प्रतिपरीक्षा न कराए जाने से अपीलार्थी/पत्नी, प्रत्यर्थी/पति के परिसाक्ष्य की विश्वसनीयता को निष्फल करने में असफल रही है । वास्तव में, यह भी पता चलता है कि क्रूरता कारित किए जाने की अभिकथित विशिष्ट घटना से संबंधित अपीलार्थी/पत्नी न केवल प्रत्यर्थी/पति की प्रतिपरीक्षा

करने में असफल रही अपितु वह प्रत्यर्थी/पति के विरुद्ध किए गए अपने आरोपों को साबित करने के लिए कोई भी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं कर सकी ।

11. जहां तक अपीलार्थी की इस शिकायत का संबंध है कि प्रत्यर्थी/पति के परिवार के साथ की गई कोई भी तात्पर्यित क्रूरता को विवाह-विघटन के प्रयोजनार्थ क्रूरता नहीं माना जा सकता, हमारी यह सुविचारित राय है कि अपीलार्थी/पत्नी द्वारा प्रत्यर्थी/पति के नातेदारों के साथ किए गए दुर्व्यवहार से निश्चित रूप से पति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और वह मानसिक पीड़ा से ग्रसित भी हो जाएगा । अपीलार्थी/पत्नी द्वारा किया गया कृत्य, जिसकी प्रत्याशा किसी वैवाहिक संबंध में नहीं की जा सकती, प्रत्यर्थी/पति के साथ मानसिक क्रूरता कारित किए जाने की कोटि में आएगा । अत: अपीलार्थी/पत्नी की ओर से दी गई इस दलील से हम सहमत नहीं हैं कि क्रूरता कारित किए जाने का कोई भी निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए था ।

12. इन सब कारणों के आधार पर हमारी यह राय है कि आक्षेपित निर्णय में ऐसी कोई कमी दिखाई नहीं देती है जिसके आधार पर हस्तक्षेप किया जा सके । इसके अतिरिक्त, (i) पक्षकार तारीख 25 जून, 2016 से आज तक अलग-अलग रह रहे हैं, (ii) इस विवाह-बंधन से उनके यहां किसी संतान ने जन्म नहीं लिया है, और (iii) पक्षकारों ने विशेषकर अपीलार्थी/पत्नी द्वारा वैवाहिक संबंधों को पुर:स्थापित करने के लिए कोई प्रयास नहीं किया गया है, इसलिए हम अपीलार्थी/पत्नी द्वारा की गई इस प्रार्थना को स्वीकार करने के लिए आनत नहीं हैं कि प्रत्यर्थी/पति के साथ हुआ विवाह विघटित कर दिया जाए ।

तद्नुसार वर्तमान अपील लंबित आवेदन के साथ खारिज की जाती है और खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

अस.

इफ्तेखार शहजाद हुसैन और अन्य

बनाम

वकील अन्सारी और अन्य

(2017 की कुटुम्ब न्यायालय अपील सं. 11 और 12)

तारीख 26 फरवरी, 2021

न्यायमूर्ति ए. एस. चन्दूरकर और न्यायमूर्ति एन. बी. सूर्यवंशी

संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 (1890 का 8) – धारा 25 – बच्चे की अभिरक्षा – जैविक माता-पिता द्वारा बच्चे की अभिरक्षा का दावा – अवैध संबंधों के परिणामस्वरूप बच्चे का जन्म होना – बच्चे के जन्म के पूर्व निकाह का साबित न किया जाना – दत्तक माता-पिता द्वारा बच्चे का भरणपोषण किया जाना – बच्चे का कल्याण – दत्तक माता-पिता के साथ बच्चे का लगाव – बच्चे को जन्म के पांच दिन बाद ही दत्तक माता-पिता को दे दिया गया था जिन्होंने बच्चे का गंभीर बीमारी के दौरान भरपूर चिकित्सीय उपचार कराया है तथा साथ ही उसके स्वास्थ्य, शिक्षा, नैतिकता और मानसिक विकास पर ध्यान भी दिया है और उसे दत्तक माता-पिता के साथ मानसिक और भावनात्मक रूप से लगाव हो गया है और उसका पालन-पोषण सौहार्द वातावरण में किया जा रहा है, अत: बच्चे का दत्तक माता-पिता की अभिरक्षा में रहना ही न्यायोचित है ।

ये दोनों अपीलें कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) उस एक ही निर्णय का अपवाद हैं जो 2015 की अर्जी सं. डी-31 और 2015 की अर्जी सं. डी-55 में कुटुम्ब न्यायालय, नागपुर द्वारा पारित किया गया था जिसके अनुसार में आशमां नामक बच्चे की अभिरक्षा के लिए अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अर्जी सं. 31 खारिज कर दी गई और अप्राप्तवय के संरक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने हेतु प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से फाइल की गई अर्जी सं. डी-55 को डिक्रीत किया गया । चूंकि इन

दोनों अपीलों में एक ही निर्णय को चुनौती दी गई है इसलिए इनका निपटारा एक ही निर्णय द्वारा किया जा रहा है । सुविधा के लिए पक्षकारों को उनके प्रथम नाम से निर्दिष्ट किया जा रहा है । (i) 2015 की अर्जी सं. डी-31 – इफ्तेखार और अफसाना ने यह अर्जी संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 की धारा 25 के अधीन बच्चे की अभिरक्षा प्रदान किए जाने हेतु फाइल की गई है जिसमें यह दावा किया गया है कि वे उसके जैविक माता-पिता हैं । उन्होंने यह अभिवाक् किया कि उनके बीच 8 वर्ष से प्रेम-प्रसंग चल रहा था और उन्होंने 26 जून, 2013 को विवाह किया । उक्त विवाह उनके माता-पिता की सहमति के बिना सम्पन्न हुआ । इसी दौरान इस विवाह के 4 वर्ष पूर्व इफ्तेखार का विवाह बलपूर्वक शबनम के साथ करा दिया । शबनम के साथ हुए इस विवाह से एक पुत्री और पुत्र ने जन्म लिया जिनके नाम क्रमश: अश्मीरा फातिमा और इजान हैं । तारीख 26 जून, 2013 को हुए इफ्तेखार और अफसाना के विवाह के पश्चात् भी वे अपने-अपने माता-पिता के यहां रहते थे । इफ्तेखार के साथ हुए इस विवाह से अफसाना गर्भवती हो गई । अफसाना ने अपने माता-पिता को गर्भवती होने के संबंध में सूचित किया और उस समय वह छह मास से गर्भवती थी । इसके पश्चात् इफ्तेखार और अफसाना ने अभिकथित रूप से विवाह करार निष्पादित किया जिसे कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है । तारीख 30 अगस्त, 2014 को अफसाना ने मेओ अस्पताल, नागपुर में एक बच्चे (जिसे इसमें इसके पश्चात् "बच्चा" कहा गया है) को जन्म दिया जो जन्म के समय पीलिया रोग से ग्रसित था । अस्पताल से छुट्टी होने के पश्चात् अफसाना अपने वैवाहिक गृह गई किंतु अगले ही दिन उसकी माता और बहिन पुत्र के साथ अफसाना को वहां से ले गई और इफ्तेखार अमरावती चला गया । अफसाना को यह बताया गया कि इफ्तेखार ने उसे छोड़ दिया है । उसे यह भी बताया गया कि उसके पुत्र की दशा गंभीर है । अफसाना के माता-पिता ने बच्चे का बेहतर उपचार कराने में अपनी मजबूरी दर्शाई । उस समय अफसाना की मानसिक स्थिति ठीक नहीं थी और माता-पिता के कहने पर अफसाना ने उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दे दिया और उस समय अफसाना के हस्ताक्षर प्राप्त किए गए । अफसाना इफ्तेखार से संपर्क

नहीं कर सकी । यह भी प्रकथन किया गया कि अफसाना के पिता ने उसे बताया था कि पीलिया के कारण बच्चे की मृत्यु हो गई है । यद्यपि इफ्तेखार ने अफसाना से संपर्क करने का प्रयास किया किंतु संपर्क न हो सका । इसके पश्चात् उसने पुलिस थाना यशोधरा नगर में मौखिक सूचना दर्ज कराई । उसे पता चला कि वह बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत को दत्तक ग्रहण में दिया गया । जब इफ्तेखार और अफसाना ने वकील अन्सारी और डा. निकहत से संपर्क किया तब उन्होंने बच्चा वापस करने के लिए 2,40,000/- रुपए की मांग की जिस पर इफ्तेखार सहमत हो गया । तथापि, इस विवाद का निपटारा न हो सका, परिणामस्वरूप इफ्तेखार और अफसाना ने तारीख 12 मई, 2015 को पुलिस थाना यशोधरा नगर में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । इफ्तेखार और अफसाना ने अपनी अर्जी में यह प्रकथन किया कि दत्तक ग्रहण विलेख पर उसके हस्ताक्षर बलपूर्वक लिए गए थे और मुस्लिम विधि के अधीन दत्तक ग्रहण को मान्यता नहीं दी गई है । अफसाना अवसाद का शिकार हो गई और मनोचिकित्सक द्वारा उसका उपचार किया जाने लगा । इफ्तेखार ऑटोरिक्शा चालक था और इस बच्चे का भरणपोषण कर सकता था । अत: इफ्तेखार और अफसाना ने यह दावा किया है कि जैविक माता-पिता होने के कारण वे ही बच्चे को अपनी अभिरक्षा में लेने के हकदार हैं । (ii) वकील अन्सारी और डा. निकहत ने लिखित कथन फाइल किया और इफ्तेखार और अफसाना के दावे का विरोध किया । उन्होंने यह प्रतिवाद किया कि वकील अन्सारी एक व्यापारी है और डा. निकहत बी. यू. एम. एस. चिकित्सक है जो अपना चिकित्सा व्यवसाय करती है । यद्यपि उनका विवाह 14 वर्ष पूर्व हुआ था फिर भी उनके यहां कोई संतान पैदा नहीं हुई । अफसाना के पिता, जिनका नाम मुस्लिम है, उस अर्जी में प्रत्यर्थी सं. 3 थे, कई वर्षों से डा. निकहत के पिता की कपड़े की दुकान में विक्रयकर्ता के रूप में कार्य कर रहे थे । मुस्लिम ने इस स्थिति के बारे में डा. निकहत को बताया कि अफसाना ने अविवाहित रहने के दौरान उसने मेओ अस्पताल, नागपुर में एक बच्चे को जन्म दिया था जो पीलिया से ग्रसित था और जब उसने इफ्तेखार को इस संबंध में बताया तो उसने अफसाना और उसके पुत्र को स्वीकार करने से इनकार कर दिया । डा. निकहत के पिता ने उस बच्चे

को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में देने को इस आधार पर कहा कि वे उसका चिकित्सा उपचार करेंगे और उसके भविष्य का ध्यान रखेंगे । तद्नुसार, अफसाना उस बच्चे को देने के लिए सहमत हो गई । इस संबंध में तारीख 27 अक्तूबर, 2014 को दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-55) निष्पादित किया गया जिसे नोटरी पब्लिक द्वारा अनुप्रमाणित कराया गया । बच्चे को अभिरक्षा में लेने के पश्चात् डा. निकहत ने डा. बिसिकर अस्पताल में भर्ती कराया और उसके पश्चात् ओएसिस नर्सिंग होम में । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने इस बच्चे के चिकित्सा उपचार में लगभग 2,50,000/- रुपए खर्च किए । इसके पश्चात् अफसाना 5 महीने तक अपने माता-पिता के घर पर रही । जब वह तारीख 2 फरवरी, 2015 को चिकित्सा उपचार हेतु अपनी चाची के साथ मेओ अस्पताल गई, वह वापस नहीं आई । तद्नुसार, उसकी चाची ने अफसाना के लापता होने के संबंध में पुलिस थाना तहसील, नागपुर में रिपोर्ट सं. 5/2015 (प्रदर्श-56) दर्ज कराई । इफ्तेखार और अफसाना दोनों का पता तारीख 5 फरवरी, 2015 को चला और उन्होंने पुलिस को यह कथन दिया कि उन्होंने वर्ष 2012 में निकाह किया था और पिछले 7 वर्ष से उनका प्रेम-प्रसंग चल रहा था और अफसाना इफ्तेखार के साथ अपनी इच्छा से रह रही थी । इसके पश्चात् इफ्तेखार और अफसाना ने वकील अन्सारी और डा. निकहत से संपर्क किया और अपने बच्चे की अभिरक्षा की मांग की जिस पर उनसे 2,50,000/- रुपए की मांग वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा की गई । इफ्तेखार और अफसाना द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के पश्चात् वकील अन्सारी और डा. निकहत ने तारीख 14 मई, 2015 को अग्रिम जमानत मंजूर कराई । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने यह दावा किया है कि इफ्तेखार और अफसाना का यह बच्चा अधरमच है और इफ्तेखार के पास आय का कोई भी स्रोत नहीं है । स्वीकृतत: इफ्तेखार ने शबनम से विवाह किया और इस विवाह से दो बच्चों ने जन्म लिया । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने यह दावा किया है कि उनकी आर्थिक स्थिति काफी बेहतर है । बच्चे से वकील अन्सारी और डा. निकहत को स्नेह हो गया था और यदि इस बच्चे को इफ्तेखार और अफसाना की अभिरक्षा में दिया गया तो उस बच्चे को दरिद्रता और अशिक्षित वातावरण से जूझना पड़ेगा । इसके

प्रतिकूल, वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे को बेहतरीन जीवन उपलब्ध कराने की स्थिति में हैं । (iii) अफसाना के पिता मुस्लिम ने न्यायालय में उपस्थित होकर वकील अन्सारी और डा. निकहत के मामले का समर्थन किया है । उसने यह प्रतिवाद किया है कि शब-ए-बारात के अवसर पर अफसाना पाण्डू नगर, नागपुर स्थित अपनी बड़ी बहिन की ससुराल गई, वहां उसने अपने और इफ्तेखार के बीच प्रेम-संबंध और गर्भवती होने के बारे में बताया । इस संबंध में जानकारी प्राप्त होने के पश्चात् मुस्लिम ने अफसाना का विवाह इफ्तेखार के साथ कराने का भरपूर प्रयास किया, किंतु यह पता चला कि इफ्तेखार तो पहले से ही विवाहित था और उसके बच्चे भी थे । जब इफ्तेखार का सामना मुस्लिम के परिवार से हुआ तब उसने अफसाना के साथ अपने किसी भी प्रकार के संबंध होने से इनकार किया और इसके परिणामस्वरूप उसने अफसाना को गर्भ के अंतिम चरण में असहाय छोड़ दिया । इफ्तेखार और उसके परिवार के सदस्यों ने इस पर जोर दिया कि अफसाना अपना गर्भपात करा ले किंतु ऐसा संभव इसलिए नहीं था कि वह गर्भ की अंतिम स्थिति थी । प्रसव के पश्चात् नवजात शिशु गंभीर रूप से पीलिया के रोग से ग्रसित था । उस बच्चे की देखभाल के लिए कोई नहीं था क्योंकि अफसाना अविवाहित थी और उसे इफ्तेखार ने छोड़ा हुआ था । मुस्लिम के लिए उस बच्चे के चिकित्सा उपचार का खर्चा वहन करना संभव नहीं था । वह सामाजिक कारणों से अविवाहित अफसाना और उसके बच्चे को अपने घर पर रखने की स्थिति में नहीं था । अतः, उसने डा. निकहत के पिता के प्रस्ताव को स्वीकार किया कि वह उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दे दे जिनके विवाह को 14 वर्ष बीत चुके थे और उनके यहां कोई संतान नहीं थी और इस दंपत्ति ने उस बच्चे को अच्छी चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में अपना बच्चा स्वेच्छया दिया था । उसने यह भी प्रतिवाद किया है कि इफ्तेखार और अफसाना एक अत्यंत साधारण और छोटे-से घर में रहते थे जहां उनकी सुविधा के लिए कुछ नहीं था । वे निर्धनता और अशिक्षा के शिकार थे और वे इस स्थिति में नहीं थे कि बच्चे को कोई भी सकारात्मक सुविधा दें । विद्वान् काउंसेल ने यह भी प्रतिवाद

किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत के शिक्षित होने तथा उनकी आर्थिक अवस्था मजबूत होने के तथ्य पर विचार किया गया है । इस बच्चे के हित और कल्याण के लिए उसका वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में बने रहना चाहिए । अत: विद्वान् काउंसेल ने 2015 की अर्जी सं. डी-31 के खारिज किए जाने की प्रार्थना की है । (iv) 2015 की अर्जी सं. 55 : वकील अन्सारी और डा. निकहत ने यह अर्जी उन्हीं अभिवाक् के साथ फाइल की थी जिनका उल्लेख उन्होंने 2015 की अर्जी सं. डी-31 में किया गया है । उन्होंने यह प्रार्थना की है कि उन्हें इस बच्चे का संरक्षक नियुक्त किया जाए । इफ्तेखार और अफसाना ने उनकी इस अर्जी का विरोध करते हुए लिखित कथन फाइल किया है जिसमें उन्होंने उन्हीं प्रतिवादों को दोहराया है जो उन्होंने 2015 की अर्जी सं. डी-31 में किए थे । विद्वान् कुटुम्ब न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् इफ्तेखार और अफसाना द्वारा फाइल की गई अर्जी खारिज कर दी और वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा फाइल की गई अर्जी डिक्रीत कर दी । इसलिए वर्तमान दोनों अपीलों में उक्त विनिश्चय को चुनौती दी गई है । अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अफसाना 30 अगस्त, 2014 को बच्चे को जन्म दिया था और उसके जन्म प्रमाणपत्र (प्रदर्श-38) में इफ्तेखार और अफसाना का नाम माता-पिता के रूप में दर्ज है । स्वीकृतत:, अफसाना गर्भ धारण करने से लेकर बच्चे के जन्म के समय तक अपने पिता के घर पर थी । यह विवादित नहीं है कि जन्म के पश्चात् बच्चे को पीलिया का रोग हो गया था और उसकी दशा गंभीर हो गई थी और जन्म के पांचवे दिन वह बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दे दिया गया । साक्ष्य से यह भी स्पष्ट है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा बच्चे की ठीक प्रकार चिकित्सा उपचार कराए जाने के कारण वह पीलिया रोग से ठीक हो गया । यद्यपि इफ्तेखार और अफसाना के विद्वान् अधिवक्ता ने तारीख 26 जून, 2013 के निकाह-नामे (प्रदर्श-37) का अवलंब लिया है किंतु वह साक्ष्य की दृष्टि से ग्राह्य नहीं है क्योंकि उसके अन्तर्वस्तु

तर्कसम्मत साक्ष्य से साबित नहीं होती है । जो साक्षी निकाह के समय अभिकथित रूप से मौजूद थे और जिन्होंने निकाह-नामे पर हस्ताक्षर किए थे, उनकी परीक्षा नहीं कराई गई है, अत: उक्त निकाह-नामे का अवलंब नहीं लिया जा सकता । अभिलेख पर यह स्वीकृत स्थिति है कि इफ्तेखार का विवाह, अफसाना द्वारा बच्चे को जन्म दिए जाने के 3 वर्ष पूर्व, शबनम के साथ हुआ था । उस समय इफ्तेखार और शबनम के पास एक पुत्री थी जिसकी आयु 2 वर्ष थी और इफ्तेखार शबनम और उसकी पुत्री के साथ रहता था जबकि अफसाना अपने पिता के साथ रहती थी । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से प्रथमदृष्ट्या यह प्रतीत होता है कि बच्चे का जन्म इफ्तेखार और अफसाना के बीच प्रेम-प्रसंग के परिणामस्वरूप हुआ था और उस समय वे विवाहित नहीं थे । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि अफसाना मानसिक रोग का इलाज करवा रही थी । मुस्लिम के साक्ष्य से उस विशिष्ट स्थिति का पता चलता है जिसके दौरान उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दिया गया । मुस्लिम ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह अविवाहित पुत्री का पिता है जिसने बच्चे को जन्म दिया है । इफ्तेखार ने अफसाना और बच्चे को अपनाने से इनकार किया है । परिवार की मान-मर्यादा बनाए रखने के लिए और आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण अत्यधिक बीमार बच्चे को चिकित्सा सुविधा दिलाने के लिए उसने अफसाना की सहमति से बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में देने का निर्णय लिया । इस संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता कि दत्तक ग्रहण का सिद्धांत मुस्लिम विधि से मेल नहीं खाता है, अत: मात्र दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-55) का अवलंब वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा नहीं लिया जा सकता । तथापि, उक्त अधिनियम की धारा 4 के निबंधनों में कुटुंब न्यायालय उन दस्तावेजों पर विचार करने हेतु सशक्त है जो विवाद के निपटारे में प्रभावपूर्ण रूप से सहायक हैं । विद्वान् कुटुंब न्यायालय सांपाश्विक प्रयोजन हेतु विचार कर सकता है । प्रदर्श-55 में यह उल्लेख किया गया है कि अफसाना ने अवैध संबंधों के परिणामस्वरूप इस बच्चे को जन्म दिया है और बच्चे को उच्चतर शिक्षा दिलाने और भविष्य को बनाने के लिए उसे दत्तक ग्रहण में दिया जा रहा था । प्रदर्श-55 पर अफसाना,

वकील अन्सारी, डा. निकहत और मुस्लिम के फोटो लगे हुए थे और साथ ही दो साक्षियों के फोटो भी चिपके हुए थे और इन सभी व्यक्तियों ने तारीख 27 अक्तूबर, 2014 को यह दस्तावेज निष्पादित किया था । हस्ताक्षर करने वाले इन सभी व्यक्तियों के आधार कार्ड भी प्रदर्श-55 के साथ संलग्न हैं । इफ्तेखार और अफसाना के निकाह की 3 तारीखें अभिलेख पर दिखाई देती हैं । इन दोनों ने अपने अभिवाक् में यह दावा किया है कि उनका निकाह, निकाह-नामा (प्रदर्श-7/1) के अनुसार 26 जून, 2013 को सम्पन्न हुआ था । तारीख 8 फरवरी, 2015 को निष्पादित निकाह-नामा (प्रदर्श-52) के रूप में अभिलेख पर उपलब्ध है । अफसाना के लापता होने के संबंध में दर्ज कराई गई शिकायत में इफ्तेखार और अफसाना के कथन (प्रदर्श-72 और प्रदर्श-73) के रूप में अभिलिखित किए गए थे । उन कथनों में दोनों ने यह उल्लेख किया था कि उनका विवाह वर्ष 2012 में हो गया था । इफ्तेखार और अफसाना न्यायालय में अपने निकाह का सबूत देने में असफल रहे हैं और उन्होंने निकाह-सभा में उपस्थित साक्षियों अथवा निकाह पढ़ाने वाले काज़ी की परीक्षा नहीं कराई है । अत:, उनका यह दावा स्वीकार्य नहीं है कि उन्होंने निकाह कर लिया था । बच्चे की अभिरक्षा एक अत्यंत संवेदनशील मुद्दा है जो भावनाओं से जुड़ा होता है । प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ही बच्चे के कल्याण पर विचार करना चाहिए । बच्चे के प्रति माता और पिता की भावनाओं और बच्चे के कल्याण के बीच संतुलन होना चाहिए । माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए यदि हम वर्तमान मामले पर विचार करें तब अभिलेख से यह पता चलता है कि अफसाना इफ्तेखार और उसकी प्रथम पत्नी शबनम और उनके बच्चों अर्थात अश्मीरा फातिमा और पुत्र इजान के साथ रहती है । अफसाना ने हाल ही में एक पुत्र को जन्म दिया है इस प्रकार इफ्तेखार की जिम्मेदारी दो पत्नियों और तीन बच्चों का भरणपोषण करना है । स्वीकृत रूप से इफ्तेखार रिक्शा चालक है, उसने यह रिक्शा ऋण लेकर क्रय किया है । उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी प्रतीत नहीं होती है । इफ्तेखार और अफसाना यह साबित करने में असफल रहे हैं कि इफ्तेखार की आमदनी नियमित रूप से चल रही थी । प्रदर्श-57 और प्रदर्श-58 से, जो कि

फोटोग्राफ हैं, यह प्रकट होता है कि इफ्तेखार और अफसाना का मकान टिन से बना हुआ है और यह अस्थायी प्रतीत होता है, इस प्रकार ऐसा लगता है कि उनके पास कोई स्थायी आवास नहीं है । इफ्तेखार ने यह भी स्वीकार किया है कि अभिसाक्ष्य देने की तारीख तक उसकी पुत्री अश्मीरा फातिमा स्कूल नहीं जा रही थी । अफसाना मानसिक रोग का इलाज करवा रही थी । स्वीकृतत: बच्चे का जन्म तारीख 30 अगस्त, 2014 को हुआ है और उसे उसके जन्म के 5 दिन बाद ही वकील अन्सारी और डा. निकहत को सौंप दिया गया था । उस समय बच्चा पीलिया से ग्रसित था और उसकी दशा गंभीर थी । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने उस बच्चे के उपचार के लिए विशेष चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जिसके परिणामस्वरूप बीमारी से ठीक हो गया । उसी समय से उस बच्चे का पालन-पोषण वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा ही किया गया है, अब बच्चे की आयु 6 वर्ष है और वह मानसिक और भावनात्मक रूप से वकील अन्सारी और डा. निकहत से जुड़ गया है । बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत को अपने माता-पिता ही समझने लगा है । ऐसा प्रतीत होता है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे की देखरेख कर सकते हैं और भलीभांति उसे सुविधाएं उपलब्ध करा सकते हैं । वे बच्चे का भविष्य भी संभाल सकते हैं । यदि इस बच्चे को इफ्तेखार और अफसाना की अभिरक्षा में दिया जाता है तो इससे बच्चे की भावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । वह अपने वर्तमान परिवार अर्थात् वकील अन्सारी और डा. निकहत से बिछुड़ जाएगा और उसे बिल्कुल अजनबी वातावरण में रहना पड़ेगा जिसके लिए उसे समझौता करना अत्यंत कठिन होगा । अभिलेख से यह उपदर्शित होता है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत की आर्थिक स्थिति बेहतर है जो बच्चे को अच्छा जीवन और अच्छी शिक्षा दे सकते हैं । इन दोनों दंपत्तियों पर इस बच्चे के भार के अतिरिक्त कोई और जिम्मेदारी नहीं है । हम यह स्पष्ट करते हैं कि हम बच्चे के कल्याण पर विचार केवल आर्थिक स्थिति को देखकर ही नहीं कर रहे हैं अपितु इसके अतिरिक्त अन्य बातों पर भी विचार किया गया है । यह साबित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे के कल्याण की रक्षा के लिए बेहतर स्थिति में है । वे उसके स्वास्थ्य,

शिक्षा, मानसिक विकास पर ध्यान दिए हुए हैं और उसे सौहार्द वातावरण उपलब्ध करवा रहे हैं और साथ ही वे बच्चे को नैतिकता भी सिखा रहे हैं । हमारी सुविचारित राय में वे बच्चे के नैतिक और भौतिक कल्याण तथा भविष्य की रक्षा करने हेतु बेहतर स्थिति में हैं । उपरोक्त कारणों के आधार पर वर्तमान मामले के सुसंगत तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि बच्चे की अभिरक्षा में हस्तक्षेप करना वांछनीय नहीं है । हमारी यह सुविचारित राय है कि बच्चे के कल्याण के हित में उसे वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में ही रहना चाहिए । (पैरा 13, 14, 15, 16, 18, 19, 20, 21, 22, 23 और 24)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 12 एस. सी. सी. 471 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 102 : **गायत्री बजाज** बनाम **जितेन भल्ला** ;	17
[2011]	(2011) 2 एस. सी. सी. 188 : **एम. नागेश्वर राव** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	5
[2009]	(2009) 1 एस. सी. सी. 42 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 557 : **गौरव नागपाल** बनाम **सुमेधा नागपाल** ;	17
[2008]	(2008) 7 एस. सी. सी. 673 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2262 : **मौशमी मोइत्रा गांगुली** बनाम **जयन्त गांगुली** ।	17

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2017 की कुटुम्ब न्यायालय अपील सं. 11 और 12.

2015 की अर्जी सं. डी-31 और अर्जी सं. डी-55 में कुटुम्ब न्यायालय नागपुर द्वारा पारित किए गए एक ही निर्णय के विरुद्ध कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 19 के अधीन अपीलें ।

अपीलार्थियों की ओर से सुश्री शबाना दीवान

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री मसूद शरीफ और सुश्री पूनम मून

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एन. बी. सूर्यवंशी ने दिया ।

न्या. सूर्यवंशी – ये दोनों अपीलें कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1984 (जिसे इसमें इसके पश्चात् संक्षेप में "अधिनियम" कहा गया है) उस एक ही निर्णय का अपवाद हैं जो 2015 की अर्जी सं. डी-31 और 2015 की अर्जी सं. डी-55 में कुटुम्ब न्यायालय, नागपुर द्वारा पारित किया गया था जिसके अनुसार में आशमां नामक बच्चे की अभिरक्षा के लिए अपीलार्थियों द्वारा फाइल की गई अर्जी सं. 31 खारिज कर दी गई और अप्राप्तवय के संरक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने हेतु प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से फाइल की गई अर्जी सं. डी-55 को डिक्रीत किया गया । चूंकि इन दोनों अपीलों में एक ही निर्णय को चुनौती दी गई है इसलिए इनका निपटारा एक ही निर्णय द्वारा किया जा रहा है । सुविधा के लिए पक्षकारों को उनके प्रथम नाम से निर्दिष्ट किया जा रहा है ।

2. 2015 की अर्जी सं. डी-31 :–

(i) इफ्तेखार और अफसाना ने यह अर्जी संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 की धारा 25 के अधीन बच्चे की अभिरक्षा प्रदान किए जाने हेतु फाइल की गई है जिसमें यह दावा किया गया है कि वे उसके जैविक माता-पिता हैं । उन्होंने यह अभिवाक् किया कि उनके बीच 8 वर्ष से प्रेम-प्रसंग चल रहा था और उन्होंने 26 जून, 2013 को विवाह किया । उक्त विवाह उनके माता-पिता की सहमति के बिना सम्पन्न हुआ । इसी दौरान इस विवाह के 4 वर्ष पूर्व इफ्तेखार का विवाह बलपूर्वक शबनम के साथ करा दिया । शबनम के साथ हुए इस विवाह से एक पुत्री और पुत्र ने जन्म लिया जिनके नाम क्रमश: अश्मीरा फातिमा और इजान हैं । तारीख 26 जून, 2013 को हुए इफ्तेखार और अफसाना के विवाह के पश्चात् भी वे अपने-अपने माता-पिता के यहां रहते थे । इफ्तेखार के साथ हुए इस विवाह से अफसाना गर्भवती हो गई । अफसाना ने अपने माता-पिता को गर्भवती होने के संबंध में सूचित किया और उस समय वह छह मास से गर्भवती थी । इसके पश्चात्

इफ्तेखार और अफसाना ने अभिकथित रूप से विवाह करार निष्पादित किया जिसे कुटुम्ब न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है । तारीख 30 अगस्त, 2014 को अफसाना ने मेओ अस्पताल, नागपुर में एक बच्चे (जिसे इसमें इसके पश्चात् "बच्चा" कहा गया है) को जन्म दिया जो जन्म के समय पीलिया रोग से ग्रसित था । अस्पताल से छुट्टी होने के पश्चात् अफसाना अपने वैवाहिक गृह गई किंतु अगले ही दिन उसकी माता और बहिन पुत्र के साथ अफसाना को वहां से ले गईं और इफ्तेखार अमरावती चला गया । अफसाना को यह बताया गया कि इफ्तेखार ने उसे छोड़ दिया है । उसे यह भी बताया गया कि उसके पुत्र की दशा गंभीर है । अफसाना के माता-पिता ने बच्चे का बेहतर उपचार कराने में अपनी मजबूरी दर्शाई । उस समय अफसाना की मानसिक स्थिति ठीक नहीं थी और माता-पिता के कहने पर अफसाना ने उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दे दिया और उस समय अफसाना के हस्ताक्षर प्राप्त किए गए । अफसाना इफ्तेखार से संपर्क नहीं कर सकी । यह भी प्रकथन किया गया कि अफसाना के पिता ने उसे बताया था कि पीलिया के कारण बच्चे की मृत्यु हो गई है । यद्यपि इफ्तेखार ने अफसाना से संपर्क करने का प्रयास किया किंतु संपर्क न हो सका । इसके पश्चात् उसने पुलिस थाना यशोधरा नगर में मौखिक सूचना दर्ज कराई । उसे पता चला कि वह बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत को दत्तक ग्रहण में दिया गया । जब इफ्तेखार और अफसाना ने वकील अन्सारी और डा. निकहत से संपर्क किया तब उन्होंने बच्चा वापस करने के लिए 2,40,000/- रुपए की मांग की जिस पर इफ्तेखार सहमत हो गया । तथापि, इस विवाद का निपटारा न हो सका, परिणामस्वरूप इफ्तेखार और अफसाना ने तारीख 12 मई, 2015 को पुलिस थाना यशोधरा नगर में प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराई । इफ्तेखार और अफसाना ने अपनी अर्जी में यह प्रकथन किया कि दत्तक ग्रहण विलेख पर उसके हस्ताक्षर बलपूर्वक लिए गए थे और मुस्लिम विधि के अधीन दत्तक ग्रहण को मान्यता नहीं दी गई है । अफसाना अवसाद का शिकार हो गई और मनोचिकित्सक द्वारा

उसका उपचार किया जाने लगा । इफ्तेखार ऑटो रिक्शा चालक था और इस बच्चे का भरणपोषण कर सकता था । अत: इफ्तेखार और अफसाना ने यह दावा किया है कि जैविक माता-पिता होने के कारण वे ही बच्चे को अपनी अभिरक्षा में लेने के हकदार हैं ।

(ii) वकील अन्सारी और डा. निकहत ने लिखित कथन फाइल किया और इफ्तेखार और अफसाना के दावे का विरोध किया । उन्होंने यह प्रतिवाद किया कि वकील अन्सारी एक व्यापारी है और डा. निकहत बी.यू.एम.एस. चिकित्सक है जो अपना चिकित्सा व्यवसाय करती है । यद्यपि उनका विवाह 14 वर्ष पूर्व हुआ था फिर भी उनके यहां कोई संतान पैदा नहीं हुई । अफसाना के पिता, जिनका नाम मुस्लिम है, उस अर्जी में प्रत्यर्थी सं. 3 थे, कई वर्षों से डा. निकहत के पिता की कपड़े की दुकान में विक्रयकर्ता के रूप में कार्य कर रहे थे । मुस्लिम ने इस स्थिति के बारे में डा. निकहत को बताया कि अफसाना ने अविवाहित रहने के दौरान उसने मेओ अस्पताल, नागपुर में एक बच्चे को जन्म दिया था जो पीलिया से ग्रसित था और जब उसने इफ्तेखार को इस संबंध में बताया तो उसने अफसाना और उसके पुत्र को स्वीकार करने से इनकार कर दिया । डा. निकहत के पिता ने उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में देने को इस आधार पर कहा कि वे उसका चिकित्सा उपचार करेंगे और उसके भविष्य का ध्यान रखेंगे । तद्नुसार, अफसाना उस बच्चे को देने के लिए सहमत हो गई । इस संबंध में तारीख 27 अक्तूबर, 2014 को दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श 55) निष्पादित किया गया जिसे नोटरी पब्लिक द्वारा अनुप्रमाणित कराया गया । बच्चे को अभिरक्षा में लेने के पश्चात् डा. निकहत ने डा. बिसिकर अस्पताल में भर्ती कराया और उसके पश्चात् ओएसिस नर्सिंग होम में । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने इस बच्चे के चिकित्सा उपचार में लगभग 2,50,000/- रुपए खर्च किए । इसके पश्चात् अफसाना 5 महीने तक अपने माता-पिता के घर पर रही । जब वह तारीख 2 फरवरी, 2015 को चिकित्सा उपचार हेतु अपनी चाची के साथ मेओ

अस्पताल गई, वह वापस नहीं आई । तद्नुसार, उसकी चाची ने अफसाना के लापता होने के संबंध में पुलिस थाना तहसील, नागपुर में रिपोर्ट सं. 5/2015 (प्रदर्श-56) दर्ज कराई । इफ्तेखार और अफसाना दोनों का पता तारीख 5 फरवरी, 2015 को चला और उन्होंने पुलिस को यह कथन दिया कि उन्होंने वर्ष 2012 में निकाह किया था और पिछले 7 वर्ष से उनका प्रेम-प्रसंग चल रहा था और अफसाना इफ्तेखार के साथ अपनी इच्छा से रह रही थी । इसके पश्चात् इफ्तेखार और अफसाना ने वकील अन्सारी और डा. निकहत से संपर्क किया और अपने बच्चे की अभिरक्षा की मांग की जिस पर उनसे 2,50,000/- रुपए की मांग वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा की गई । इफ्तेखार और अफसाना द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के पश्चात् वकील अन्सारी और डा. निकहत ने तारीख 14 मई, 2015 को अग्रिम जमानत मंजूर कराई । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने यह दावा किया है कि इफ्तेखार और अफसाना का यह बच्चा अधरमच है और इफ्तेखार के पास आय का कोई भी स्रोत नहीं है । स्वीकृतत: इफ्तेखार ने शबनम से विवाह से किया और इस विवाह से दो बच्चों ने जन्म लिया । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने यह दावा किया है कि उनकी आर्थिक स्थिति काफी बेहतर है । बच्चे से वकील अन्सारी और डा. निकहत को स्नेह हो गया था और यदि इस बच्चे को इफ्तेखार और अफसाना की अभिरक्षा में दिया गया तो उस बच्चे को दरिद्रता और अशिक्षित वातावरण से जूझना पड़ेगा । इसके प्रतिकूल, वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे को बेहतरीन जीवन उपलब्ध कराने की स्थिति में हैं ।

(iii) अफसाना के पिता मुस्लिम ने न्यायालय में उपस्थित होकर वकील अन्सारी और डा. निकहत के मामले का समर्थन किया है । उसने यह प्रतिवाद किया है कि शब-ए-बारात के अवसर पर अफसाना पाण्डू नगर, नागपुर स्थित अपनी बड़ी बहिन की ससुराल गई, वहां उसने अपने और इफ्तेखार के बीच प्रेम-संबंध और गर्भवती होने के बारे में बताया । इस संबंध में जानकारी प्राप्त होने

के पश्चात् मुस्लिम ने अफसाना का विवाह इफ्तेखार के साथ कराने का भरपूर प्रयास किया, किंतु यह पता चला कि इफ्तेखार तो पहले से ही विवाहित था और उसके बच्चे भी थे । जब इफ्तेखार का सामना मुस्लिम के परिवार से हुआ तब उसने अफसाना के साथ अपने किसी भी प्रकार के संबंध होने से इनकार किया और इसके परिणामस्वरूप उसने अफसाना को गर्भ के अंतिम चरण में असहाय छोड़ दिया । इफ्तेखार और उसके परिवार के सदस्यों ने इस पर जोर दिया कि अफसाना अपना गर्भपात करा ले किंतु ऐसा संभव इसलिए नहीं था कि वह गर्भ की अंतिम स्थिति थी । प्रसव के पश्चात् नवजात शिशु गंभीर रूप से पीलिया के रोग से ग्रसित था । उस बच्चे की देखभाल के लिए कोई नहीं था क्योंकि अफसाना अविवाहित थी और उसे इफ्तेखार ने छोड़ा हुआ था । मुस्लिम के लिए उस बच्चे के चिकित्सा उपचार का खर्चा वहन करना संभव नहीं था । वह सामाजिक कारणों से अविवाहित अफसाना और उसके बच्चे को अपने घर पर रखने की स्थिति में नहीं था । अतः, उसने डा. निकहत के पिता के प्रस्ताव को स्वीकार किया कि वह उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दे दे जिनके विवाह को 14 वर्ष बीत चुके थे और उनके यहां कोई संतान नहीं थी और इस दंपत्ति ने उस बच्चे को अच्छी चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई । इस साक्षी ने यह भी कथन किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में अपना बच्चा स्वेच्छया दिया था । उसने यह भी प्रतिवाद किया है कि इफ्तेखार और अफसाना एक अत्यंत साधारण और छोटे-से घर में रहते थे जहां उनकी सुविधा के लिए कुछ नहीं था । वे निर्धनता और अशिक्षा के शिकार थे और वे इस स्थिति में नहीं थे कि बच्चे को कोई भी सकारात्मक सुविधा दें । विद्वान् काउंसेल ने यह भी प्रतिवाद किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत के शिक्षित होने तथा उनकी आर्थिक अवस्था मजबूत होने के तथ्य पर विचार किया गया है । इस बच्चे के हित और कल्याण के लिए उसका वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में बने रहना चाहिए । अतः विद्वान् काउंसेल ने 2015 की अर्जी सं. डी-31 के खारिज

किए जाने की प्रार्थना की है ।

(iv) 2015 की अर्जी सं. 55 : वकील अन्सारी और डा. निकहत ने यह अर्जी उन्हीं अभिवाक् के साथ फाइल की थी जिनका उल्लेख उन्होंने 2015 की अर्जी सं. डी-31 में किया गया है । उन्होंने यह प्रार्थना की है कि उन्हें इस बच्चे का संरक्षक नियुक्त किया जाए । इफ्तेखार और अफसाना ने उनकी इस अर्जी का विरोध करते हुए लिखित कथन फाइल किया है जिसमें उन्होंने उन्हीं प्रतिवादों को दोहराया है जो उन्होंने 2015 की अर्जी सं. डी-31 में किए थे ।

3. विद्वान् कुटुम्ब न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् इफ्तेखार और अफसाना द्वारा फाइल की गई अर्जी खारिज कर दी और वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा फाइल की गई अर्जी डिक्रीत कर दी । इसलिए वर्तमान दोनों अपीलों में उक्त विनिश्चय को चुनौती दी गई है ।

4. अपीलार्थियों (इफ्तेखार और अफसाना) तथा प्रत्यर्थियों (वकील अन्सारी, डा. निकहत एवम् मुस्लिम) की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ताओं को सुना गया है ।

5. इफ्तेखार और अफसाना के विद्वान् अधिवक्ता ने यह निवेदन किया है कि मुस्लिम विधि के अधीन दत्तक ग्रहण का सिद्धांत अनुमोदित नहीं है । इफ्तेखार और अफसाना का विवाह बच्चे के जन्म के पूर्व हो गया था । उसके अनुसार मुस्लिम पुरुष 4 विवाह करने का हकदार है, अत: अफसाना के साथ उसका विवाह होने में कोई नुकसान नहीं है और उसका विवाह विधिमान्य विवाह है । विद्वान् काउंसेल ने इस संबंध में मुस्लिम विधि की धारा 255 का अवलंब लिया है । जन्म प्रमाणपत्र (प्रदर्श 38) के संबंध में उसने यह दलील दी है कि बच्चे के माता-पिता के रूप में इफ्तेखार और अफसाना का नाम इस जन्म प्रमाणपत्र में दर्ज है । उसने यह दलील दी है कि चूंकि इफ्तेखार और अफसाना का विवाह विधिमान्य था, इसलिए इस विवाह-बंधन से जन्म लिया बच्चा धर्मज है और जैविक माता-पिता होने के कारण इफ्तेखार

और अफसाना बच्चे को अपनी अभिरक्षा में लेने के हकदार हैं । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि अन्वेषण के दौरान इफ्तेखार और अफसाना के जो कथन अभिलिखित किए गए थे वे साक्ष्य की दृष्टि से ग्राहय नहीं है और कुटुम्ब न्यायालय द्वारा उसका अवलंब नहीं लिया जा सकता था । इस दलील के समर्थन में उसने **एम. नागेश्वर राव** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया है । विद्वान् काउंसेल ने यह भी दलील दी है कि डा. निकहत ने पिछले वर्षों की आयकर विवरणी फाइल नहीं की है । उसके अनुसार मुस्लिम उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत के दत्तक ग्रहण में देने के लिए सक्षम नहीं हैं । उसने यह दलील दी है कि चूंकि वकील अन्सारी की परीक्षा नहीं कराई गई है, इसलिए वकील अन्सारी और डा. निकहत के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए । उसने यह तर्क भी दिया है कि इफ्तेखार और अफसाना बच्चे के जैविक माता-पिता हैं, इसलिए वे उसकी अभिरक्षा के हकदार हैं । विद्वान् काउंसेल के अनुसार इफ्तेखार बच्चे की देख-रेख के लिए पर्याप्त रूप से धनार्जन कर रहा है । यह भी दलील दी गई है कि विद्वान् विचारण ने बच्चे की अभिरक्षा के लिए फाइल की गई अर्जी त्रुटिपूर्ण तरीके से खारिज की है और साथ ही वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा फाइल की गई अर्जी में डिक्री पारित करके गलत किया है । अत: यह दलील दी गई है कि इफ्तेखार और अफसाना द्वारा फाइल की गई दोनों अपीलें मंजूर की जानी चाहिएं ।

6. इसके प्रतिकूल वकील अन्सारी और डा. निकहत के विद्वान् अधिवक्ता ने विचारण न्यायालय के निर्णय का समर्थन करते हुए यह दलील दी है कि इफ्तेखार और अफसाना बच्चे का पालन-पोषण करने की स्थिति में नहीं हैं और वकील अन्सारी और डा. निकहत को उसके संरक्षक के रूप में सही नियुक्त किया गया है । उन्होंने यह दलील दी है कि विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करते हुए युक्तियुक्त निर्णय ठीक ही पारित किया है जिसमें किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है ।

---

[1] (2011) 2 एस. सी. सी. 188.

7. तीसरे प्रत्यर्थी अर्थात् मुस्लिम के विद्वान् अधिवक्ता ने वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा दी गई दलीलों जैसी दलीलें दी हैं ।

8. पक्षकारों के विद्वान् अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना गया है और अभिलेख का परिशीलन किया गया है ।

9. परस्पर विरोधी दलीलों को सुनने के पश्चात् निम्न बिन्दुओं पर विचार किया जा रहा है :–

(i) इफ्तेखार और अफसाना की अभिरक्षा में बच्चे को देने से इनकार करने संबंधी कुटुंब न्यायालय का विनिश्चय विधिमान्य और उचित है या नहीं ?

(ii) वकील अन्सारी और डा. निकहत को बच्चे के संरक्षक के रूप में नियुक्त करने में कुटुंब न्यायालय न्यायोचित था या नहीं ?

10. संविवाद विनिश्चित करने के लिए अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करना आवश्यक है । इफ्तेखार और अफसाना ने अपने दावे के समर्थन में अपनी परीक्षा कराई है । इफ्तेखार ने अपनी याचिका में शपथपत्र (प्रदर्श-27) के माध्यम से अभिवाक् करते हुए अभिसाक्ष्य दिया है । उसने अफसाना के साथ हुए विवाह से संबंधित निकाह-नामा (प्रदर्श-37/1), बच्चे के जन्म प्रमाणपत्र की मूल प्रति (प्रदर्श-38), अस्पताल से छुट्टी होने संबंधी डिस्चार्ज-कार्ड (प्रदर्श-39), ऑटो रिक्शा की आर.सी. बुक (प्रदर्श-42) और ड्राइविंग लाइसेंस (प्रदर्श-43) प्रस्तुत किए हैं । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान इस बात से इनकार किया है कि तारीख 30 अगस्त, 2014 को अफसाना बच्चे के जन्म के पूर्व उसके साथ नहीं रहती थी । इस साक्षी ने इस बात से भी इनकार किया है कि तारीख 30 अगस्त, 2014 को प्रसव के समय अफसाना अपने माता-पिता के घर पर थी । इस साक्षी ने यह कथन किया है कि वह तारीख 30 अगस्त, 2014 को मेओ अस्पताल, नागपुर में मौजूद था । उसने यह भी कथन किया है कि उसने यह साबित करने के लिए दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत किया है कि तारीख 30 अगस्त, 2014 को अफसाना मानसिक रोग से ग्रसित थी । इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया है कि गर्भ के छह मास तक अफसाना अपने माता-पिता के घर पर थी और प्रसव के दूसरे दिन

वह अपने बच्चे के साथ अपने माता-पिता के यहां चली गई । इसके पश्चात् उसे पता चला कि बच्चा बीमार हो गया है । इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपने छोटे भाई सुहेल को अफसाना और उसके बच्चे की देखरेख करने के लिए लगा दिया था और सुहेल अफसाना और बच्चे को मेओ अस्पताल ले गया था । इस साक्षी के अनुसार उस दिन, वह अपनी प्रथम पत्नी शबनम को लेने अमरावती गया था । नागपुर लौटने के पश्चात्, अगले दिन उसने अफसाना और उसके माता-पिता से संपर्क करने का प्रयास किया किंतु किसी ने भी कोई जवाब नहीं दिया । यद्यपि वह अफसाना के माता-पिता से निरंतर मिलने गया किंतु प्रत्येक अवसर पर उसने घर पर ताला लगा पाया । उसे अफसाना से मिलने नहीं दिया गया, इसलिए वह रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए पुलिस थाना यशोधरा नगर गया किंतु उसकी रिपोर्ट दर्ज नहीं की गई । इस साक्षी ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि वह तारीख 30 अगस्त, 2014 को अर्थात् छह मास पश्चात् पहली बार उस बच्चे से मिला । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि छह मास की अवधि के दौरान वह न्यायालय में किसी भी तारीख पर अनुपस्थित नहीं रहा । वह अस्पताल में भर्ती रहने के छह मास के दौरान किए गए बच्चे के चिकित्सीय उपचार की प्रकृति से अवगत नहीं था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि वह तारीख 2 फरवरी, 2015 को मेओ अस्पताल में अफसाना से मिला था और वहां से अफसाना उसके साथ उसके घर चली गई और उस समय वह बच्चा अफसाना के साथ नहीं था । इसके पश्चात्, इफ्तेखार और अफसाना पुलिस थाना यशोधरा गए और वहां रिपोर्ट दर्ज कराई । इस साक्षी ने इस सुझाव से इनकार किया है कि उसके और अफसाना के बीच कोई निकाह नहीं हुआ था और यह कि उनके बीच अनैतिक संबंध थे जिनके परिणामस्वरूप बच्चे का जन्म हुआ । इस साक्षी ने इस सुझाव से इनकार किया है कि अफसाना कभी-भी मानसिक रोग से ग्रसित नहीं हुई और जब उसको छह मास का गर्भ था वह उसे छोड़कर चला गया था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि 5 सितंबर, 2014 से बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में था । इन अर्जियों के फाइल किए जाने तक डा. निकहत ने उसे तारीख 27 अक्तूबर, 2014 के दस्तावेज, जो वकील अन्सारी और

डा. निकहत के पक्ष में निष्पादित किया गया था, के बारे में कभी नहीं बताया था । इस साक्षी ने यह कथन किया है कि उसे अफसाना के मायके बुलाया गया था और उससे बिना किसी निकाह के अफसाना के गर्भवती होने के संबंध में मालूम किया गया था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि मुस्लिम डा. निकहत के पिता की कपड़े की दुकान पर काम करता था । इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत ने एक अच्छे प्राइवेट अस्पताल में बच्चे का उपचार कराया था और उपचार का खर्च भी उन्हीं के द्वारा वहन किया गया था । इफ्तेखार ने यह भी स्वीकार किया है कि उसने वकील अन्सारी और डा. निकहत के विरुद्ध उनके द्वारा बच्चे की बीमारी को लेकर बरती गई लापरवाही के संबंध में कोई भी आवेदन फाइल नहीं किया था । उसने यह स्वीकार किया है कि वह शबनम के साथ रहता था जिसके विवाह-बंधन से पुत्री अश्मीरा फातिमा (आयु लगभग 4 वर्ष) और पुत्र इजान (आयु लगभग 15 मास) ने जन्म लिया था । उस समय तक पुत्री अश्मीरा को स्कूल में दाखिला नहीं दिलाया था । अफसाना भी उनके साथ रहती थी । उसके घर में 800 वर्ग फुट के 5 कमरे थे । इस साक्षी ने इस सुझाव से इनकार किया है कि उसका मकान अतिक्रमण की गई भूमि पर बना हुआ है और यह कि वह मकान एक झोंपड़ी है । इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया है कि वह आयकर दाता नहीं है । उसने इस सुझाव से भी इनकार किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत से पैसा हड़पने के लिए उनके विरुद्ध मिथ्या अर्जी फाइल की गई है ।

11. अफसाना ने अर्जी में किए गए अभिवाक् के निबंधनों में शपथपत्र फाइल किया । उसने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह स्वीकार किया है कि तारीख 24 अक्तूबर, 2016 को उसने एक बच्ची को जन्म दिया था । अभिसाक्ष्य के दौरान वह मुस्लिम के घर में रह रही थी । उसने यह कथन किया है कि उसने आठ वर्ष से इफ्तेखार के साथ चल रहे प्रेम-प्रसंग के संबंध में अपने माता-पिता को नहीं बताया था । अफसाना ने यह भी स्वीकार किया है कि दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-32/1) पर उसका फोटो लगा हुआ है किंतु उस पर उसके हस्ताक्षर नहीं

हैं । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह अंग्रेजी में नहीं अपितु हिन्दी में हस्ताक्षर करती थी । निकाह-नामा (प्रदर्श-52) के कालम सं. 3 में उसके हिन्दी भाषा में हस्ताक्षर हैं । उसने यह स्वीकार किया है कि इस बच्ची के जन्म के समय उसे यह बताया गया था कि बच्ची पीलिया रोग से ग्रसित है । उसे मेओ अस्पताल ले जाया गया जहां वकील अन्सारी और डा. निकहत को बुलाया गया था । उसे यह बताया गया कि बच्ची के जीवित रहने की कोई संभावना नहीं है । बच्ची को बिसीकर अस्पताल ले जाया गया । उसे यह मालूम नहीं है कि इसके पश्चात् बच्ची को कहां ले जाया गया था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत ने बच्ची को अपनी अभिरक्षा में ले लिया । अफसाना वह तारीख नहीं बता सकी जब उन्होंने उसकी बच्ची को अपनी अभिरक्षा में लिया था । अफसाना वकील अन्सारी और डा. निकहत के विरुद्ध कोई भी रिपोर्ट दर्ज नहीं कराई । उसने दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-32/1) के निष्पादित किए जाने से इनकार किया है, यद्यपि उसने यह स्वीकार किया है कि उस दस्तावेज पर वकील अन्सारी और डा. निकहत के फोटो लगे हुए थे और उस पर उसके पिता के हस्ताक्षर थे । अफसाना ने यह भी स्वीकार किया है कि उसके आधार कार्ड की प्रति दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-32/1) के साथ संलग्न थी । इस साक्षी के अनुसार यह पूर्णतया संभव था कि (प्रदर्श-31/1) पर उसके अंगूठे की छाप लगी हुई थी । अफसाना ने यह बताया है कि उसने हिन्दी मीडियम से दसवीं कक्षा तक पढ़ाई की है । इस साक्षी ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि अर्जी फाइल करने के समय से उसे कोई भी चिकित्सा सुविधा उपलब्ध नहीं कराई गई है सिवाय उस अवधि के जब तीन मास पूर्व उसकी टांग में अस्थिभंग हो गया था । अफसाना ने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि यह कहना ठीक नहीं है कि उसकी मानसिक दशा पूरे समय सामान्य थी । इस साक्षी ने इस बात से इनकार किया है कि उसने और उसके पिता ने बच्ची को स्वयं वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दिया था । उसने यह स्वीकार किया है कि उसने और इफ्तेखार ने पुलिस थाने में कथन दिया था । जब उससे यह मालूम किया गया कि क्या उसका निकाह तारीख 8 फरवरी, 2015 को इफ्तेखार

के साथ हुआ था, तब इस पर उसने यह उत्तर दिया कि यह सत्य है किंतु निकाह इस शर्त के साथ हुआ था कि उसका पुत्र अफसाना को दिया जाएगा । अफसाना ने यह स्वीकार किया है कि अर्जी या लिखित कथन में इस संबंध में कोई अभिवाक् नहीं किया गया है कि 8 फरवरी, 2015 को इस शर्त के साथ ही निकाह किया गया था । अफसाना ने यह स्वीकार किया है कि उसके प्रथम प्रसव तक वह अपने मायके में रहती थी और वह इफ्तेखार के घर उस दौरान कभी नहीं गई । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि वह इफ्तेखार और उसकी प्रथम पत्नी तथा बच्चों के साथ रहती थी । जब अफसाना से यह मालूम किया गया कि वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे की देख रेख ठीक प्रकार करते थे या नहीं, तब इस पर उसने यह उत्तर दिया कि उसे इस बात से कोई लेना-देना नहीं था और वह अपने पुत्र को वापस चाहती थी । उसे नहीं मालूम कि वकील अन्सारी और डा. निकहत उसके पुत्र के इलाज में पैसा खर्च किया था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि उसने अपने पिता मुस्लिम को प्रत्यर्थी सं. 3 बनाया है क्योंकि वह अफसाना के पुत्र को अपनी अभिरक्षा में लेने को तैयार नहीं था और चूंकि अफसाना के पिता की इस संबंध में मुख्य भूमिका थी कि उसने उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दिया । इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया है कि जब उसने बच्चे को जन्म दिया था, तब इफ्तेखार के प्रथम विवाह को 3 वर्ष का समय बीत चुका था और उस समय इफ्तेखार के पास पहली पत्नी से 2 वर्ष की पुत्री थी । इस साक्षी ने यह भी स्वीकार किया है कि उसने पहली बार गर्भधारण किया था तब वह अपने पिता के घर रहती थी । अफसाना ने इस बात से इनकार किया है कि उसने बिना विवाह के गर्भधारण किया था और बदनामी से बचने के लिए उसके पिता ने उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में स्थाई रूप से दे दिया था । उस समय उस बच्चे की शारीरिक दशा अत्यंत नाजुक थी और अफसाना के पिता उसका समुचित रूप से इलाज कराने की स्थिति में नहीं था । इस साक्षी ने इस सुझाव से इनकार किया है कि उसने मिथ्या मामला फाइल किया है । उसने यह स्वीकार किया है कि उसके पिता के साथ उसके सौहार्द संबंध थे ।

12. डा. निकहत ने लिखित कथन में साक्ष्य के रूप में शपथपत्र फाइल किया जिसमें उसने प्रतिवादों को दोहराया । उसने अभिलेख पर बच्चे को दी गई चिकित्सा सुविधा से संबंधित दस्तावेज (प्रदर्श-64 से प्रदर्श-71), इफ्तेखार और अफसाना के बयानों की प्रमाणित प्रतियां (प्रदर्श-72 और प्रदर्श-73), उसमानी अस्पताल, नागपुर में कराई गई बच्चे की खतना (मुसलमानी) से संबंधित प्रमाणपत्र (प्रदर्श-74) और वर्ष 2015-16 और वर्ष 2016-17 की आयकर विवरणी क्रमशः प्रदर्श-75 और प्रदर्श-76 प्रस्तुत किए । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा के दौरान यह अभिसाक्ष्य दिया है कि उसे चिकित्सा व्यवसाय का 15 वर्ष का अनुभव है और वह यह व्यवसाय अब भी कर रही है । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि उसने कोई भी लेटर-हैड अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया है और उसने यह भी प्रकट नहीं किया है कि उसका पति अर्थात् वकील अन्सारी क्या काम करता है । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि उसने अपने अभिवाक् और साक्ष्य में यह उल्लेख नहीं किया है कि उसके पति की आय और उसकी स्वयं की आय कितनी है । उसने यह भी स्वीकार किया है कि तारीख 15 सितंबर, 2014 को वह उस बच्चे की सगी मां अर्थात् अफसाना से कभी नहीं मिली थी । उसने यह कथन किया है कि तारीख 5 सितंबर, 2014 को कोई भी दत्तक ग्रहण विलेख निष्पादित नहीं किया गया था । उसने यह भी स्वीकार किया है कि ओएसिस नर्सिंग होम से जारी की गई डिस्चार्ज-समरी (प्रदर्श-65) में बच्चे को स्तनपान कराने का निदेश दिया गया था । उसने बच्चे को बोतल से दूध पिलाया था । इस साक्षी ने यह इनकार किया है कि स्तनपान न कराए जाने के कारण उस बच्चे का स्वास्थ्य खराब हो गया था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया है कि अफसाना न्यायालय के आदेशानुसार ही बच्चे से भेंट किया करती थी । वह इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकी कि क्या दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-55) अवैध था । उसने स्वेच्छया यह बताया है कि यह विलेख बच्चे की माता अफसाना की इच्छानुसार निष्पादित किया गया था । इस साक्षी ने यह कथन किया है कि अभिसाक्ष्य देने की तारीख तक उसने बच्चे के नाम में कोई भी धन जमा नहीं किया था । उसने स्वेच्छया यह भी बताया कि बच्चे की आयु 2 वर्ष हो जाने पर वह उसके नाम में धन का निवेश करती । इस साक्षी

ने इफ्तेखार और अफसाना द्वारा की गई 2,50,000/- रुपए की मांग के संबंध में पुलिस में रिपोर्ट दर्ज नहीं कराई है ।

13. अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह प्रतीत होता है कि अफसाना ने 30 अगस्त, 2014 को बच्चे को जन्म दिया था और उसके जन्म प्रमाणपत्र (प्रदर्श-38) में इफ्तेखार और अफसाना का नाम माता-पिता के रूप में दर्ज है । स्वीकृततः, अफसाना गर्भ धारण करने से लेकर बच्चे के जन्म के समय तक अपने पिता के घर पर थी । यह विवादित नहीं है कि जन्म के पश्चात् बच्चे को पीलिया का रोग हो गया था और उसकी दशा गंभीर हो गई थी और जन्म के पांचवे दिन वह बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में दे दिया गया । साक्ष्य से यह भी स्पष्ट है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा बच्चे की ठीक प्रकार चिकित्सा उपचार कराए जाने के कारण वह पीलिया रोग से ठीक हो गया । यद्यपि इफ्तेखार और अफसाना के विद्वान् अधिवक्ता ने तारीख 26 जून, 2013 के निकाह-नामे (प्रदर्श-37) का अवलंब लिया है किंतु वह साक्ष्य की दृष्टि से ग्राहय नहीं है क्योंकि उसके अन्तर्वस्तु तर्कसम्मत साक्ष्य से साबित नहीं होती है । जो साक्षी निकाह के समय अभिकथित रूप से मौजूद थे और जिन्होंने निकाह-नामे पर हस्ताक्षर किए थे, उनकी परीक्षा नहीं कराई गई है, अतः उक्त निकाह-नामे का अवलंब नहीं लिया जा सकता ।

14. अभिलेख पर यह स्वीकृत स्थिति है कि इफ्तेखार का विवाह, अफसाना द्वारा बच्चे को जन्म दिए जाने के 3 वर्ष पूर्व, शबनम के साथ हुआ था । उस समय इफ्तेखार और शबनम के पास एक पुत्री थी जिसकी आयु 2 वर्ष थी और इफ्तेखार शबनम और उसकी पुत्री के साथ रहता था जबकि अफसाना अपने पिता के साथ रहती थी । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से प्रथमदृष्ट्या यह प्रतीत होता है कि बच्चे का जन्म इफ्तेखार और अफसाना के बीच प्रेम-प्रसंग के परिणामस्वरूप हुआ था और उस समय वे विवाहित नहीं थे । अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से यह दर्शित होता है कि अफसाना मानसिक रोग का इलाज करवा रही थी । मुस्लिम के साक्ष्य से उस विशिष्ट स्थिति का पता चलता है जिसके दौरान उस बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में

दिया गया । मुस्लिम ने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह अविवाहित पुत्री का पिता है जिसने बच्चे को जन्म दिया है । इफ्तेखार ने अफसाना और बच्चे को अपनाने से इनकार किया है । परिवार की मान-मर्यादा बनाए रखने के लिए और आर्थिक रूप से कमजोर होने के कारण अत्यधिक बीमार बच्चे को चिकित्सा सुविधा दिलाने के लिए उसने अफसाना की सहमति से बच्चे को वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में देने का निर्णय लिया ।

15. इस संबंध में कोई विवाद नहीं हो सकता कि दत्तक ग्रहण का सिद्धांत मुस्लिम विधि से मेल नहीं खाता है, अतः मात्र दत्तक ग्रहण विलेख (प्रदर्श-55) का अवलंब वकील अन्सारी और डा. निकहत द्वारा नहीं लिया जा सकता । तथापि, उक्त अधिनियम की धारा 4 के निबंधनों में कुटुंब न्यायालय उन दस्तावेजों पर विचार करने हेतु सशक्त है जो विवाद के निपटारे में प्रभावपूर्ण रूप से सहायक हैं । विद्वान् कुटुंब न्यायालय संपार्श्विक प्रयोजन हेतु विचार कर सकता है । प्रदर्श-55 में यह उल्लेख किया गया है कि अफसाना ने अवैध संबंधों के परिणामस्वरूप इस बच्चे को जन्म दिया है और बच्चे को उच्चतर शिक्षा दिलाने और भविष्य को बनाने के लिए उसे दत्तक ग्रहण में दिया जा रहा था । प्रदर्श-55 पर अफसाना, वकील अन्सारी, डा. निकहत और मुस्लिम के फोटो लगे हुए थे और साथ ही दो साक्षियों के फोटो भी चिपके हुए थे और इन सभी व्यक्तियों ने तारीख 27 अक्तूबर, 2014 को यह दस्तावेज निष्पादित किया था । हस्ताक्षर करने वाले इन सभी व्यक्तियों के आधार कार्ड भी प्रदर्श-55 के साथ संलग्न हैं ।

16. इफ्तेखार और अफसाना के निकाह की 3 तारीखें अभिलेख पर दिखाई देती हैं । इन दोनों ने अपने अभिवाक् में यह दावा किया है कि उनका निकाह, निकाह-नामा (प्रदर्श-7/1) के अनुसार 26 जून, 2013 को सम्पन्न हुआ था । इस साक्षी से उसकी प्रतिपरीक्षा के दौरान एक विशिष्ट प्रश्न इस प्रकार पूछा गया :–

> "प्रश्न – क्या आपका निकाह अर्जीदार सं. 1 के साथ तारीख 8 फरवरी, 2015 को हुआ था ?

उत्तर – यह सत्य है, किंतु निकाह इस शर्त पर हुआ था कि मेरा बच्चा मेरे साथ रहेगा ।”

अगले वाक्य में अफसाना ने यह स्वीकार किया है कि अर्जी/लिखित कथन में यह अभिवाक् नहीं किया गया था कि तारीख 8 फरवरी, 2015 को सम्पन्न हुए विवाह में यह शर्त रखी गई थी कि अफसाना के पुत्र को उसकी अभिरक्षा में दिया जाएगा । तारीख 8 फरवरी, 2015 को निष्पादित निकाह-नामा (प्रदर्श-52) के रूप में अभिलेख पर उपलब्ध है । अफसाना के लापता होने के संबंध में दर्ज कराई गई शिकायत में इफ्तेखार और अफसाना के कथन (प्रदर्श-72 और प्रदर्श-73) के रूप में अभिलिखित किए गए थे । उन कथनों में दोनों ने यह उल्लेख किया था कि उनका विवाह वर्ष 2012 में हो गया था । इफ्तेखार और अफसाना न्यायालय में अपने निकाह का सबूत देने में असफल रहे हैं और उन्होंने निकाह-सभा में उपस्थित साक्षियों अथवा निकाह पढ़ाने वाले काज़ी की परीक्षा नहीं कराई है । अत:, उनका यह दावा स्वीकार्य नहीं है कि उन्होंने निकाह कर लिया था ।

17. विधि की दृष्टि से यह सुस्थापित है कि बच्चे की अभिरक्षा के मामलों में उसके कल्याण की रक्षा सर्वोपरि है । **गौरव नागपाल** बनाम **सुमेधा नागपाल**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय को बच्चे की सामान्य आवश्यकताओं, स्वास्थ्य, शिक्षा, मानसिक विकास और सौहार्द वातावरण उपलब्ध कराने पर सम्यक् रूप से विचार करना चाहिए किंतु उसकी भौतिक सुविधाओं और मर्यादा को भी महत्व दिया जाना चाहिए । इन सब बातों का समान रूप से ध्यान रखना चाहिए । **मौशमी मोइत्रा गांगुली** बनाम **जयन्त गांगुली**[2] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्‌वारा निम्न अभिनिर्धारित किया गया है :–

“बच्चे की अभिरक्षा विनिश्चत करने के मामले में माता-पिता के अधिकारों पर नहीं अपितु बच्चे के कल्याण और हित पर विचार करना चाहिए । बच्चे के कल्याण संबंधी प्रश्न पर विचार करते

---

[1] (2009) 1 एस. सी. सी. 42 = ए. आई. आर. 2009 एस. सी. 557.

[2] (2008) 7 एस. सी. सी. 673 = ए. आई. आर. 2008 एस. सी. 2262.

समय प्रत्येक मामले के तथ्यों को भी देखना होगा और पूर्ववर्ती विनिश्चयों को नज़ीर के रूप में समुचित रूप से लागू नहीं किया जा सकता ।"

गायत्री बजाज बनाम **जितेन भल्ला**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्न अभिनिर्धारित किया है :-

"14. उपरोक्त चर्चा से यह पता चलता है कि संरक्षक और प्रतिपाल्य अधिनियम, 1890 या हिन्दू अप्राप्तवयता और संरक्षकता अधिनियम, 1956 के अधीन न्यायालय को अप्राप्तवय बच्चों की अभिरक्षा विनिश्चत करते समय उसके हित और कल्याण को वरीयता देना अत्यंत महत्वपूर्ण है । बच्चे की अभिरक्षा तय करते समय दोनों में से अर्थात् माता या पिता के अधिकार को लेकर न्यायनिर्णयन करना उचित नहीं है । बच्चे की देखरेख के लिए माता-पिता की सक्षमता और साधन सहित समुचित वातावरण उपलब्ध कराए जाने के साथ-साथ बच्चे की इच्छा पर भी विचार करना सुसंगत कारकों के अंतर्गत आता है जिन पर न्यायालय द्वारा अभिरक्षा विनिश्चत करते समय विचार किया जाना चाहिए । महत्वपूर्ण बात यह है कि जब सभी कारक निस्संदेह रूप से सुसंगत हों, तब बच्चे की इच्छा, हित और कल्याण पर विचार करना न्यायालय के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है ।"

18. बच्चे की अभिरक्षा एक अत्यंत संवेदनशील मुद्दा है जो भावनाओं से जुड़ा होता है । प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए ही बच्चे के कल्याण पर विचार करना चाहिए । बच्चे के प्रति माता और पिता की भावनाओं और बच्चे के कल्याण के बीच संतुलन होना चाहिए ।

19. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांतों को ध्यान में रखते हुए यदि हम वर्तमान मामले पर विचार करें तब अभिलेख से यह पता चलता है कि अफसाना इफ्तेखार और उसकी प्रथम पत्नी शबनम और उनके बच्चों अर्थात् अश्मीरा फातिमा और पुत्र इजान

---

[1] (2012) 12 एस. सी. सी. 471 = ए. आई. आर. 2013 एस. सी. 102.

के साथ रहती है । अफसाना ने हाल ही में एक पुत्र को जन्म दिया है इस प्रकार इफ्तेखार की जिम्मेदारी दो पत्‍िनयों और तीन बच्चों का भरणपोषण करना है । स्वीकृत रूप से इफ्तेखार रिक्शा चालक है, उसने यह रिक्शा ऋण लेकर क्रय किया है । उसकी आर्थिक स्थिति अच्छी प्रतीत नहीं होती है । इफ्तेखार और अफसाना यह साबित करने में असफल रहे हैं कि इफ्तेखार की आमदनी नियमित रूप से चल रही थी । प्रदर्श-57 और प्रदर्श-58 से, जो कि फोटोग्राफ हैं, यह प्रकट होता है कि इफ्तेखार और अफसाना का मकान टिन से बना हुआ है और यह अस्थायी प्रतीत होता है, इस प्रकार ऐसा लगता है कि उनके पास कोई स्थायी आवास नहीं है । इफ्तेखार ने यह भी स्वीकार किया है कि अभिसाक्ष्य देने की तारीख तक उसकी पुत्री अशमीरा फातिमा स्कूल नहीं जा रही थी । अफसाना मानसिक रोग का इलाज करवा रही थी ।

20. स्वीकृतत: बच्चे का जन्म तारीख 30 अगस्त, 2014 को हुआ है और उसे उसके जन्म के 5 दिन बाद ही वकील अन्सारी और डा. निकहत को सौंप दिया गया था । उस समय बच्चा पीलिया से ग्रसित था और उसकी दशा गंभीर थी । वकील अन्सारी और डा. निकहत ने उस बच्चे के उपचार के लिए विशेष चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जिसके परिणामस्वरूप बीमारी से ठीक हो गया । उसी समय से उस बच्चे का पालन-पोषण वकील अन्सारी और डा. निकहत द्‌वारा ही किया गया है, अब बच्चे की आयु 6 वर्ष है और वह मानसिक और भावनात्मक रूप से वकील अन्सारी और डा. निकहत से जुड़ गया है । बच्चा वकील अन्सारी और डा. निकहत को अपने माता-पिता ही समझने लगा है । ऐसा प्रतीत होता है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे की देखरेख कर सकते हैं और भली-भांति उसे सुविधाएं उपलब्ध करा सकते हैं । वे बच्चे का भविष्य भी संभाल सकते हैं ।

21. यदि इस बच्चे को इफ्तेखार और अफसाना की अभिरक्षा में दिया जाता है तो इससे बच्चे की भावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा । वह अपने वर्तमान परिवार अर्थात् वकील अन्सारी और डा. निकहत से बिछुड़ जाएगा और उसे बिल्कुल अजनबी वातावरण में रहना पड़ेगा जिसके लिए उसे समझौता करना अत्यंत कठिन होगा ।

22. अभिलेख से यह उपदर्शित होता है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत की आर्थिक स्थिति बेहतर है जो बच्चे को अच्छा जीवन और अच्छी शिक्षा दे सकते हैं । इन दोनों दंपत्तियों पर इस बच्चे के भार के अतिरिक्त कोई और जिम्मेदारी नहीं है । हम यह स्पष्ट करते हैं कि हम बच्चे के कल्याण पर विचार केवल आर्थिक स्थिति को देखकर ही नहीं कर रहे हैं अपितु इसके अतिरिक्त अन्य बातों पर भी विचार किया गया है ।

23. यह साबित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य है कि वकील अन्सारी और डा. निकहत बच्चे के कल्याण की रक्षा के लिए बेहतर स्थिति में है । वे उसके स्वास्थ्य, शिक्षा, मानसिक विकास पर ध्यान दिए हुए हैं और उसे सौहार्द वातावरण उपलब्ध करवा रहे हैं और साथ ही वे बच्चे को नैतिकता भी सिखा रहे हैं । हमारी सुविचारित राय में वे बच्चे के नैतिक और भौतिक कल्याण तथा भविष्य की रक्षा करने हेतु बेहतर स्थिति में हैं ।

24. उपरोक्त कारणों के आधार पर वर्तमान मामले के सुसंगत तथ्यों पर विचार करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि बच्चे की अभिरक्षा में हस्तक्षेप करना वांछनीय नहीं है । हमारी यह सुविचारित राय है कि बच्चे के कल्याण के हित में उसे वकील अन्सारी और डा. निकहत की अभिरक्षा में ही रहना चाहिए । इफ्तेखार और अफसाना द्वारा फाइल की गई अपीलें गुणता न होने के कारण खारिज किए जाने योग्य हैं, इस प्रकार निम्न आदेश किया जाता है :–

(i) 2017 की कुटुंब न्यायालय अपील सं. 11 और 2017 की कुटुंब न्यायालय अपील सं. 12 एतद्द्वारा खारिज की जाती हैं ।

(ii) 2015 की अर्जी सं. डी-31 और 2015 की अर्जी सं. डी-55 में विद्वान् कुटुंब न्यायालय द्वारा पारित किए गए एक ही निर्णय और डिक्री की एतद्द्वारा पुष्टि की जाती है ।

अपीलें खारिज की गईं ।

अस.

फॉरचून बिल्डर्स (मैसर्स) अपने भागीदारों के मार्फत

बनाम

हंसराज कामदार और अन्य

(2019 की माध्यस्थम् अपील सं. 50)

तारीख 5 जनवरी, 2021

न्यायमूर्ति सुबोध अभयंकर

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 9 और 11(5) – अंतरिम अनुतोष – हकदारी – मध्यस्थ की नियुक्ति में विलंब – अपीलार्थी द्वारा बिना किसी न्यायोचित कारण के मध्यस्थ को नियुक्त किए जाने के लिए एक वर्ष से अधिक समय लगा है जिससे यह माना जा सकता है कि वह अंतरिम अनुतोष का हकदार नहीं है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी/फर्म एक रजिस्ट्रीकृत भागीदार फर्म है जो स्थावर संपदा में निवेश, विकास और विक्रय का व्यवसाय करती है । अपीलार्थी/फर्म नगर निगम, भोपाल में रजिस्ट्रीकृत कोलोनाइजर भी है । अपने व्यवसाय के अनुसरण में, अपीलार्थी/फर्म ने तारीख 1 फरवरी, 2014 को प्रत्यर्थियों के साथ संयुक्त उद्यम विकास करार किया और जिसका रजिस्ट्रीकरण तारीख 13 मार्च, 2014 को सम्पत्ति का संयुक्त विकास करने के लिए किया गया जिसका खसरा सं. 147/9/1/6 और माप 0.36 एकड़ तथा खसरा सं. 147/9/1/14 और माप 0.72 एकड़ है जो गांव बावरिया कलां, तहसील हुज़ूर, जिला भोपाल में स्थित हैं । इस संयुक्त उद्यम करार के अनुसार अपीलार्थी को, प्रत्यर्थी अर्थात् भू-स्वामी की संपत्ति का विकास करना था । इसमें विवादित भूमि पर बहु-मंजिला अपार्टमेंट/फ्लैटों का निर्माण करना सम्मिलित था और कार्य पूरा होने पर विक्रय के प्रतिफल को संयुक्त उद्यम करार के विभिन्न खंडों के अनुसार अपीलार्थी/फर्म और प्रत्यर्थियों के बीच सहमत अनुपात में साझा किया जाना था । उक्त

करार के खंड 3 में यह उपबंध किया गया था कि उक्त संपत्ति को 36 मास की अवधि के भीतर विकसित किया जाना था । करार के खंड 8 में यह उपबंध किया गया है कि आवश्यक अनुमति उपाप्त करना और उसके संबंध में व्यय करना केवल दूसरे पक्ष अर्थात् अपीलार्थी/फॉरचून बिल्डर्स की जिम्मेदारी होगी, जिन्हें सभी आवश्यक अनुमतियां उपाप्त करनी होंगी और तद्नुसार विकास कार्य प्रारंभ करना होगा । करार के खंड 13 में निर्मित संपत्ति का विभाजन 43.57 के अनुपात में किया जाएगा और खंड 20 में यह उपबंध किया गया है कि जहां भी पहले पक्ष (अर्थात् भू-स्वामी श्री कामदार) के हस्ताक्षर और पृष्ठांकन की आवश्यकता होगी वह तुरंत भू-स्वामी द्वारा पूरी की जाएगी और खंड 25 और 27 के अधीन यह तय किया गया था कि यदि 36 महीनों के भीतर क्षेत्र का विकास नहीं किया जाता है तो अपीलार्थी/फर्म द्वारा 9,000/- रुपए प्रति फ्लैट प्रति माह की दर से शास्ति देय होगी । इस प्रकार अपीलार्थी/फर्म का पक्षकथन यह है कि संविदा में समय सीमा अधिक महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि इसे दूसरे पक्ष द्वारा प्रथम पक्ष को शास्ति के भुगतान द्वारा बढ़ाया जा सकता है । आगे अपीलार्थी फर्म का पक्षकथन यह है कि पक्षकारों में यह सहमति हुई कि अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को 50 लाख रुपए का संदाय किया जाएगा और इस प्रकार तारीख 19 नवंबर, 2013 के 25 लाख रुपए के दो चैक अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को दिए गए । आगे अपीलार्थी का पक्षकथन इस प्रकार है कि संयुक्त उद्यम करार के अनुसार यह सहमति हुई थी कि जहां कहीं भी विषयान्तर्गत संपत्ति के विकास के लिए किसी भी प्राधिकरण से कोई अनुमति उपाप्त करने की आवश्यकता होगी तो वहां प्रत्यर्थी पूरी सहायता प्रदान करेगा और सभी दस्तावेजों पर हस्ताक्षर भी करेगा और इस प्रकार से भूमि पर किसी भी प्रकार का विकास करने के लिए अपीलार्थी का एक पूर्व शर्त के रूप में भोपाल नगर निगम से भवन की अनुमति/स्वीकृति उपाप्त करना आवश्यक था जिसकी स्वीकृति भू-स्वामी द्वारा हस्ताक्षरित भवन के मानचित्रों को पेश करने के बाद ही दी जा सकती थी । आगे अपीलार्थी/फर्म का पक्षकथन यह है कि दो अलग-अलग अवसरों पर

अपीलार्थी/फर्म के कर्मचारी राधेश्याम मालवीय ने उनके वास्तुविद द्वारा तैयार भवन मानचित्रों पर हस्ताक्षर कराने के लिए प्रत्यर्थी से संपर्क किया लेकिन प्रत्यर्थी भूमि स्वामी ने उक्त भवन के नक्शे पर अनुमोदन करने से टाल दिया और इस कारण परियोजना को क्रियान्वित करने के लिए संपूर्ण परियोजना का प्रारंभिक बिन्दु अर्थात् भवन निर्माण के लिए मानचित्र को मंजूरी नहीं दिलाई जा सकी और इसी कारण से विवादित भूमि पर उक्त परियोजना का विकास कार्य प्रारंभ नहीं हो सका । अपीलार्थी/फर्म ने यह भी पक्षकथन किया है कि प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 9 मार्च, 2018 को समाचारपत्र में एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया गया था जिसमें सभी संबंधितों को सूचित किया गया था कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य संयुक्त उद्यम करार समाप्त हो गया है और विषयान्तर्गत संपत्ति में अपीलार्थी/फर्म का कोई हित शेष नहीं रह गया है । तारीख 11 मार्च, 2018 को उक्त नोटिस का उत्तर अपीलार्थी द्वारा इस बात को नकारते हुए प्रकाशन के माध्यम से तुरन्त दे दिया गया था कि विषयान्तर्गत भूमि के संबंध में उसके और प्रत्यर्थी के मध्य करार समाप्त हो गया है । इस बात को महसूस करते हुए कि पक्षकारों के मध्य विवाद उत्पन्न हो गया है । अपीलार्थी ने 16 अप्रैल, 2018 को संयुक्त उद्यम करार के खंड 35 के अधीन प्रत्यर्थियों को एकमात्र माध्यस्थम् की नियुक्ति के लिए कानूनी नोटिस भेजा । अपीलार्थी को इस बात की आशंका हुई कि प्रत्यर्थी विवादित संपत्ति में तीसरे पक्षकार का हित सृजित कर सकते हैं जो कि अपीलार्थी के हित के प्रतिकूल होगा और इसीलिए उन्होंने तारीख 2 मई, 2018 को अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन जिला न्यायालय, भोपाल में एक आवेदन फाइल किया । अपीलार्थी के अनुसार इस अस्थायी व्यादेश के लिए आवेदन फाइल किया गया था कि प्रत्यर्थी को यह निदेश दिया जाए कि जहां तक उनके मध्य माध्यस्थम् विवाद समाप्त नहीं हो जाता तब तक वे विवादित संपत्ति के संबंध में किसी भी तीसरे पक्षकार के हित का सृजन नहीं करेंगे । अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा यह तर्क दिया गया कि अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन फाइल किए गए आवेदन में एक अस्थायी व्यादेश

के लिए आवश्यक सभी सामग्री अर्थात् प्रथमदृष्ट्या मामला, सुविधा की दृष्टि से पलड़ा भारी होना और अपूर्णीय क्षति उपस्थित हैं परन्तु विद्वान् न्यायाधीश ने सारवान् अभिलेखों पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया । दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी की प्रार्थना का विरोध किया और यह दलील दी है कि निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश को पारित करने में कोई अवैधता नहीं की गई है क्योंकि यह आदेश विधि के सिद्धांतों के अनुरूप पारित किया गया है और चूंकि निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने अपीलार्थी/फर्म के पक्ष में कोई प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं पाया है, इसलिए निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आवेदन ठीक ही खारिज किया गया है । इसी आदेश के विरुद्ध अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय के समक्ष मामले में अपीलार्थी द्वारा वर्णित घटनाओं के कालक्रम के अनुसार जैसाकि अपीलार्थी द्वारा बताया गया है वर्तमान मामला मैसर्स अशोक ट्रेडर्स वाले मामले में परिकल्पित अपेक्षाओं को पूरा नहीं करता है । मामले में विवाद का आरंभ तारीख 16 जुलाई, 2016 को हुआ जब प्रत्यर्थियों ने करार के निष्पादन के लिए आवश्यक मानचित्रों पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया था और उसके बाद तारीख 11 मार्च, 2018 को जब प्रत्यर्थियों ने स्थानीय समाचारपत्र में एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया कि उनके बीच समझौता समाप्त हो गया है और उसके बाद तारीख 16 अप्रैल, 2018 को जब प्रत्यर्थी को एक विधिक नोटिस जारी किया गया था जिसमें करार के खंड 35 का अवलंब लिया गया जो उनके मध्य विवाद को निपटाने के लिए मध्यस्थ की नियुक्ति के विषय में था और लगभग 15 दिनों बाद अर्थात् तारीख 2 मई, 2018 को अधिनियम की धारा 9 के अधीन एक आवेदन अपीलार्थी द्वारा जिला न्यायालय, भोपाल में मध्यस्थ की नियुक्ति तक अंतरिम राहत के लिए पेश किया गया । यहां पर यह ध्यान देने योग्य है कि तारीख 16 अप्रैल, 2018 के बाद अर्थात् मध्यस्थ की नियुक्ति के

लिए नोटिस की तारीख के पश्चात्, अधिनियम, 1996 की धारा 11(5)(6) के अधीन मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के द्वारा आवेदन इस न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया गया । यहां तक कि एक वर्ष के भीतर भी आवेदन फाइल नहीं किया और इसे 26 जून, 2016 को अर्थात् एक वर्ष से अधिक समय के बाद फाइल किया । इस न्यायालय के विचार में अपीलार्थी द्वारा बिना किसी न्यायोचित कारण के केवल एक मध्यस्थ को नियुक्ति करने के लिए अपीलार्थी द्वारा एक वर्ष से अधिक का समय लगा है जिससे यह माना जा सकता है कि वे अंतरिम राहत के लिए हकदार नहीं है । दूसरी ओर यदि वाद हेतु की तारीख 16 जुलाई, 2016 मानी जाए जब कथित तौर पर प्रत्यर्थियों ने करार के निष्पादन के लिए आवश्यक मानचित्रों पर हस्ताक्षर करने से इनकार करने के बाद अपीलार्थियों की ओर से तारीख 26 जून, 2019 को मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए आवेदन करने, से विषय-सुख मुकदमेबाजी का स्पष्ट मामला बनता है क्योंकि वे फुरसत और लापरवाह तरीके से उनके लिए उपलब्ध उपचार का पीछा कर रहे थे जो उन्हें अंतरिम संरक्षण देने से वंचित करता है । यह भी पाया गया कि अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन तारीख 7 मई, 2018 को आवेदन फाइल किया गया जो तारीख 23 अप्रैल, 2019 को अर्थात् 11 महीने बाद निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा अंतिम रूप से निपटाया गया । इस प्रकार से अब तक ढाई वर्ष से अधिक समय बीत चुका है तब से अब तक अपीलार्थी/फर्म के पक्ष में कोई भी अंतरिम संरक्षण प्रवर्तन में नहीं है । (पैरा 9 और 10)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2004] (2004) 3 एस. सी. सी. 195 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1433 :
मैसर्स अशोक ट्रेडर्स बनाम **गुरुमुख दास सलूजा** । 8

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2019 की माध्यस्थम् अपील सं. 50.

2018 के प्रकीर्ण न्यायिक मामला सं. 40 में द्‌वितीय अपर न्यायाधीश, भोपाल द्‌वारा पारित आदेश के विरुद्ध माध्यस्थम्‌ और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 37 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री सिद्धार्थ राधेलाल गुप्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री कपिल दुग्गल

न्यायमूर्ति सुबोध अभयंकर – यह अपील माध्यस्थम्‌ और सुलह अधिनियम, 1996 (जिसे इसमें इसके पश्चात्‌ संक्षेप में "अधिनियम 1996" कहा गया है) की धारा 37 के अधीन तारीख 23 अप्रैल, 2019 को द्‌वितीय अपर जिला न्यायाधीश भोपाल द्‌वारा प्रकीर्ण न्यायिक मामला सं. 40/2018 में पारित अपीलार्थी द्‌वारा उस आदेश को चुनौती दी गई है जिसके द्‌वारा अधिनियम की धारा 9 के अधीन अपीलार्थी की ओर से फाइल किया गया आवेदन खारिज कर दिया गया था ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि अपीलार्थी/फर्म एक रजिस्ट्रीकृत भागीदार फर्म है जो स्थावर संपदा में निवेश, विकास और विक्रय का व्यवसाय करती है । अपीलार्थी/फर्म नगर निगम, भोपाल में रजिस्ट्रीकृत कोलोनाइजर भी है । अपने व्यवसाय के अनुसरण में, अपीलार्थी/फर्म ने तारीख 1 फरवरी, 2014 को प्रत्यर्थियों के साथ संयुक्त उद्‌यम विकास करार किया और जिसका रजिस्ट्रीकरण तारीख 13 मार्च, 2014 को सम्पत्ति का संयुक्त विकास करने के लिए किया गया जिसका खसरा सं. 147/9/1/6 और माप 0.36 एकड़ तथा खसरा सं. 147/9/1/14 और माप 0.72 एकड़ है जो गांव बावरिया कलां, तहसील हुजूर जिला भोपाल में स्थित हैं । इस संयुक्त उद्‌यम करार के अनुसार अपीलार्थी को, प्रत्यर्थी अर्थात्‌ भू-स्वामी की संपत्ति का विकास करना था । इसमें विवादित भूमि पर बहु-मंजिला अपार्टमेंट/फ्लैटों का निर्माण करना सम्मिलित था और कार्य पूरा होने पर विक्रय के प्रतिफल को संयुक्त उद्‌यम करार के विभिन्न खंडों के अनुसार अपीलार्थी/फर्म और प्रत्यर्थियों के बीच सहमत अनुपात में साझा किया जाना था । उक्त करार के खंड 3 में यह उपबंध किया गया था कि उक्त संपत्ति को 36 मास की अवधि के भीतर विकसित किया जाना था । करार के खंड 8 में

यह उपबंध किया गया है कि आवश्यक अनुमति उपाप्त करना और उसके संबंध में व्यय करना केवल दूसरे पक्ष अर्थात् अपीलार्थी/फॉरचून बिल्डर्स की जिम्मेदारी होगी, जिन्हें सभी आवश्यक अनुमतियां उपाप्त करनी होंगी और तद्नुसार विकास कार्य प्रारंभ करना होगा । करार के खंड 13 में निर्मित संपत्ति का विभाजन 43.57 के अनुपात में किया जाएगा और खंड 20 में यह उपबंध किया गया है कि जहां भी पहले पक्ष (अर्थात् भू-स्वामी श्री कामदार) के हस्ताक्षर और पृष्ठांकन की आवश्यकता होगी वह तुरंत भू-स्वामी द्वारा पूरी की जाएगी और खंड 25 और 27 के अधीन यह तय किया गया था कि यदि 36 महीनों के भीतर क्षेत्र का विकास नहीं किया जाता है तो अपीलार्थी/फर्म द्वारा 9,000/- रुपए प्रति फ्लैट प्रति माह की दर से शास्ति देय होगी । इस प्रकार अपीलार्थी/फर्म का पक्षकथन यह है कि संविदा में समय सीमा अधिक महत्वपूर्ण नहीं है क्योंकि इसे दूसरे पक्ष द्वारा प्रथम पक्ष को शास्ति के भुगतान द्वारा बढ़ाया जा सकता है ।

3. आगे अपीलार्थी/फर्म का पक्षकथन यह है कि पक्षकारों में यह सहमति हुई कि अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को 50 लाख रुपए का संदाय किया जाएगा और इस प्रकार तारीख 19 नवंबर, 2013 के 25 लाख रुपए के दो चैक अपीलार्थी द्वारा प्रत्यर्थी को दिए गए । आगे अपीलार्थी का पक्षकथन इस प्रकार है कि संयुक्त उद्यम करार के अनुसार यह सहमति हुई थी कि जहां कहीं भी विषयान्तर्गत संपत्ति के विकास के लिए किसी भी प्राधिकरण से कोई अनुमति उपाप्त करने की आवश्यकता होगी तो वहां प्रत्यर्थी पूरी सहायता प्रदान करेगा और सभी दस्तावेजों पर हस्ताक्षर भी करेगा और इस प्रकार से भूमि पर किसी भी प्रकार का विकास करने के लिए अपीलार्थी का एक पूर्व शर्त के रूप में भोपाल नगर निगम से भवन की अनुमति/स्वीकृति उपाप्त करना आवश्यक था जिसकी स्वीकृति भू-स्वामी द्वारा हस्ताक्षरित भवन के मानचित्रों को पेश करने के बाद ही दी जा सकती थी ।

4. आगे अपीलार्थी/फर्म का पक्षकथन यह है कि दो अलग-अलग अवसरों पर अपीलार्थी/फर्म के कर्मचारी राधेश्याम मालवीय ने उनके

वास्तुविद द्वारा तैयार भवन मानचित्रों पर हस्ताक्षर कराने के लिए प्रत्यर्थी से संपर्क किया लेकिन प्रत्यर्थी भूमि स्वामी ने उक्त भवन के नक्शे पर अनुमोदन करने से टाल दिया और इस कारण परियोजना को क्रियान्वित करने के लिए संपूर्ण परियोजना का प्रारंभिक बिन्दु अर्थात् भवन निर्माण के लिए मानचित्र को मंजूरी नहीं दिलाई जा सकी और इसी कारण से विवादित भूमि पर उक्त परियोजना का विकास कार्य प्रारंभ नहीं हो सका । अपीलार्थी/फर्म ने यह भी पक्षकथन किया है कि प्रत्यर्थी द्वारा तारीख 9 मार्च, 2018 को समाचारपत्र में एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया गया था जिसमें सभी संबंधितों को सूचित किया गया था कि अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के मध्य संयुक्त उद्यम करार समाप्त हो गया है और विषयान्तर्गत संपत्ति में अपीलार्थी/फर्म का कोई हित शेष नहीं रह गया है । तारीख 11 मार्च, 2018 को उक्त नोटिस का उत्तर अपीलार्थी द्वारा इस बात को नकारते हुए प्रकाशन के माध्यम से तुरन्त दे दिया गया था कि विषयान्तर्गत भूमि के संबंध में उसके और प्रत्यर्थी के मध्य करार समाप्त हो गया है । इस बात को महसूस करते हुए कि पक्षकारों के मध्य विवाद उत्पन्न हो गया है । अपीलार्थी ने 16 अप्रैल, 2018 को संयुक्त उद्यम करार के खंड 35 के अधीन प्रत्यर्थियों को एकमात्र माध्यस्थम् की नियुक्ति के लिए कानूनी नोटिस भेजा । अपीलार्थी को इस बात की आशंका हुई कि प्रत्यर्थी विवादित संपत्ति में तीसरे पक्षकार का हित सृजित कर सकते हैं जो कि अपीलार्थी के हित के प्रतिकूल होगा और इसीलिए उन्होंने तारीख 2 मई, 2018 को अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन जिला न्यायालय, भोपाल में एक आवेदन फाइल किया । अपीलार्थी के अनुसार इस अस्थायी व्यादेश के लिए आवेदन फाइल किया गया था कि प्रत्यर्थी को यह निदेश दिया जाए कि जहां तक उनके मध्य माध्यस्थम् विवाद समाप्त नहीं हो जाता तब तक वे विवादित संपत्ति के संबंध में किसी भी तीसरे पक्षकार के हित का सृजन नहीं करेंगे । अपीलार्थी के काउंसेल द्वारा यह तर्क दिया गया कि अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन फाइल किए गए आवेदन में एक अस्थायी व्यादेश के लिए आवश्यक सभी सामग्री अर्थात् प्रथमदृष्ट्या मामला, सुविधा की दृष्टि से पलड़ा भारी होना और अपूर्णीय

क्षति उपस्थित हैं परन्तु विद्वान् न्यायाधीश ने सारवान् अभिलेखों पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार किए बिना आक्षेपित आदेश पारित किया ।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने अपीलार्थी की प्रार्थना का विरोध किया और यह दलील दी है कि निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश को पारित करने में कोई अवैधता नहीं की गई है क्योंकि यह आदेश विधि के सिद्धांतों के अनुरूप पारित किया गया है और चूंकि निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने अपीलार्थी/फर्म के पक्ष में कोई प्रथमदृष्ट्या मामला नहीं पाया है, इसलिए निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आवेदन ठीक ही खारिज किया गया है ।

6. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना तथा अभिलेख का अवलोकन किया ।

7. न्यायालय के समक्ष अभिलेख से यह पता चलता है कि निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश ने अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन अपीलार्थी द्वारा फाइल किए गए आवेदन को खारिज करते समय मुख्य कारण यह बताया है कि अपीलार्थी ने माध्यस्थम् खंड का अवलंब लेने के बाद तत्परता से कदम नहीं उठाया है जैसाकि करार के पैरा 27 में यथाउपबंधित है कि परियोजना की अवधि 36 मास होगी तथा इसके समाप्त हो जाने के बाद भी अपीलार्थी ने मध्यस्थ द्वारा विवाद निपटाने का प्रयास नहीं किया है । निचले न्यायालय के न्यायाधीश द्वारा यह भी पाया गया है कि अपीलार्थी यह भी साबित नहीं कर सका है कि प्रत्यर्थी ने करार के उचित निष्पादन के लिए उसके साथ सहयोग नहीं किया है ।

8. जहां तक अधिनियम, 1996 की धारा 9 के लागू किए जाने का संबंध है । यहां **मैसर्स अशोक ट्रेडर्स** बनाम **गुरूमुख दास सलूजा**[1] के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट करना उचित होगा जिसके सुसंगत पैरा इस प्रकार हैं :–

---

[1] (2004) 3 एस. सी. सी. 195 = ए. आई. आर. 2004 एस. सी. 1433.

17. हमारे समक्ष दो पहलू हैं जिनका अत्यधिक महत्व है और जिन्हें अभिलिखित किया जा रहा है । **सुंदरम फाइनेंस लिमिटेड** वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के अनुसार अधिनियम की धारा 9 के अधीन अंतरिम अनुतोष की मांग करने वाले आवेदन माध्यस्थम् कार्यवाही प्रारंभ होने से पूर्व भी किया जा सकता है । इसका क्या अर्थ है ? न्यायालय ने स्वयं ही **सुंदरम फाइनेंस लिमिटेड** वाले मामले में यह मत व्यक्त किया है । (एस. सी. सी. पृष्ठ 488, पैरा 9)

यह सच है कि जब माध्यस्थम् की कार्यवाही शुरू होने से पूर्व यदि धारा 9 के अधीन आवेदन फाइल किया जाता है तो माध्यस्थम् की कार्यवाही का अवलंब लेने के लिए आवेदक का आशय प्रकट रूप से स्पष्ट होना चाहिए । धारा 9 माध्यस्थम् की कार्यवाही प्रारंभ करने से पूर्व में आवेदन फाइल करने की अनुमति प्रदान करती है परन्तु उपबंध में इस बात का कोई संकेत नहीं है कि कितना पहले । शब्द 'पहले' का अर्थ है, अन्य बातों के साथ 'से आगे', अर्थात् उपस्थिति या दृष्टि में, विचार या संज्ञान के अधीन होता है । जब दो घटनाएं जो 'पहले' शब्द के उपयोग से परस्पर ईप्सित रूप से जुड़ी हुई हों तो उनमें घटना के संबंध में निकटता होनी चाहिए तथा बाद की घटना पर पूर्ववर्ती घटना के अनुसरण में दूरदर्शिता या दृष्टि के भीतर निश्चितता के रूप में विचार करना चाहिए । धारा 9 का अवलंब लेने वाले पक्षकार ने भले ही वास्तव में माध्यस्थम् की कार्यवाही प्रारंभ न की हो परन्तु उसके द्वारा न्यायालय का यह समाधान हो जाना चाहिए कि पक्षकार का वास्तव में माध्यस्थम् की कार्यवाही प्रारंभ करने का आशय है (जैसाकि **सुन्दरम फाइनेंस लिमिटेड** वाले मामले में किया गया है) और यह कि सकारात्मक रूप से युक्तियुक्त समय के भीतर माध्यस्थम् की कार्यवाही प्रारंभ होने जा रही है । युक्तियुक्त समय क्या होना चाहिए यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगा और ईप्सित अनुतोष की प्रकृति से स्वयं ही इसका पता चलेगा । समय की दूरी ऐसी नहीं होनी चाहिए कि उन

दो घटनाओं की निकटता को नष्ट कर दे जिसके मध्य वह अस्तित्व में और व्यपगत है । आदर्श विधि और संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय व्यापार विधि आयोग से संबंधित नियमों के आलोक में धारा 9 को अधिनियमित करने का उद्देश्य अंतरिम सुरक्षोपाय का उपबंध करना है । न्यायालय द्वारा पारित आदेश 'अंतरिम सुरक्षोपाय' अभिव्यक्ति के अर्थान्तर्गत आना चाहिए जो कि स्थायी सुरक्षोपाय से पूर्णतया भिन्न है ।

18. 1990 के पूर्ववर्ती अधिनियम से भिन्न माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 के अधीन माध्यस्थम् अभिकरण को धारा 17 के अधीन आदेश देने में सशक्त किया गया है जोकि अंतरिम उपायों की कोटि में आता है । धारा 17 के अधिनियमित होने के बावजूद धारा 9 की आवश्यकता यह है कि धारा 17 केवल माध्यस्थम् अभिकरण के अस्तित्व और कार्यात्मक होने के दौरान ही क्रियाशील होगी । उस अवधि के दौरान धारा 17 के अधीन माध्यस्थम् अभिकरण को दी गई शक्ति और धारा 9 के अधीन न्यायालय को दी गई शक्ति कुछ सीमा तक अतिव्यापी हो सकती है परन्तु जहां तक पूर्व और बाद की माध्यस्थम् की कार्यवाही की अवधि का संबंध है तो जिस पक्षकार को सुरक्षा के अंतरिम उपाय सुनिश्चित कराना है उसे उस दशा में केवल न्यायालय में आवेदन करना होगा । पक्षकार माध्यस्थम् कार्यवाही के पहले सुरक्षा के अंतरिम उपाय को सुनिश्चित करने में सफल होने के पश्चात् माध्यस्थम् कार्यवाही के लिए प्रदान की गई राहत पर गुजारा नहीं कर सकता और सुविधापूर्वक निकटतम अनुध्यात या प्रकट रूप से आशयित माध्यस्थम् कार्यवाही को अनदेखा करते हुए । यदि धारा 9 के अधीन आदेश पारित होने के बाद उचित समय के भीतर माध्यस्थम् कार्यवाही ही प्रारंभ नहीं की जाती है, तो धारा 9 के अधीन पारित आदेश और माध्यस्थम् कार्यवाही के मध्य संबंध विच्छेद हो जाएगा और पक्षकार को प्रदत्त की गई राहत 'पहले' किए गए आदेश के रूप में समाप्त हो जाएगी । उदाहरणार्थ माध्यस्थम् कार्यवाही को आसन्न मानकर किया गया । धारा 9 के

अधीन एक आवेदन के साथ पक्षकार द्वारा न्यायालय को प्रस्ताव दिए जाने पर न्यायालय द्वारा पक्षकार से यह पूछा जाना तर्कसंगत है कि कैसे और कब पक्षकार ने माध्यस्थम् कार्यवाही प्रारंभ करने के लिए न्यायालय के समक्ष आवेदन किया बल्कि जिस स्कीम में धारा 2 रखी गई है वह न्यायालय को ऐसा करने के लिए बाध्य करती है । न्यायालय धारा 9 के अधीन आदेश पारित करते समय पक्षकार को शर्तों पर रख सकती है और यदि पक्षकार शर्तो का उल्लंघन करता है तो आदेश को वापस भी ले सकती है ।

19. सुनवाई के दौरान हमने ग्रुप ए के विद्वान् काउंसेल से पूछा कि उन्होंने तारीख 2 जून, 2013 से अर्थात् वह तारीख जिस तारीख से माध्यस्थम् खंड का अवलंब लिया है या तारीख 22 जुलाई, 2003 जब धारा 9 के अधीन आवेदन फाइल किया गया था माध्यस्थम् कार्यवाही आरंभ करने के लिए क्या कदम उठाए हैं ? हमें बताया गया कि ग्रुप ए अधिनियम की धारा 9 के अधीन न्यायालय द्वारा पारित आदेश की प्रतीक्षा कर रहा था । यह इसका मुश्िकल से कोई स्पष्टीकरण है । माध्यस्थम् की कार्यवाही का प्रारंभ होना अंतरिम राहत की अनुमति या प्रत्याख्यान पर निर्भर नहीं करता है । समूह ए से यह अवेक्षा की गई थी कि भागीदारों द्वारा समूह ए के द्वारा माध्यस्थम् की मांग का उत्तर देने में असफल रहने पर अधिनियम की धारा 11 के अधीन माध्यस्थम् की नियुक्ति के लिए शीघ्रता से मांग की जानी चाहिए थी । इसलिए हमारी राय में यह समूह ए को राहत देने से इनकार करने हेतु पर्याप्त होता है । हालांकि मामले के तथ्य एवं परिस्थितियों में हम पाते हैं कि उच्च न्यायालय में जैसाकि रिसीवर की नियुक्ति की आवश्यकता पर विश्वस्त था और जैसाकि हम केवल आदेश को उपयुक्त रूप से संशोधित करने के इच्छुक हैं इसलिए हम धारा 9 के अधीन संपूर्ण रूप से इस कारण से आवेदन को खारिज करना उचित नहीं समझते हैं । हम बिना और समय की हानि के आवेदक को धारा 9 के अधीन मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए कदम उठाने का निदेश देते हैं ।”

उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए पूर्वोक्त कथन का अवलोकन करने पर स्पष्ट रूप से प्रकट होता है कि अंतरिम राहत की मांग करने वाले पक्ष द्वारा न्यायालय को इस तथ्य से संतुष्ट करना चाहिए कि वह अति शीघ्र माध्यस्थम् की कार्यवाही प्रारंभ करने का आशय रखता है और ऐसा करने में विफल होने के परिणामस्वरूप उसके द्वारा की गई किसी अंतरिम राहत को अस्वीकार किया जा सकता है । दूसरे शब्दों में जैसे ही पक्षकारों के मध्य कोई माध्यस्थम् विवाद उत्पन्न होता है तो वहां संबंधित पक्ष को मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए आगे बढ़ना चाहिए या उसके लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिएं और यदि ऐसा पाया जाता है कि मध्यस्थ की नियुक्ति निश्चित समय सीमा के भीतर नहीं की गई है तो इससे पक्षकार अंतरिम राहत के प्रतिदावे से वंचित हो जाएंगे ।

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

9. हमारे समक्ष मामले में अपीलार्थी द्वारा वर्णित घटनाओं के कालक्रम के अनुसार जैसाकि अपीलार्थी द्वारा बताया गया है वर्तमान मामला **मैसर्स अशोक ट्रेडर्स** (उपरोक्त) वाले मामले में परिकल्पित अपेक्षाओं को पूरा नहीं करता है । मामले में विवाद का आरंभ तारीख 16 जुलाई, 2016 को हुआ जब प्रत्यर्थियों ने करार के निष्पादन के लिए आवश्यक मानचित्रों पर हस्ताक्षर करने से इनकार कर दिया था और उसके बाद तारीख 11 मार्च, 2018 को जब प्रत्यर्थियों ने स्थानीय समाचारपत्र में एक सार्वजनिक नोटिस जारी किया कि उनके बीच समझौता समाप्त हो गया है और उसके बाद तारीख 16 अप्रैल, 2018 को जब प्रत्यर्थी को एक विधिक नोटिस जारी किया गया था जिसमें करार के खंड 35 का अवलंब लिया गया जो उनके मध्य विवाद को निपटाने के लिए मध्यस्थ की नियुक्ति के विषय में था और लगभग 15 दिनों बाद अर्थात् तारीख 2 मई, 2018 को अधिनियम की धारा 9 के अधीन एक आवेदन अपीलार्थी द्वारा जिला न्यायालय, भोपाल में मध्यस्थ की नियुक्ति तक अंतरिम राहत के लिए पेश किया गया ।

10. यहां पर यह ध्यान देने योग्य है कि तारीख 16 अप्रैल, 2018 के बाद अर्थात् मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए नोटिस की तारीख के पश्चात्, अधिनियम, 1996 की धारा 11(5)(6) के अधीन मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के द्वारा आवेदन इस न्यायालय के समक्ष फाइल नहीं किया गया । यहां तक कि एक वर्ष के भीतर भी आवेदन फाइल नहीं किया और इसे 26 जून, 2016 को अर्थात् एक वर्ष से अधिक समय के बाद फाइल किया । इस न्यायालय के विचार में अपीलार्थी द्वारा बिना किसी न्यायोचित कारण के केवल एक मध्यस्थ को नियुक्ति करने के लिए अपीलार्थी द्वारा एक वर्ष से अधिक का समय लगा है जिससे यह माना जा सकता है कि वे अंतरिम राहत के लिए हकदार नहीं है । दूसरी ओर यदि वाद हेतु की तारीख 16 जुलाई, 2016 मानी जाए जब कथित तौर पर प्रत्यर्थियों ने करार के निष्पादन के लिए आवश्यक मानचित्रों पर हस्ताक्षर करने से इनकार करने के बाद अपीलार्थियों की ओर से तारीख 26 जून, 2019 को मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए आवेदन करने, से विषय-सुख मुकदमेबाजी का स्पष्ट मामला बनता है क्योंकि वे फुरसत और लापरवाह तरीके से उनके लिए उपलब्ध उपचार का पीछा कर रहे थे जो उन्हें अंतरिम संरक्षण देने से वंचित करता है । यह भी पाया गया कि अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन तारीख 7 मई, 2018 को आवेदन फाइल किया गया जो तारीख 23 अप्रैल, 2019 को अर्थात् 11 महीने बाद निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा अंतिम रूप से निपटाया गया । इस प्रकार से अब तक ढाई वर्ष से अधिक समय बीत चुका है तब से अब तक अपीलार्थी/फर्म के पक्ष में कोई भी अंतरिम संरक्षण प्रवर्तन में नहीं है ।

11. जहां तक निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा अभिलिखित इस निष्कर्ष का संबंध है कि अपीलार्थी यह साबित करने में सक्षम नहीं हुआ है कि प्रत्यर्थियों ने करार के उचित निष्पादन के लिए उसके साथ सहयोग नहीं किया है और क्योंकि इस न्यायालय द्वारा पहले ही माना गया है कि अपीलार्थी विलंब के आधार पर किसी राहत का हकदार नहीं है इसलिए इस मामले के गुणागुण पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है ।

12. पूर्वोक्त चर्चा के आलोक में इस न्यायालय का यह दृढ़ मत है कि निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा आक्षेपित आदेश को पारित करने में कोई अवैधता कारित नहीं की गई है और न ही अधिकार क्षेत्र संबंधी कोई त्रुटि की गई है । परिणामस्वरूप निचले न्यायालय के विद्वान् न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश की पुष्टि करते हुए वर्तमान माध्यस्थम् अपील में गुणता का अभाव होने के कारण खारिज की जाती है । खर्चों के लिए कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

अम./अस.

संसद् के अधिनियम

विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963

(1963 का अधिनियम संख्यांक 47)

[13 दिसम्बर, 1963]

कतिपय प्रकारों के विनिर्दिष्ट अनुतोष से संबंधित विधि को परिभाषित और संशोधित करने के लिए

अधिनियम

भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

भाग 1

प्रारम्भिक

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारम्भ - (1) यह अधिनियम विनिर्दिष्ट अनुतोष अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा ।

(2) इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख[1] को प्रवृत्त होगा जिसे केन्द्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2. **परिभाषाएं** - इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, -

(क) "बाध्यता" के अंतर्गत विधि द्वारा प्रवर्तनीय हर एक कर्तव्य आता है ;

(ख) "व्यवस्थापन" से [भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 (1925 का 39) द्वारा यथापरिभाषित बिल अथवा क्रोड़पत्र से भिन्न] ऐसी लिखत अभिप्रेत है जिसके द्वारा जंगम या स्थावर सम्पत्ति में के क्रमवर्ती हितों के गन्तव्य अथवा न्यागमन को

---

[1] 1 मार्च, 1964, देखिए अधिसूचना सं. का. आ. 189, तारीख 13-1-1964, भारत का राजपत्र, भाग 2, खण्ड 3(ii), पृष्ठ 214.

व्ययनित किया जाता है या उसका व्ययनित किया जाना कारित होता है ;

(ग) "न्यास" का वही अर्थ है जो भारतीय न्यास अधिनियम, 1882 (1882 का 2) की धारा 3 में है और उस अधिनियम के अध्याय 9 के अर्थ के भीतर आने वाली न्यास प्रकृति की बाध्यता इसके अन्तर्गत आती है ;

(घ) "न्यासी" के अन्तर्गत हर ऐसा व्यक्ति आता है जो सम्पत्ति को न्यासतः धारण किए हुए है ;

(ङ) ऐसे अन्य सब शब्दों और पदों के, जो एतस्मिन् प्रयुक्त हैं किन्तु परिभाषित नहीं हैं, और भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) में परिभाषित हैं, वे ही अर्थ होंगे जो उस अधिनियम में उन्हें क्रमशः समनुदिष्ट हैं ।

3. **व्यावृत्तियां** – एतस्मिन् अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, इस अधिनियम की किसी भी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह –

(क) किसी व्यक्ति को विनिर्दिष्ट पालन से भिन्न अनुतोष के किसी ऐसे अधिकार से, जो वह किसी संविदा के अधीन रखता हो, वंचित करती है ; अथवा

(ख) दस्तावेजों पर भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के प्रवर्तन पर प्रभाव डालती है ।

4. **विनिर्दिष्ट अनुतोष का व्यक्तिगत सिविल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ही अनुदत्त किया जाना, दण्ड विधियों के प्रवर्तन के लिए नहीं** – विनिर्दिष्ट अनुतोष, व्यक्तिगत सिविल अधिकारों के प्रवर्तन के प्रयोजन के लिए ही अनुदत्त किया जा सकता है, न कि किसी दण्ड विधि के प्रवर्तन के प्रयोजन मात्र के लिए ।

भाग 2

विनिर्दिष्ट अनुतोष

अध्याय 1

सम्पत्ति के कब्जे का प्रत्युद्धरण

5. **विनिर्दिष्ट स्थावर सम्पत्ति का प्रत्युद्धरण** – जो व्यक्ति, किसी

विनिर्दिष्ट स्थावर सम्पत्ति के कब्जे का हकदार है, वह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा उपबन्धित प्रकार से उसका प्रत्युद्धरण कर सकेगा ।

6. **स्थावर सम्पत्ति से बेकब्जा किए गए व्यक्ति द्वारा वाद** – (1) यदि कोई व्यक्ति अपनी सम्पत्ति के बिना स्थावर सम्पत्ति से विधि के सम्यक् अनुक्रम से अन्यथा बेकब्जा कर दिया जाए, तो वह अथवा उससे व्युत्पन्न अधिकार द्वारा दावा करने वाला कोई भी व्यक्ति, किसी अन्य ऐसे हक के होते हुए भी जो ऐसे वाद में खड़ा किया जा सके, उसका कब्जा वाद द्वारा प्रत्युद्धृत कर सकेगा ।

(2) इस धारा के अधीन कोई भी वाद –

(क) बेकब्जा किए जाने की तारीख से छह मास के अवसान के पश्चात्; अथवा

(ख) सरकार के विरुद्ध,

नहीं लाया जाएगा ।

(3) इस धारा के अधीन संस्थित किसी भी वाद में पारित किसी भी आदेश या डिक्री से न तो कोई अपील होगी, और न ऐसे किसी आदेश या डिक्री का कोई पुनर्विलोकन ही अनुज्ञात होगा ।

(4) इस धारा की कोई भी बात किसी भी व्यक्ति को ऐसी सम्पत्ति पर अपना हक स्थापित करने के लिए वाद लाने से और उसके कब्जे का प्रत्युद्धरण करने से वर्जित नहीं करेगी ।

7. **विनिर्दिष्ट जंगम सम्पत्ति का प्रत्युद्धरण** – जो व्यक्ति किसी विनिर्दिष्ट जंगम सम्पत्ति के कब्जे का हकदार हो, वह सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा उपबन्धित प्रकार से उसका प्रत्युद्धरण कर सकेगा ।

स्पष्टीकरण 1 – न्यासी ऐसी जंगम सम्पत्ति के कब्जे के लिए इस धारा के अधीन वाद ला सकेगा, जिसमें के फायदाप्रद हित का वह व्यक्ति हकदार हो जिसके लिए वह न्यासी है ।

स्पष्टीकरण 2 – जंगम संपत्ति पर वर्तमान कब्जे का कोई विशेष

या अस्थायी अधिकार इस धारा के अधीन वाद के समर्थन के लिए पर्याप्त है ।

8. **जिस व्यक्ति का कब्जा है किन्तु स्वामी के नाते नहीं है, उसका उन व्यक्तियों को, जो अव्यवहित कब्जे के हकदार हैं, परिदत्त करने का दायित्व** – कोई भी व्यक्ति जिसका जंगम सम्पत्ति की किसी भी विशिष्ट वस्तु पर कब्जा अथवा नियंत्रण है जिसका वह स्वामी नहीं है, वह उसके अव्यवहित कब्जे के हकदार व्यक्ति को निम्नलिखित दशाओं में से किसी में भी उसका विनिर्दिष्टतः परिदान करने के लिए विवश किया जा सकेगा –

(क) जबकि दावाकृत वस्तु प्रतिवादी द्वारा वादी के अभिकर्ता अथवा न्यासी के रूप में धारित हो;

(ख) जबकि दावाकृत वस्तु की हानि के लिए धन के रूप में प्रतिकर वादी को यथायोग्य अनुतोष न पहुंचाता हो;

(ग) जबकि उसी हानि से कारित वास्तविक नुकसान का अभिनिश्चय करना अत्यन्त कठिन हो;

(घ) जबकि दावाकृत वस्तु का कब्जा वादी के पास से सदोषतः अन्तरित कराया गया हो ।

स्पष्टीकरण – जब तक और जहां तक कि तत्प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए, इस धारा के खंड (ख) या खंड (ग) के अधीन दावाकृत जंगम सम्पत्ति की किसी वस्तु के बारे में न्यायालय, यथास्थिति, यह उपधारित करेगा कि –

(क) दावाकृत वस्तु की हानि के लिए धन के रूप में प्रतिकर वादी को यथायोग्य अनुतोष न पहुंचाएगा;

(ख) उसकी हानि द्वारा कारित वास्तविक नुकसान का अभिनिश्चय करना अत्यन्त कठिन होगा ।

अध्याय 2
संविदाओं का विनिर्दिष्ट पालन

9. **संविदा पर आधारित अनुतोष के वादों में प्रतिरक्षाएं** – एतस्मिन्

अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, जहां कि किसी संविदा के बारे में किसी अनुतोष का दावा इस अध्याय के अधीन किया जाए, वहां वह व्यक्ति, जिसके विरुद्ध उस अनुतोष का दावा किया जाए, किसी भी ऐसे आधार का अभिवचन प्रतिरक्षा के तौर पर कर सकेगा जो उसे संविदाओं से संबंधित किसी भी विधि के अधीन उपलभ्य हो ।

संविदाएं जिनका विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन कराया जा सकता है

10. **दशाएं जिनमें संविदा का विनिर्दिष्ट पालन प्रवर्तनीय है** – इस अध्याय में अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी भी संविदा का विनिर्दिष्ट पालन न्यायालय के विवेकानुसार प्रवर्तित कराया जा सकेगा –

(क) जबकि उस कार्य का, जिसके करने का करार हुआ है अपालन द्वारा कारित वास्तविक नुकसान का अभिनिश्चय करने के लिए कोई मानक विद्यमान न हो; अथवा

(ख) जबकि वह कार्य, जिसके करने का करार हुआ है ऐसा हो कि उसके अपालन के लिए धन के रूप के प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष न पहुंचाता हो ।

स्पष्टीकरण – जब तक और जहां तक कि तत्प्रतिकूल साबित न कर दिया जाए न्यायालय यह उपधारित करेगा कि –

(i) स्थावर सम्पत्ति के अन्तरण की संविदा के भंग का धन के रूप में प्रतिकर द्वारा यथायोग्य अनुतोष नहीं दिया जा सकता; तथा

(ii) जंगम सम्पत्ति के अन्तरण की संविदा के भंग का इस प्रकार अनुतोष दिया जा सकता है सिवाय निम्नलिखित दशाओं के –

(क) जहां कि सम्पत्ति मामूली वाणिज्य-वस्तु न हो अथवा वादी के लिए विशेष मूल्य या हित की हो अथवा ऐसा माल हो जो बाजार में सुगमता से अभिप्राप्य नहीं हो;

(ख) जहां कि सम्पत्ति प्रतिवादी द्वारा वादी के अभिकर्ता या न्यासी के रूप में धारित हो ।

11. **दशाएं जिनमें न्यासों के संसक्त संविदाओं का विनिर्दिष्ट पालन**

प्रवर्तनीय हैं – (1) इस अधिनियम में अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, किसी संविदा का विनिर्दिष्ट पालन, न्यायालय के विवेकानुसार प्रवर्तित कराया जा सकेगा जबकि वह कार्य, जिसके करने का करार हुआ है, किसी न्यास के पूर्णतः या भागतः पालन में हो ।

(2) न्यासी द्वारा अपनी शक्तियों के बाहर या न्यास के भंग में की गई संविदा का विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन नहीं कराया जा सकता ।

12. **संविदा के भाग का विनिर्दिष्ट पालन** – (1) इस धारा में एतस्मिन् पश्चात्, अन्यथा उपबन्धित के सिवाय, न्यायालय किसी संविदा के किसी भाग के विनिर्दिष्ट पालन का निदेश नहीं देगा ।

(2) जहां कि किसी संविदा का कोई पक्षकार उसमें के अपने पूरे भाग का पालन करने में असमर्थ हो किन्तु वह भाग, जिसे अपालित रह जाना ही है, पूरे भाग के अनुपात में मूल्य में बहुत कम हो और उसके लिए धन के रूप में प्रतिकर हो सकता हो, वहां दोनों में से किसी भी पक्षकार के वाद लाने पर न्यायालय संविदा में से उतने भर के विनिर्दिष्ट पालन का निदेश दे सकेगा जितने का पालन किया जा सकता हो और उतने के लिए धन के रूप में प्रतिकर दिलवा सकेगा ।

(3) जहां कि संविदा का कोई पक्षकार उसमें के अपने पूरे भाग का पालन करने में असमर्थ हो और वह भाग जिसे अपालित रह जाना ही है या तो –

(क) सम्पूर्ण का प्रचुर भाग हो यद्यपि उसका धन के रूप में प्रतिकर हो सकता हो; या

(ख) उसका धन के रूप में प्रतिकर न हो सकता हो,

वहां वह विनिर्दिष्ट पालन के लिए डिक्री अभिप्राप्त करने का हकदार नहीं है किन्तु न्यायालय दूसरे पक्षकार के वाद लाने पर व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार को यह निदेश दे सकेगा कि संविदा के अपने उतने भाग का, जितने का वह पालन कर सकता है, विनिर्दिष्टतः पालन करे, यदि दूसरा पक्षकार –

(i) खंड (क) के अधीन आने वाली दशा में, पूरी संविदा के लिए करारित प्रतिफल उसमें से उस भाग के प्रतिफल को, जिसे

अपालित रह जाना ही है घटाकर दे दे या दे चुका हो और, खंड (ख) के अधीन आने वाली दशा में पूरी संविदा के लिए प्रतिफल, कोई कमी किए बिना, [1][दे दे या दे चुका हो]; तथा

(ii) दोनों दशाओं में से हर एक में संविदा के शेष भाग के पालन कराने के सब दावों को तथा शेष की ऊनता के लिए या प्रतिवादी के व्यतिक्रम द्वारा उसे हुई हानि या नुकसान के लिए प्रतिकर पाने के समस्त अधिकार को त्याग दे ।

(4) जबकि संविदा का कोई भाग जिसका यदि उसे अलग से ले तो विनिर्दिष्टतः पालन किया जा सकता है और किया जाना चाहिए, उसी संविदा के ऐसे अन्य भाग से पृथक् और स्वतन्त्र आधार पर खड़ा हो जिसका विनिर्दिष्टतः पालन नहीं किया जा सकता या नहीं किया जाना चाहिए, वहां न्यायालय पूर्वकथित भाग के विनिर्दिष्ट पालन का निदेश दे सकेगा ।

स्पष्टीकरण – संविदा का कोई पक्षकार उसमें के अपने पूरे भाग का पालन करने में इस धारा के प्रयोजनों के लिए असमर्थ माना जाएगा, यदि उसकी विषयवस्तु का कोई प्रभाग जो संविदा की तारीख को अस्तित्व में था उसके पालन के समय अस्तित्व में न रह जाए ।

13. **हक रखने वाले या अपूर्ण हक वाले व्यक्ति के विरुद्ध क्रेता या पट्टेदार के अधिकार** – (1) जहां कि किसी स्थावर सम्पत्ति को ऐसा व्यक्ति, जिसका उसमें कोई हक न हो अथवा केवल अपूर्ण हक हो, बेचने की अथवा पट्टे पर देने की संविदा करे वहां क्रेता या पट्टेदार के इस अध्याय के अन्य उपबन्धों के अध्यधीन निम्नलिखित अधिकार हैं, अर्थात् :–

(क) यदि विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता में संविदा के पश्चात् सम्पत्ति में कोई हित अर्जित किया हो तो क्रेता या पट्टेदार ऐसे हित में से संविदा की पूर्ति करने के लिए उसे विवश कर सकेगा;

(ख) जहां कि हक को विधिमान्य बनाने के लिए अन्य व्यक्तियों की सहमति आवश्यक हो और विक्रेता या पट्टाकर्ता की

---

[1] 1964 के अधिनियम सं. 52 की धारा 3 तथा अनुसूची 2 द्वारा अंतःस्थापित ।

प्रार्थना पर वे सहमति देने को आबद्ध हों, वहां क्रेता या पट्टेदार उसको ऐसी सहमति उपाप्त करने के लिए विवश कर सकेगा और जबकि हक को विधिमान्य बनाने के लिए अन्य व्यक्तियों द्वारा हस्तान्तरण आवश्यक हो और विक्रेता या पट्टाकर्ता की प्रार्थना पर वे हस्तान्तरण करने को आबद्ध हों तब क्रेता या पट्टेदार उसको ऐसा हस्तान्तरण उपाप्त करने के लिए विवश कर सकेगा;

(ग) जहां कि विक्रेता विल्लंगम रहित सम्पत्ति को बेचने की प्रव्यंजना करे किन्तु सम्पत्ति क्रय-धन से अनधिक राशि के लिए बंध है और विक्रेता को वास्तव में केवल मोचन का ही अधिकार हो वहां क्रेता उसे उस बंधक का मोचन कराने के लिए और बंधकदार से विधिमान्य उन्मोचन और जहां आवश्यक हो, वहां हस्तान्तरण भी अभिप्राप्त करने के लिए विवश कर सकेगा;

(घ) जहां कि विक्रेता या पट्टाकर्ता संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के लिए वाद लाए और हक के अभाव या अपूर्ण हक के आधार पर वाद खारिज हो जाए वहां प्रतिवादी को अपने निक्षेप की, यदि कोई हो, उस पर ब्याज सहित वापसी का और वाद के अपने खर्चे पाने का अधिकार है तथा ऐसे निक्षेप, ब्याज और खर्चों के लिए उस हित पर, यदि कोई हो, धारणाधिकार है जो उस सम्पत्ति में विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता का हो जो संविदा की विषयवस्तु है ।

(2) उपधारा (1) के उपबन्ध जंगम सम्पत्ति के विक्रय या भाड़े की संविदाओं को भी, यावत्शक्य, लागू होंगे ।

संविदाएं जिनका विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन नहीं कराया जा सकता है

14. **संविदाएं जो विनिर्दिष्टतः प्रवर्तनीय नहीं हैं** – (1) निम्नलिखित संविदाएं विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं कराई जा सकतीं, अर्थात् :–

(क) वह संविदा जिसके अपालन के लिए धन के रूप में प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष हो ;

(ख) वह संविदा जिसमें सूक्ष्म या बहुत से ब्यौरे हों अथवा जो पक्षकारों की वैयक्तिक अर्हताओं या स्वेच्छा पर इतनी आश्रित हो अथवा अन्यथा अपनी प्रकृति के कारण ऐसी हो कि न्यायालय

उसके तात्विक निबन्धनों के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन न करा सकता हो;

(ग) वह संविदा जो अपनी प्रकृति से ही पर्यवसेय हो;

(घ) वह संविदा जिसके पालन में ऐसा सतत्-कर्तव्य का पालन अन्तर्वलित है जिसका न्यायालय पर्यवेक्षण न कर सके ।

(2) माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 (1940 का 10) में यथा उपबंधित के सिवाय वर्तमान या भावी मतभेदों को माध्यस्थम् के लिए निर्देशन करने की कोई भी संविदा विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं की जाएगी, किन्तु यदि कोई व्यक्ति जिसने (ऐसे माध्यस्थम्-करार से, जिसे उक्त अधिनियम के उपबन्ध लागू होते हों, भिन्न) ऐसी संविदा की हो और उसका पालन करने से इनकार कर दिया हो किसी ऐसे विषय के बारे में वाद लाए, जिसके निर्देशन की उसने संविदा की है, तो ऐसी संविदा का अस्तित्व उस वाद का वर्जन करेगा ।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ग) या खण्ड (घ) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी न्यायालय निम्नलिखित दशाओं में विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन करा सकेगा –

(क) जहां कि वाद ऐसी संविदा के प्रवर्तन के लिए हो, और –

(i) किसी ऐसे ऋण के प्रतिसंदाय को प्रतिभूत करने के लिए, जिसे उधार लेने वाला तत्क्षण प्रतिसंदत्त करने को रजामन्द न हो, बन्धक निष्पादन करने या कोई अन्य प्रतिभूति देने के लिए हो :

परन्तु जहां कि उधार का केवल एक भाग दिया गया हो, वहां यह तब जब कि उधार देने वाला संविदा के निबन्धनों के अनुसार उधार का अवशिष्ट भाग देने को रजामन्द हो, अथवा

(ii) किसी कम्पनी के कोई डिबेंचर लेने और उनके निमित्त संदाय करने के लिए हो;

(ख) जहां कि वाद –

(i) भागीदारी के प्ररूपिक विलेख के निष्पादन के लिए हो,

यदि भागीदारी के कारबार का चलाना पक्षकारों ने प्रारम्भ कर दिया हो; अथवा

(ii) किसी फर्म के भागीदार के अंश के क्रय के लिए हो;

(ग) जहां कि वाद ऐसी संविदा का प्रवर्तन कराने के लिए हो जो कोई निर्माण तैयार करने के लिए या भूमि पर कोई अन्य संकर्म के निष्पादन के लिए है :

परन्तु यह तब जब कि निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाएं, अर्थात् :-

(i) निर्माण या अन्य संकर्म संविदा में पर्याप्त रूप से प्रमित शब्दों में ऐसे वर्णित हों कि न्यायालय निर्माण या संकर्म की ठीक-ठीक प्रकृति का अवधारण करने में समर्थ हो सके;

(ii) संविदा के पालन में वादी का सारभूत हित हो और हित भी ऐसी प्रकृति का हो कि धन के रूप में प्रतिकर उसके अपालन के लिए यथायोग्य अनुतोष न हो; तथा

(iii) संविदा के अनुसरण में प्रतिवादी ने उस समस्त भूमि का या उसके किसी भाग का कब्जा अभिप्राप्त कर लिया हो जिस पर निर्माण तैयार या अन्य संकर्म निष्पादित किया जाना है ।

वे व्यक्ति जिनके पक्ष में या विरुद्ध संविदाएं विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित की जा सकेंगी

15. **कौन विनिर्दिष्ट पालन अभिप्राप्त कर सकेगा** – इस अध्याय में अन्यथा उपबंधित के सिवाय, किसी संविदा का विनिर्दिष्ट पालन अभिप्राप्त किया जा सकेगा –

(क) उसमें के किसी भी पक्षकार द्वारा;

(ख) उसमें के किसी भी पक्षकार के हित-प्रतिनिधि या मालिक द्वारा :

परन्तु जहां कि ऐसे पक्षकार की विद्वत्तता, कौशल, शोधन क्षमता या कोई वैयक्तिक गुण संविदा का तात्विक अंग हो या जहां कि संविदा

उपबन्ध करती हो कि उसका हित समनुदेशित नहीं किया जाएगा, वहां उसका हित-प्रतिनिधि या उसका मालिक संविदा का विनिर्दिष्ट पालन कराने का हकदार न होगा, जब तक कि ऐसे पक्षकार ने संविदा के अपने भाग का विनिर्दिष्ट पालन पहले ही न कर दिया हो या उसके हित-प्रतिनिधि या उसके मालिक द्वारा किया गया उसका पालन दूसरे पक्षकार द्वारा पहले ही प्रतिगृहीत न किया जा चुका हो;

(ग) जहां कि संविदा विवाह पर का व्यवस्थापन या एक ही कुटुम्ब के सदस्यों के बीच संदेहपूर्ण अधिकारों का कोई समझौता हो, वहां तद्धीन फायदा पाने के हकदार किसी भी व्यक्ति द्वारा;

(घ) जहां कि किसी आजीवन अभिधारी द्वारा किसी शक्ति के सम्यक् प्रयोग में कोई संविदा की गई हो, वहां शेष भोगी द्वारा;

(ङ) सकब्जा उत्तरभोगी द्वारा, जहां कि करार ऐसी प्रसंविदा हो जो उसके हक पूर्वाधिकारी के साथ की गई हो और उत्तरभोगी उस प्रसंविदा के फायदे का हकदार हो;

(च) शेष के उत्तरभोगी द्वारा, जहां कि करार वैसी प्रसंविदा हो, और उत्तरभोगी उसके फायदे का हकदार हो, उसके भंग के कारण तात्विक क्षति उठाएगा;

(छ) जबकि किसी कम्पनी ने संविदा की हो और तत्पश्चात् वह किसी दूसरी कम्पनी में समामेलित हो गई हो, तब उस समामेलन से उद्भूत नई कम्पनी द्वारा;

(ज) जबकि किसी कम्पनी के सम्प्रवर्तकों ने उसके निगमन के पहले कम्पनी के प्रयोजनों के लिए कोई संविदा की हो और संविदा निगमन के निबन्धनों द्वारा समर्थित हो तब उस कम्पनी द्वारा :

परन्तु यह तब जबकि कम्पनी ने संविदा को प्रतिगृहीत कर लिया हो और संविदा के दूसरे पक्षकार को ऐसा प्रतिग्रहण संसूचित कर दिया हो ।

16. **अनुतोष का वैयक्तिक वर्जन** – संविदा का विनिर्दिष्ट पालन किसी ऐसे व्यक्ति के पक्ष में नहीं कराया जा सकता –

(क) जो उसके भंग के लिए प्रतिकर वसूल करने का हकदार न हो ; अथवा

(ख) जो संविदा के किसी मर्मभूत निबन्धन का, जिसका उसकी ओर से पालन किया जाना शेष हो, पालन करने में असमर्थ हो गया हो, या उसका अतिक्रमण करे, या संविदा के प्रति कपट करे अथवा जानबूझकर ऐसा कार्य करे जो संविदा द्‌वारा स्थापित किए जाने के लिए आशयित संबंध का विसंवादी या ध्वंसक हो; अथवा

(ग) जो यह प्रकथन करने और साबित करने में असफल रहे कि उसके संविदा के उन निबन्धनों से भिन्न जिनका पालन प्रतिवादी द्‌वारा निवारित अथवा अधित्यक्त किया गया है, ऐसे मर्मभूत निबन्धनों का जो उसके द्‌वारा पालन किए जाने हैं, उसने पालन कर दिया है अथवा पालन करने के लिए वह सदा तैयार और रजामन्द रहा है ।

स्पष्टीकरण – खण्ड (ग) के प्रयोजनों के लिए –

(i) जहां कि संविदा में धन का संदाय अन्तर्वलित हो, वादी के लिए आवश्यक नहीं है कि वह प्रतिवादी को किसी धन का वास्तव में निविदान करे या न्यायालय में निक्षेप करे सिवाय जबकि न्यायालय ने ऐसा करने का निदेश दिया हो ;

(ii) वादी को यह प्रकथन करना होगा कि वह संविदा का उसके शुद्ध अर्थान्वयन के अनुसार पालन कर चुका, अथवा पालन करने को तैयार और रजामन्द है ।

17. **किसी सम्पत्ति के बेचने या पट्टे पर देने की ऐसे व्यक्ति द्‌वारा संविदा जिसका उस पर कोई हक न हो, विनिर्दिष्टतः प्रवर्तनीय नहीं है** – (1) किसी स्थावर सम्पत्ति के बेचने अथवा पट्टे पर देने की संविदा ऐसे विक्रेता अथवा पट्टाकर्ता के पक्ष में विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं कराई जा सकती –

(क) जिसने यह जानते हुए कि उस सम्पत्ति पर उसका हक नहीं है, उसे बेचने की या पट्टे पर देने की संविदा की हो;

(ख) जिसने यद्‌यपि इस विश्वास के साथ संविदा की थी कि सम्पत्ति पर उसका अच्छा हक है, तथापि, जो विक्रय के या पट्टे के

पूरा करने के लिए पक्षकारों या न्यायालय द्वारा नियत किए गए समय पर क्रेता या पट्टेदार को युक्तियुक्त शंका से रहित हक नहीं दे सकता ।

(2) उपधारा (1) के उपबन्ध, जंगम सम्पत्ति के विक्रय या अविक्रय की संविदाओं को भी यावत्शक्य लागू होंगे ।

18. **फेरफार किए बिना अप्रवर्तन** – जहां कि वादी ऐसी किसी लिखित संविदा का विनिर्दिष्ट पालन कराना चाहता है, जिसमें फेरफार होना प्रतिवादी अभिकथित करता है, वहां वादी, ऐसे अभिकथित फेरफार के बिना ईप्सित पालन निम्नलिखित दशाओं में, अभिप्राप्त नहीं कर सकता, अर्थात् :–

(क) जहां कि ऐसी लिखित संविदा जिसका पालन ईप्सित है, कपट, तथ्य की भूल तथा दुर्व्यपदेशन के कारण, अपने निबन्धनों और प्रभाव में उससे भिन्न हो जिसका पक्षकारों ने करार किया था अथवा जिसमें पक्षकारों के बीच करार किए गए वे सारे निबन्धन अन्तर्विष्ट न हों जिनके आधार पर प्रतिवादी ने संविदा की थी ;

(ख) जहां कि पक्षकारों का उद्देश्य ऐसा कोई विधिक परिणाम पैदा करना था जो यह संविदा, जैसी वह विरचित की गई है, पैदा करने के लिए परिकल्पित न हों ;

(ग) जहां कि संविदा के निष्पादन के पश्चात् पक्षकारों ने उसके निबन्धनों में फेरफार कर दिया हो ।

19. **पक्षकारों के और उनसे व्युत्पन्न पश्चात्वर्ती हक के अधीन दावा करने वाले व्यक्तियों के विरुद्ध अनुतोष** – इस अध्याय द्वारा यथा उपबन्धित के सिवाय संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन निम्नलिखित के विरुद्ध कराया जा सकेगा –

(क) उसमें का कोई पक्षकार ;

(ख) ऐसे मूल्यार्थ अन्तरिती के सिवाय, जिसने अपना धन सद्भावपूर्वक तथा मूल संविदा की सूचना के बिना दिया हो, ऐसा कोई दूसरा व्यक्ति, जो उससे व्युत्पन्न ऐसे हक के अधीन दावा कर रहा हो जो संविदा के पश्चात् उद्भूत हुआ हो ;

(ग) ऐसा कोई व्यक्ति जो ऐसे हक के अधीन दावा कर रहा हो जो हक, यद्‌यपि संविदा के पहले का और वादी की जानकारी में था, तथापि प्रतिवादी द्‌वारा विस्थापित किया जा सकता था ;

(घ) जबकि किसी कम्पनी ने कोई संविदा की हो और उसके पश्चात् किसी दूसरी कम्पनी से समामेलित हो गई हो तब ऐसे समामेलन से उद्भूत नई कम्पनी ;

(ङ) जबकि किसी कम्पनी के संप्रवर्तकों ने उसके निगमन के पहले कोई संविदा कम्पनी के प्रयोजन के लिए की हो और संविदा ऐसी हो जो निगमन के निबन्धनों द्‌वारा समर्थित हो, तब वह कम्पनी :

परन्तु यह तब जब कि कम्पनी ने संविदा को प्रतिगृहीत कर लिया हो और संविदा के दूसरे पक्षकार को ऐसा प्रतिग्रहण संसूचित कर दिया हो ।

न्यायालय का विवेकाधिकार और शक्तियां

20. **विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री करने के बारे में विवेकाधिकार –** (1) विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री करने की अधिकारिता वैवेकिक है और न्यायालय ऐसा अनुतोष अनुदत्त करने के लिए आबद्ध नहीं है केवल इस कारण से कि ऐसा करना विधिपूर्ण है किन्तु न्यायालय का यह विवेकाधिकार मनमाना नहीं है वरन् स्वस्थ और युक्तियुक्त, न्यायिक सिद्धांतों द्‌वारा मार्गदर्शित तथा अपील न्यायालय द्‌वारा शुद्धिशक्य है ।

(2) निम्नलिखित दशाएं ऐसी हैं जिनमें न्यायालय विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री न करने के अपने विवेकाधिकार का उचिततया प्रयोग कर सकेगा –

(क) जहां कि संविदा के निबन्धन या संविदा करने के समय पक्षकारों का आचरण या अन्य परिस्थितियां, जिनके अधीन संविदा की गई थी, ऐसी हों कि संविदा यद्‌यपि शून्यकरणीय नहीं है, तथापि वादी को प्रतिवादी के ऊपर अऋजु फायदा देती है ; अथवा

(ख) जहां कि संविदा का पालन प्रतिवादी को कुछ ऐसे कष्ट में डाल देगा जिसकी वह पहले से कल्पना नहीं कर सका था, और उसका अपालन वादी को वैसे किसी कष्ट में नहीं डालेगा ;

(ग) जहां कि प्रतिवादी ने संविदा ऐसी परिस्थितियों के अधीन की हो जिनसे यद्यपि संविदा शून्यकरणीय तो नहीं हो जाती किन्तु उसके विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन असामयिक हो जाता है ।

स्पष्टीकरण 1 – प्रतिफल की अपर्याप्तता मात्र या यह तथ्य मात्र कि संविदा प्रतिवादी के लिए दुर्भर या अपनी प्रकृति से ही अदूरदर्शी है, खण्ड (क) के अर्थ के भीतर अऋजु फायदा अथवा खण्ड (ख) के अर्थ के भीतर कष्ट न समझा जाएगा ।

स्पष्टीकरण 2 – यह प्रश्न कि संविदा का पालन खण्ड (ख) के अर्थ के भीतर प्रतिवादी को कष्ट में डाल देगा या नहीं, संविदा के समय विद्यमान परिस्थितियों के प्रति निर्देशन से अवधारित किया जाएगा सिवाय उन दशाओं के जिनमें कि कष्ट संविदा के पश्चात् वादी द्वारा किए गए ऐसे किसी कार्य के परिणामस्वरूप हुआ हो ।

(3) किसी ऐसी दशा में जहां कि वादी ने विनिर्दिष्टतः पालनीय संविदा के परिणामस्वरूप सारवान् कार्य किए हैं या हानियां उठाई हैं वहां न्यायालय विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री करने के विवेकाधिकार का उचिततया प्रयोग कर सकेगा ।

(4) न्यायालय किसी पक्षकार को संविदा का विनिर्दिष्ट पालन कराने से इनकार केवल इस आधार पर नहीं करेगा कि संविदा दूसरे पक्षकार की प्रेरणा पर प्रवर्तनीय नहीं है ।

21. **कतिपय मामलों में प्रतिकर दिलाने की शक्ति** – (1) किसी संविदा के विनिर्दिष्ट पालन के वाद में वादी, ऐसे पालन के या तो अतिरिक्त या स्थान पर उसके भंग के लिए प्रतिकर का भी दावा कर सकेगा ।

(2) यदि किसी ऐसे वाद में, न्यायालय यह विनिश्चय करे कि विनिर्दिष्ट पालन तो अनुदत्त नहीं किया जाना चाहिए किन्तु पक्षकार के बीच ऐसी संविदा है जो प्रतिवादी द्वारा भंग की गई है और वादी उस भंग के लिए प्रतिकर पाने का हकदार है, तो वह उसे तदनुसार वैसा प्रतिकर दिलाएगा ।

(3) यदि किसी ऐसे वाद में, न्यायालय यह विनिश्चय करे कि

विनिर्दिष्ट पालन तो अनुदत्त किया जाना चाहिए किन्तु उस मामले में न्याय की तुष्टि के लिए इतना ही पर्याप्त नहीं है और संविदा के भंग के लिए वादी को कुछ प्रतिकर भी दिया जाना चाहिए तो वह तद्नुसार उसको ऐसा प्रतिकर दिलाएगा ।

(4) इस धारा के अधीन अधिनिर्णीत किसी प्रतिकर की रकम के अवधारण में न्यायालय, भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 73 में विनिर्दिष्ट सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित होगा ।

(5) इस धारा के अधीन कोई प्रतिकर नहीं दिलाया जाएगा जब तक कि वादी ने अपने वादपत्र में ऐसे प्रतिकर का दावा न किया हो :

परन्तु जहां वादपत्र में वादी ने किसी ऐसे प्रतिकर का दावा न किया हो वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में वादी को वादपत्र में ऐसे प्रतिकर का दावा अन्तर्गत करने के लिए संशोधित करने की अनुज्ञा ऐसे निबन्धनों पर देगा जैसे न्यायसंगत हों ।

स्पष्टीकरण – यह परिस्थिति कि संविदा विनिर्दिष्ट पालन के अयोग्य हो गई है न्यायालय को इस धारा द्वारा प्रदत्त अधिकारिता के प्रयोग से प्रवारित नहीं करती ।

22. **कब्जा, विभाजन, अग्रिम धन का प्रतिदाय आदि के लिए अनुतोष अनुदत्त करने की शक्ति** – (1) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) में किसी तत्प्रतिकूल बात के अन्तर्विष्ट होते हुए भी, स्थावर सम्पत्ति के अन्तरण की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का वाद लाने वाला कोई व्यक्ति, समुचित मामले में –

(क) ऐसे पालन के अतिरिक्त सम्पत्ति का कब्जा या विभाजन और पृथक् कब्जा मांग सकेगा ; अथवा

(ख) उस दशा में जिसमें कि उसका विनिर्दिष्ट पालन का दावा नामंजूर कर दिया गया हो कोई भी अन्य अनुतोष, जिसका वह हकदार हो और जिसके अन्तर्गत [1][उस द्वारा] दिए गए किसी अग्रिम धन या निक्षेप का प्रतिदाय भी आता है, मांग सकेगा ।

---

[1] 1964 के अधिनियम सं. 52 की धारा 3 तथा अनुसूची 2 द्वारा "उसको" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(2) उपधारा (1) के खण्ड (क) या खण्ड (ख) के अधीन कोई भी अनुतोष न्यायालय द्वारा अनुदत्त नहीं किया जाएगा जब तक कि उसका विनिर्दिष्टतः दावा न किया गया हो :

परन्तु जहां कि वादपत्र में वादी ने किसी ऐसे अनुतोष का दावा न किया हो वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में वादी को वादपत्र में ऐसे अनुतोष का दावा अन्तर्गत करने के लिए संशोधन करने की अनुज्ञा ऐसे निबन्धनों पर देगा जैसे न्यायसंगत हों ।

(3) उपधारा (1) के खण्ड (ख) के अधीन अनुतोष अनुदत्त करने की न्यायालय की शक्ति धारा 21 के अधीन प्रतिकर देने की उसकी शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालेगी ।

23. **नुकसानी का परिनिर्धारण विनिर्दिष्ट पालन के लिए वर्जन न होगा** – (1) जिस संविदा का विनिर्दिष्टतः प्रवर्तन अन्यथा उचित हो, यद्यपि उसके भंग की दशा में संदेय रकम के तौर पर कोई राशि उसमें नामित हो और व्यतिक्रम करने वाला पक्षकार उसे देने के लिए रजामन्द हो तथापि उसका ऐसे प्रवर्तन किया जा सकेगा, यदि न्यायालय का संविदा के निबन्धनों और अन्य विद्यमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए समाधान हो जाए कि वह राशि केवल संविदा के पालन को सुनिश्चित करने के प्रयोजन से ही नामित है, न कि व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार को यह विकल्प देने के प्रयोजन से कि वह विनिर्दिष्ट पालन के स्थान पर धन का संदाय कर सके ।

(2) इस धारा के अधीन विनिर्दिष्ट पालन का प्रवर्तन करते समय, न्यायालय संविदा में ऐसी नामित राशि के संदाय की भी डिक्री नहीं करेगा ।

24. **विनिर्दिष्ट पालन के वाद के खारिज होने के पश्चात् भंग के लिए प्रतिकर के वाद का वर्जन** – किसी संविदा के या उसके किसी भाग में विनिर्दिष्ट पालन के वाद की खारिजी, यथास्थिति, ऐसी संविदा या उसके भाग के भंग के लिए प्रतिकर का वाद लाने के वादी के अधिकार का वर्जन कर देगी किन्तु किसी अन्य ऐसे अनुतोष के लिए वाद लाने के उसके अधिकार का वर्जन नहीं करेगी जिसका वह ऐसे भंग के कारण हकदार होगा ।

पंचाटों का प्रवर्तन और व्यवस्थापनों के निष्पादन के लिए निदेश

25. **कतिपय पंचाटों को और व्यवस्थापनों को निष्पादित करने की वसीयती निदेशों को पूर्ववर्ती धाराओं का लागू होना** – इस अध्याय के संविदा विषयक उपबन्ध उन पंचाटों को जिन्हें माध्यस्थम् अधिनियम, 1940 (1940 का 10) लागू नहीं होता, और विल या क्रोड़पत्र के ऐसे निदेशों को, जो किसी विशिष्ट व्यवस्थापन को निष्पादित करने के बारे में हो लागू होंगे ।

अध्याय 3
लिखतों की परिशुद्धि

26. **लिखतें कब परिशोधित की जा सकेंगी** – (1) जबकि पक्षकारों के कपट या पारस्परिक भूल के कारण कोई लिखित संविदा या अन्य लिखत [जो किसी ऐसी कम्पनी के संगम-अनुच्छेद न हों, जिसे कम्पनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) लागू होता हो] उनके वास्तविक आशय को अभिव्यक्त नहीं करती, तब –

(क) दोनों में से कोई पक्षकार या उसका हित प्रतिनिधि लिखत को परिशोधित कराने का वाद संस्थित कर सकेगा ; अथवा

(ख) वादी किसी ऐसे वाद में, जिसमें लिखत के अधीन उद्भूत कोई अधिकार विवाद्य हो, अपने अभिवचन में दावा कर सकेगा कि लिखत परिशोधित की जाए ; अथवा

(ग) ऐसे किसी वाद में जैसा खण्ड (ख) में निर्दिष्ट है, प्रतिवादी किसी अन्य प्रतिरक्षा के साथ-साथ जो उसको उपलब्ध हो, लिखत की परिशुद्धि की मांग कर सकेगा ।

(2) यदि किसी वाद में, जिसमें संविदा या अन्य लिखत का उपधारा (1) के अधीन परिशोधित कराना ईप्सित हो, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि कपट या भूल के कारण, वह लिखत, पक्षकारों का वास्तविक आशय अभिव्यक्त नहीं करती, तो जहां तक पर व्यक्तियों द्वारा सद्भावपूर्वक और मूल्यार्थ अर्जित अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना ऐसा किया जा सके, न्यायालय स्वविवेक में लिखत को ऐसे परिशोधित करने का निदेश दे सकेगा जिससे वह आशय अभिव्यक्त हो जाए ।

(3) लिखित संविदा पहले परिशोधित की जा सकेगी और तब, यदि परिशुद्धि का दावा करने वाले पक्षकार ने अपने अभिवचन में ऐसी प्रार्थना की हो और न्यायालय ठीक समझे तो वह विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित की जा सकेगी ।

(4) किसी लिखत की परिशुद्धि के लिए इस धारा के अधीन किसी भी पक्षकार को अनुतोष अनुदत्त न किया जाएगा जब तक कि उसका विनिर्दिष्टतः दावा न किया गया हो :

परन्तु जहां कि किसी पक्षकार ने अपने अभिवचन में किसी ऐसे अनुतोष का दावा न किया हो, वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में ऐसे दावे को अन्तर्गत करने के लिए अभिवचन को संशोधित करने की अनुज्ञा ऐसे निबन्धनों पर देगा, जो न्यायसंगत हों ।

अध्याय 4

संविदाओं का विखंडन

27. **विखंडन कब न्यायनिर्णीत या नामंजूर किया जा सकेगा** – (1) किसी संविदा में हितबद्ध कोई भी व्यक्ति उसे विखंडित कराने के लिए वाद ला सकेगा और ऐसा विखंडन निम्नलिखित दशाओं में से किसी में भी न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णीत किया जा सकेगा, अर्थात् :–

(क) जहां कि संविदा वादी द्वारा शून्यकरणीय या पर्यवसेय हो ;

(ख) जहां कि संविदा ऐसे हेतुकों से विधिविरुद्ध हो जो उसके देखने से ही प्रकट नहीं है और प्रतिवादी का दोष वादी से अधिक है ।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, न्यायालय संविदा का विखंडन नामंजूर कर सकेगा –

(क) जहां कि वादी ने अभिव्यक्ततः या विवक्षिततः संविदा को अनुसमर्पित कर दिया है ; अथवा

(ख) जहां कि परिस्थितियों में ऐसी तब्दीली के कारण, जो संविदा के किए जाने के पश्चात् (स्वयं प्रतिवादी के किसी कार्य के कारण नहीं) हो गई हो, पक्षकारों को उसी स्थिति में सारतः प्रत्यावर्तित न किया जा सके जिसमें वे सब थे जब संविदा की गई

थी ; अथवा

(ग) जहां कि संविदा के अस्तित्व के दौरान पर व्यक्तियों ने सद्भावपूर्वक सूचना के बिना और मूल्यार्थ अधिकार अर्जित कर लिए हों ; अथवा

(घ) जहां कि संविदा के केवल एक भाग का ही विखंडन ईप्सित हो और ऐसा भाग संविदा के शेष भाग से पृथक् न किया जा सकता हो ।

स्पष्टीकरण – इस धारा में "संविदा" से उन राज्यक्षेत्रों के सम्बन्ध में, जिन पर सम्पत्ति अन्तरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) का विस्तार नहीं है, लिखित "संविदा" अभिप्रेत है ।

28. **स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे पर दिए जाने के लिए ऐसी संविदाओं का, जिनके विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री की जा चुकी हो, कतिपय परिस्थितियों में विखंडन** – (1) जहां कि किसी वाद में स्थावर सम्पत्ति के विक्रय या पट्टे पर दिए जाने की संविदा के विनिर्दिष्ट पालन की डिक्री की जा चुकी हो और क्रेता या पट्टेदार डिक्री द्वारा अनुज्ञात कालावधि के भीतर या ऐसी अतिरिक्त कालावधि के भीतर, जो न्यायालय अनुज्ञात करे, विक्रय धन या अन्य राशि, जिसे देने के लिए न्यायालय ने उसे आदेश दिया हो, न दे, वहां विक्रेता या पट्टाकर्ता उसी वाद में जिसमें डिक्री की गई है, संविदा के विखंडित किए जाने का आवेदन कर सकेगा और ऐसे आवेदन पर न्यायालय आदेश द्वारा संविदा को, या तो वहां तक जहां तक कि व्यतिक्रम करने वाले पक्षकार का सम्बन्ध है, या सम्पूर्णतः, जैसा भी मामले में न्याय द्वारा अपेक्षित हो, विखंडित कर सकेगा ।

(2) जहां कि उपधारा (1) के अधीन संविदा विखंडित कर दी गई हो, वहा न्यायालय –

(क) यदि क्रेता या पट्टेदार ने संविदा के अधीन सम्पत्ति का कब्जा अभिप्राप्त कर लिया हो, तो न्यायालय उसे निदेश देगा कि वह विक्रेता या पट्टाकर्ता को कब्जा प्रत्यावर्तित कर दे ; तथा

(ख) ऐसे सब भाटकों और लाभों का संदाय जो सम्पत्ति के

सम्बन्ध में उस तारीख से जिसको क्रेता या पट्टेदार द्वारा ऐसा कब्जा अभिप्राप्त किया गया था, विक्रेता या पट्टाकर्ता को कब्जे के प्रत्यावर्तन तक प्रोद्भूत हुए हों, विक्रेता या पट्टाकर्ता को किए जाने के लिए और यदि मामले में न्याय द्वारा ऐसा अपेक्षित हो, तो संविदा के सम्बन्ध में अग्रिम धन या निक्षेप के तौर पर क्रेता या पट्टेदार द्वारा दी गई किसी राशि के प्रतिदाय के लिए निदेश दे सकेगा ।

(3) यदि क्रेता या पट्टेदार ऐसा क्रय धन या अन्य राशि, जिसको उसे डिक्री द्वारा उपधारा (1) में निर्दिष्ट कालावधि के भीतर देने का आदेश दिया गया हो, दे दें तो न्यायालय उसी वाद में किए गए आवेदन पर क्रेता या पट्टेदार को ऐसा अतिरिक्त अनुतोष दिला सकेगा जिसका वह हकदार हो और जिसके अन्तर्गत समुचित मामलों में निम्नलिखित में से सब या कोई अनुतोष भी आता है, अर्थात् :–

(क) विक्रेता या पट्टाकर्ता द्वारा उचित हस्तान्तर पत्र या पट्टे का निष्पादन ;

(ख) ऐसे हस्तान्तर पत्र या पट्टे के निष्पादन पर सम्पत्ति के कब्जे का या विभाजन और पृथक् कब्जे का परिदान ।

(4) ऐसे किसी अनुतोष के बारे में, जिसका इस धारा के अधीन दावा किया जा सके, कोई पृथक् वाद जो, यथास्थिति, विक्रेता, क्रेता या पट्टाकर्ता या पट्टेदार की प्रेरणा पर लाया गया हो, ग्राह्य नहीं होगा ।

(5) इस धारा के अधीन की किसी भी कार्यवाही के खर्च न्यायालय के विवेकाधिकार में होंगे ।

29. **विनिर्दिष्ट पालन के वाद में विखंडन की अनुकल्पिक प्रार्थना –** किसी लिखित संविदा के विनिर्दिष्ट पालन का वाद संस्थित करने वाला वादी अनुकल्पतः यह प्रार्थना कर सकेगा कि यदि संविदा विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित नहीं की जा सकती, तो वह विखंडित कर दी जाए और रद्द किए जाने के लिए न्यायालय को परिदत्त कर दी जाए और न्यायालय यदि संविदा को विनिर्दिष्टतः प्रवर्तित कराने से इनकार कर दे तो वह तद्नुसार उसके विखंडित और न्यायालय को परिदत्त किए जाने को निर्दिष्ट कर सकेगा ।

30. **विखंडित कराने वाले पक्षकारों से न्यायालय साम्या बरतने की अपेक्षा कर सकेगा** – किसी संविदा का विखंडन न्यायनिर्णीत करने पर न्यायालय, उस पक्षकार से, जिसे ऐसा अनुतोष अनुदत्त किया गया है, अपेक्षा कर सकेगा कि वह दूसरे पक्षकार को ऐसा कोई फायदा, जो उसने उस पक्षकार से प्राप्त किया हो, यावत्शक्य प्रत्यावर्तित करे और उसे ऐसा प्रतिकर दे, जो न्याय द्वारा अपेक्षित हो ।

अध्याय 5

लिखतों का रद्दकरण

31. **कब रद्दकरण का आदेश दिया जा सकेगा** – (1) कोई व्यक्ति, जिसके विरुद्ध कोई लिखत शून्य या शून्यकरणीय हो और जिसको यह युक्तियुक्त आशंका हो कि ऐसी लिखत यदि विद्यमान छोड़ दी गई, तो वह उसे गंभीर क्षति कर सकती है, उसको शून्य या शून्यकरणीय न्यायनिर्णीत कराने के लिए वाद ला सकेगा, और न्यायालय स्वविवेक में, उसे ऐसा न्यायनिर्णीत कर सकेगा और उस न्यायालय को परिदत्त और रद्द किए जाने के लिए आदेश दे सकेगा ।

(2) यदि लिखत भारतीय रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1908 (1908 का 16) के अधीन रजिस्ट्रीकृत हो तो न्यायालय अपनी डिक्री की एक प्रतिलिपि ऐसे आफिसर को भेजेगा जिसके कार्यालय में लिखत का इस प्रकार रजिस्ट्रीकरण हुआ है, और ऐसा आफिसर अपनी पुस्तकों में अन्तर्विष्ट लिखत की प्रति पर उसके रद्दकरण का तथ्य टिप्पणित कर लेगा ।

32. **कौन-सी लिखतें भागतः रद्द की जा सकेंगी** – जहां कि कोई लिखत विभिन्न अधिकारों या विभिन्न बाध्यताओं का साक्ष्य हो, वहां न्यायालय, उचित मामले में, उसे भागतः रद्द कर सकेगा और अवशिष्ट को बना रहने दे सकेगा ।

33. **फायदा प्रत्यावर्तित करने या प्रतिकर दिलाने की अपेक्षा करने की शक्ति जब लिखत रद्द की जाए या उसका शून्य या शून्यकरणीय होने के आधार पर सफलतापूर्वक प्रतिरोध किया जाए** – (1) किसी लिखत का रद्दकरण न्यायनिर्णीत करने पर, न्यायालय उस पक्षकार से, जिसे ऐसा अनुतोष अनुदत्त किया गया है, अपेक्षा कर सकेगा कि वह

दूसरे पक्षकार को ऐसा कोई फायदा जो उसने उस पक्षकार से प्राप्त किया हो यावत्शक्य प्रत्यावर्तित करे और उसे ऐसा प्रतिकर दे, जो न्याय द्वारा अपेक्षित हो ।

(2) जहां कि प्रतिवादी किसी वाद का सफलतापूर्वक इस आधार पर प्रतिरोध करे –

(क) कि वह लिखत, जिसे वाद में उसके विरुद्ध प्रवर्तित कराना ईप्सित है, शून्यकरणीय है, वहां यदि प्रतिवादी ने दूसरे पक्षकार से लिखत के अधीन कोई फायदा प्राप्त किया हो जो न्यायालय ऐसा फायदा उस पक्षकार की यावत्शक्य प्रत्यावर्तित करने या उसके लिए प्रतिकर देने की उससे अपेक्षा कर सकेगा ;

(ख) कि वह करार, जिस वाद में उसके विरुद्ध प्रवर्तित कराना ईप्सित है, भारतीय संविदा अधिनियम, 1872 (1872 का 9) की धारा 11 के अधीन संविदा करने में, उसके सक्षम न होने के कारण शून्य है, वहां यदि प्रतिवादी ने दूसरे पक्षकार से करार के अधीन कोई फायदा प्राप्त किया हो तो न्यायालय ऐसा फायदा उस पक्षकार को यावत्शक्य, उस विस्तार तक प्रत्यावर्तित करने की उससे अपेक्षा कर सकेगा जहां तक कि उसे या उसकी संपदा का तद्वारा फायदा पहुंचा हो ।

अध्याय 6
घोषणात्मक डिक्रियां

34. **प्रास्थिति की या अधिकार की घोषणा के बारे में न्यायालय का विवेकाधिकार** – कोई व्यक्ति, जो किसी विधिक हैसियत का या किसी सम्पत्ति के बारे में किसी अधिकार का हकदार हो, ऐसे किसी व्यक्ति के विरुद्ध, जो ऐसी हैसियत का या ऐसे अधिकार के हक का प्रत्याख्यान करता हो या प्रत्याख्यान करने में हितबद्ध हो, वाद संस्थित कर सकेगा और न्यायालय स्वविवेक में उस वाद में यह घोषणा कर सकेगा कि वह ऐसा हकदार है और वादी के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह उस वाद में किसी अतिरिक्त अनुतोष की मांग करे :

परन्तु कोई भी न्यायालय वहां ऐसी घोषणा नहीं करेगा जहां कि

वादी हक की घोषणा मात्र के अतिरिक्त कोई अनुतोष मांगने के योग्य होते हुए भी वैसा करने में लोप करे ।

स्पष्टीकरण – सम्पत्ति का न्यासी ऐसे हक का प्रत्याख्यान करने में "हितबद्ध व्यक्ति" है जो ऐसे व्यक्ति के हक के प्रतिकूल हो जो अस्तित्व में नहीं है, और जिसके लिए वह न्यासी होता यदि वह व्यक्ति अस्तित्व में आता ।

35. **घोषणा का प्रभाव** – इस अध्याय के अधीन की गई घोषणा केवल वाद के पक्षकार और उनसे व्युत्पन्न अधिकार के द्वारा दावा करने वाले व्यक्तियों को ही आबद्ध करती है और जहां कि पक्षकारों में से कोई पक्षकार न्यासी हो वहां उन व्यक्तियों को ही आबद्ध करती है जिनके लिए ऐसे पक्षकार न्यासी होते यदि घोषणा की तारीख को उनका अस्तित्व होता ।

भाग 3
निवारक अनुतोष

अध्याय 7
व्यादेश साधारणतः

36. **निवारक अनुतोष कैसे अनुदत्त किया जाता है** – निवारक अनुतोष न्यायालय के विवेकानुसार अस्थायी या शाश्वत व्यादेश द्वारा अनुदत्त किया जाता है ।

37. **अस्थायी और शाश्वत व्यादेश** – (1) अस्थायी व्यादेश ऐसे होते हैं जिन्हें विनिर्दिष्ट समय तक या न्यायालय के अतिरिक्त आदेश तक बने रहना है तथा वे वाद के किसी भी प्रक्रम में अनुदत्त किए जा सकेंगे और सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) द्वारा विनियमित होते हैं ।

(2) शाश्वत व्यादेश वाद की सुनवाई पर और उसके गुणागुण के आधार पर की गई डिक्री द्वारा ही अनुदत्त किया जा सकता है ; तद्द्वारा प्रतिवादी किसी अधिकार का ऐसा प्रत्याख्यान या कोई ऐसा कार्य जो वादी के अधिकारों के प्रतिकूल हो, न करने के लिए शाश्वत काल के लिए व्यादिष्ट कर दिया जाता है ।

अध्याय 8
शाश्वत व्यादेश

38. **शाश्वत व्यादेश कब अनुदत्त किया जाता है** – (1) इस अध्याय में अन्तर्विष्ट या निर्दिष्ट अन्य उपबन्धों के अध्यधीन यह है कि शाश्वत व्यादेश वादी को उसके पक्ष में विद्‌यमान बाध्यता के, चाहे वह अभिव्यक्त हो या विवक्षित, भंग का निवारण करने के लिए अनुदत्त किया जा सकेगा ।

(2) जबकि ऐसी कोई बाध्यता संविदा के उद्भूत होती हो तब न्यायालय अध्याय 2 में अन्तर्विष्ट नियमों और उपबन्धों द्‌वारा मार्गदर्शित होगा ।

(3) जबकि प्रतिवादी के सम्पत्ति के अधिकार या उपभोग पर आक्रमण करे या आक्रमण की धमकी दे तब न्यायालय निम्नलिखित दशाओं में शाश्वत व्यादेश दे सकेगा, अर्थात् –

(क) जहां कि प्रतिवादी वादी के लिए उस सम्पत्ति का न्यासी हो ;

(ख) जहां कि उस वास्तविक नुकसान का, जो उस आक्रमण द्‌वारा कारित है या जिसका उस आक्रमण द्‌वारा कारित होना संभाव्य है, अभिनिश्चय करने के लिए कोई मानक विद्‌यमान न हों ;

(ग) जहां कि वह आक्रमण ऐसा हो कि धन के रूप में प्रतिकर यथायोग्य अनुतोष न देगा ;

(घ) जहां कि व्यादेश न्यायिक कार्यवाहियों के बाहुल्य निवारित करने के लिए आवश्यक हो ।

39. **आज्ञापक व्यादेश** – जबकि किसी बाध्यता के भंग का निवारण करने के लिए कतिपय ऐसे कार्यों का जिनका प्रवर्तन कराने को न्यायालय समर्थ है पालन विवश करना आवश्यक हो, तब न्यायालय, परिवादित भंग को निवारित करने ओर अपेक्षित कार्यों का पालन विवश करने के लिए भी, स्वविवेक में, व्यादेश अनुदत्त कर सकेगा ।

40. **व्यादेश के स्थान पर या उसके अतिरिक्त नुकसानी** – (1) धारा 38 के अधीन शाश्वत व्यादेश के या धारा 39 के अधीन आज्ञापक

व्यादेश के वाद में वादी ऐसे व्यादेश के अतिरिक्त या स्थान पर, नुकसानी का दावा कर सकेगा और न्यायालय यदि ठीक समझे तो ऐसी नुकसानी दिला सकेगा ।

(2) इस धारा के अधीन नुकसानी का कोई अनुतोष तब तक नहीं दिया जाएगा जब तक कि वादी ने अपने वादपत्र में ऐसे अनुतोष का दावा न किया हो :

परन्तु जहां कि वादपत्र में ऐसी किसी भी नुकसानी का दावा न किया गया हो वहां न्यायालय कार्यवाही के किसी भी प्रक्रम में इसलिए कि वादी ऐसे दावे को वादपत्र में अन्तर्गत कर सके वादपत्र का संशोधन करने के लिए ऐसे निबन्धनों पर अनुज्ञा देगा जैसे न्यायसंगत हों ।

(3) वादी के पक्ष में विद्यमान बाध्यता के भंग को निवारित करने के बाद की खारिजी ऐसे भंग के लिए नुकसानी का वाद लाने के उसके अधिकार को वर्जित करेगी ।

41. **व्यादेश कब नामंजूर किया जाता है** – व्यादेश अनुदत्त नहीं किया जा सकता :–

(क) किसी व्यक्ति को किसी ऐसी न्यायिक कार्यवाही के अभियोजन से अवरुद्ध करने को जो ऐसे वाद के जिसमें व्यादेश ईप्सित है, संस्थित किए जाने के समय लंबित हो, जब तक कि ऐसा अवरोध कार्यवाहियों के बाहुल्य को निवारित करने के लिए आवश्यक न हो ;

(ख) किसी व्यक्ति को ऐसे न्यायालय में, जो उस न्यायालय के अधीनस्थ नहीं है जिससे व्यादेश ईप्सित है, किसी कार्यवाही को संस्थित या अभियोजित करने से अवरुद्ध करने को ;

(ग) किसी व्यक्ति को किसी विधायी निकाय के समक्ष आवेदन करने से अवरुद्ध करने को ;

(घ) किसी व्यक्ति को किसी आपराधिक मामले में कोई कार्यवाही संस्थित या अभियोजित करने से अवरुद्ध करने को ;

(ङ) ऐसी संविदा का भंग निवारित करने को जिसका विनिर्दिष्टतः पालन प्रवर्तनीय नहीं है ;

(च) किसी ऐसे कार्य को न्यूसेंस के आधार पर निवारित करने को, जिसके संबंध में यह युक्तियुक्त तौर पर स्पष्ट न हो कि वह न्यूसेंस हो जाएगा ;

(छ) किसी ऐसे चालू रहने वाले भंग को निवारित करने को, जिसमें वादी उपमत हो गया हो ;

(ज) जब कि समानतः प्रभावकारी अनुतोष, कार्यवाही के किसी अन्य प्रायिक ढंग द्वारा निश्चयपूर्वक अभिप्राप्त किया जा सकता हो सिवाय न्यासभंग की दशा के ;

(झ) जबकि वादी या उसके अभिकर्ताओं का आचरण ऐसा रहा हो जो उसे न्यायालय की मदद पाने के लिए निर्हकित कर दे ;

(ञ) जबकि वादी का उस मामले में कोई वैयक्तिक हित न हो ।

42. **नकारात्मक करार के पालन का व्यादेश** – धारा 41 के खण्ड (ङ) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां कि किसी संविदा में किसी निश्चित कार्य को करने का सकारात्मक करार और उसी के साथ किसी निश्चित कार्य को न करने का अभिव्यक्त या विवक्षित नकारात्मक करार, समाविष्ट हो वहां यह परिस्थिति कि न्यायालय सकारात्मक करार का विनिर्दिष्टतः पालन विवश करने में असमर्थ है न्यायालय को नकारात्मक करार पालन का व्यादेश अनुदत्त करने से प्रवारित नहीं करेगी :

परन्तु यह तब जबकि वादी संविदा के पालन में, जहां तक वह उसके लिए आबद्धकर है असफल रहा हो ।

[1]* * * *

---

[1] 1974 के अधिनियम सं. 56 की धारा 2 तथा अनुसूची 1 द्वारा धारा 43 और धारा 44 का लोप किया गया ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
6.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
7.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–
8.	पर्यावरण विधि - श्री मदन लाल	138	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष **:** 011-23385259, 23387589, फैक्स **:** 011-23387589, ई-मेल **:** am.vsp-molj@gov.in